सर्व शिक्षा अभियान
सब पढ़ें सब बढ़ें

बी०टी०सी० प्रथम सेमेस्टर

सामान्य विषय –edu 02

सामाजिक अध्ययन

राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, इलाहाबाद

बी0टी0सी0 प्रथम सेमेस्टर

मुख्य संरक्षक : **सचिव श्री नीतीश्वर कुमार** बेसिक शिक्षा परिषद, उ0प्र0, लखनऊ

संरक्षक : **राज्य परियोजना निदेशक,** उ0प्र0, सभी के लिए शिक्षा परियोजना परिषद, लखनऊ

निर्देशन : **श्री सर्वेन्द्र विक्रम बहादुर सिंह,** निदेशक, राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, उ0प्र0

समन्वयन : **श्री राम नारायण विश्वकर्मा प्राचार्य,** राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, इलाहाबाद

परामर्श : **श्री अजय कुमार सिंह, संयुक्त निदेशक** (एस0एस0ए0) राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, उ0प्र0, लखनऊ

श्रीमती ललिता प्रदीप, प्राचार्य, डायट, लखनऊ

श्रीमती दीपा तिवारी, वरिष्ठ प्रवक्ता, डायट, लखनऊ

श्री रमेश तिवारी, सहायक उप निदेशक, राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, इलाहाबाद

लेखक : श्रीमती सुषमा यादव, श्रीमती नीलम मिश्रा, श्रीमती मंजुलेश विश्वकर्मा शोध प्राध्यापक, डॉ0 संध्या सिंह, श्री रवीन्द्र प्रताप सिंह, श्रीमती परमजीत गौतम, श्रीमती अस्मत नीलो अन्सारी, श्रीमती रत्ना यादव, श्रीमती रश्मि चौरसिया, डॉ0 श्रीमती चन्दना मुखर्जी, श्रीमती मीरा अस्थाना, श्री संजय यादव, श्री नितिन अरोरा, श्रीमती अर्चना मिश्रा, श्री पंकज त्रिपाठी, डॉ0 (श्रीमती) वन्दना प्रवीन, डॉ0 राम निहोर सिंह, सुश्री सौम्या

कम्प्यूटर कम्पोजिंग : राजेश कुमार यादव

कक्षा शिक्षण : विषयवस्तु–सामाजिक अध्ययन

इतिहास :–

- इतिहास का अर्थ, महत्व एवं जानने के स्रोत
- पृथ्वी पर मानव की उत्पत्ति एवं विकास
- नदी घाटी की सभ्यताएं
- वैदिक कालः पूर्व एवं उत्तर वैदिक काल
- महाजनपद काल
- उपनिषद् काल– जैन एवं बौद्धधर्म

भूगोल :–

- सौरमण्डल
- मानचित्रण
- ग्लोबः अक्षांश व देशान्तर रेखाएं
- पृथ्वी के ताप कटिबन्ध
- पृथ्वी की गतियाँ
- महाद्वीप व महासागर
- एशिया महाद्वीप में भारत
- भारत की जलवायु, वनस्पतियाँ एवं वन्य जीव
- खगोलीय संगठन

नागरिक शास्त्र :–

- ग्रामीण एवं नगरीय शैली
- ग्रामीण जीवन
- नगरीय जीवन
- जनपद स्तरीय प्रशासन
- यातायात एवं सुरक्षा

अर्थशास्त्र :–

- अर्थशास्त्र एक परिचय
- राष्ट्रीय आय

इतिहास का अर्थ, महत्व एवं जानने के स्रोत

- इतिहास का अर्थ
- इतिहास का महत्व एवं जानने के स्रोत
- पुरातात्विक मुद्रा एवं अभिलेख
- साहित्यिक विवरण
- विदेशी यात्रियों का विवरण
- तिथि निर्धारण पद्धतियाँ

इतिहास का शिक्षण शुरू करने से पहले हमें यह जान लेना आवश्यक है कि इतिहास क्या है? समाज की रचना में इतिहास का योगदान कितना महत्वपूर्ण है।

'इतिहास' शब्द का अर्थ 'ऐसा ही हुआ' से माना जाता है। अंग्रेजी भाषा में इसके लिए ***'History'*** ग्रीक शब्द 'हिस्टोरिया' से लिया गया है, जिसका अर्थ है–'वास्तविक अर्थ में क्या घटित हुआ? अर्थात् सार्वजनिक घटनाओं का एक क्रमबद्ध लेखा।

इतिहास का जन्म आदिकालीन माना जाता है। सर्वप्रथम 500 ई0 पूर्व मनुष्य के कार्यों एवं विचारों को क्रमबद्ध रूप प्रदान करने का प्रयास 'हेरोडोट्स' ने किया। इसी कारण हेरोडोट्स को इतिहास का जन्मदाता या पिता कहा जाता है। इतिहास को प्रमुख विद्वानों ने निम्नलिखित रूपों में परिभाषित किया है–

प्रो0 घाटे के अनुसार– ''इतिहास हमारे सम्पूर्ण भूतकाल का वैज्ञानिक अध्ययन तथा लेखा–जोखा है।''

हेनरी जॉनसन के अनुसार– ''भूतकालीन घटनाओं का उल्लेख ही इतिहास है।''

रेपसन के अनुसार–''इतिहास घटनाओं या विचारों की उन्नति का सुसम्बद्ध विवरण है।''

जोन्स महोदय के अनुसार–''इतिहास जीवन के अनुभवों की एक खान है, जो हमें वर्तमान को समझने में बड़ी सहायता प्रदान करती है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर इतिहास का अर्थ अथवा इतिहास क्या है यह स्पष्ट हो जाता है। प्रशिक्षु यह भी जानें कि इतिहास सामाजिक जीवन का एक आवश्यक अंग है और समाज की रचना में इतिहास का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इतिहास का महत्व क्यों है यह जानने के लिए प्रशिक्षु से निम्नलिखि बिन्दुओं पर चर्चा करें–

- जीवन में सहायक
- ज्ञान वृद्धि का साधन
- मानसिक परिपक्वता
- व्यापक दृष्टिकोण का विकास
- व्यावहारिक जीवन में उपयोगी
- देश–प्रेम की भावना को जाग्रत
- वर्तमान को समझने में सहायक
- विश्व–बन्धुत्व की भावना का विकास
- सांस्कृतिक एवं सामाजिक गुणों का विकास

प्रशिक्षु इतिहास– महत्व पर चर्चा उपरान्त उसके महत्व को स्पष्ट करें।

इतिहास का महत्व– इतिहास के महत्व को विभिन्न परिप्रेक्ष्य में निम्नलिखित प्रकार से निरूपित किया जा सकता है–

- ऐतिहासिक तथ्यों को याद करने से छात्र की स्मरण शक्ति का विकास होता है।
- विभिन्न संस्कृतियों तथा सभ्यताओं के अध्ययन से कल्पना–शक्ति का विकास होता है।
- विभिन्न राष्ट्रों, समाजों, संस्कृतियों, परम्पराओं तथा संस्थाओं का ज्ञान प्राप्त होता है।
- इतिहास सामाजिक वातावरण को प्रकाशित करता है, जिससे हम वर्तमान को समझ सकते हैं और भविष्य के बारे में निर्णय कर सकते हैं।
- विभिन्न जातियों और समुदायों के पारस्परिक सहयोग से ही देश की उन्नति हुई है। इतिहास भावात्मक और राष्ट्रीय एकता लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- वर्तमान की प्रमुख समस्या–जीविका निर्वाह में इतिहास महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, इतिहास से हमें इस समस्या का समाधान भी मिलता है।

वास्तव में किसी भी क्षेत्र में व्यक्ति ईमानदारी एवं मेहनत से कार्यकर तभी सफल हो सकता है जब कि उसे अपने देश का इतिहास पता हो। इतिहास राष्ट्र की अतीत की घटनाओं पर प्रकाश डालता है। बिना अतीत को ठीक प्रकार से समझे हम वर्तमान को नहीं समझ सकते हैं। इतिहास के द्वारा धैर्य, सहानुभूति तथा कर्तव्य परायणता की भावनाओं का विकास किया जा सकता है। विभिन्न घटनाओं का अध्ययन कर हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि अन्त में सदैव सत्य की जीत होती है। ऐसे निष्कर्षों से हम नैतिकता का विकास करते हैं। वर्तमान सामाजिक संस्थाएँ किस प्रकार विकसित हुई, इसका उत्तर इतिहास ही देता है। किसी भी देश अथवा क्षेत्र का इतिहास पढ़कर प्रशिक्षु वहाँ के राजनीति, सांस्कृतिक तथा आर्थिक विकास की जानकारी प्राप्त कर अपने सामान्य ज्ञान का विकास कर सकते हैं। इतिहास उनकी विभिन्न जिज्ञासाओं की पूर्ति में सहायक होता है। इतिहास की गौरवपूर्ण घटनाएं और देश के प्रति सम्मान की भावना, पूर्वजों द्वारा मातृ–भूमि की सेवा जैसे दृष्टांतों से वैसे ही कार्य करने की प्रेरणा प्रदान करने में भी इतिहास महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

इतिहास जानने के स्रोत (साधन)– प्राचीन भारत के इतिहास का ज्ञान प्राप्त करने का कोई प्रामाणिक साधन नहीं है। इसी से एलफिन्स्टन ने लिखा है– ''भारतीय इतिहास को सिकन्दर के आक्रमण के पूर्व की किसी महत्वपूर्ण घटना की तिथि निश्चित नहीं की जा सकती।''

इसके सात वर्ष बाद कावेल ने लिखा– ''हिन्दुकाल में हम उस समय तक के इतिहास की घटनाओं का विस्तारपूर्वक तथा निश्चित रूप से वर्णन नहीं कर सकते जब तक भारत अन्य राष्ट्रों के सम्पर्क में नहीं आ गया।''

प्राचीन काल में हिन्दुओं की ऐतिहासिक घटनाक्रम के सम्बन्ध में उदासीनता के प्रति 'फ्लीट' महोदय ने लिखा–''यह प्रश्न किया जा सकता है कि क्या प्राचीन काल में हिन्दुओं की प्रवृत्ति इतिहास की ओर थी ? क्या उनमें यह गुण था कि वे सच्चे इतिहास को तर्कपूर्ण तथा विस्तृत रूप से लिख सकें। वे संक्षिप्त, सारगर्भित परन्तु सीमित ऐतिहासिक रचनाएं कर सकते थे परन्तु कोई प्रामाणिक, यथार्थ तथा विश्वस्त ऐतिहासिक ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है, जिससे यह प्रमाणित हो कि उनमें इतिहास लिखने की मानसिक शक्ति थी।''

ग्यारहवीं शताब्दी में अल्बरूनी नामक प्रसिद्ध मुसलमान विद्वान् भारतवर्ष आया था। उसने इस सम्बन्ध में लिखा है– "हिन्दू लोग इतिहास की ओर विशेष ध्यान नहीं देते थे। वे कालक्रमानुसार वंश परिचय देने में बड़ी असावधानी रखते हैं, जब सूचना देने के लिए विवश किया जाता है तब वे लोग किंकर्तव्यविमूढ़ होकर कथाएं कहना आरम्भ करते हैं।"

इन कठिनाइयों के होते हुए भी विद्वानों ने बड़े परिश्रम के साथ अन्वेषण कर प्राचीन भारत के इतिहास को खोज निकाला। विद्वानों ने जिन साधनों से भारतीय इतिहास का अन्वेषण किया है, वे निम्नवत् हैं–

1. अनैतिहासिक ग्रन्थ
2. ऐतिहासिक ग्रन्थ
3. पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री
4. विदेशी यात्रियों एवं लेखकों के विवरण

1. अनैतिहासिक ग्रन्थ– अनैतिहासिक ग्रन्थों के अन्तर्गत भारत के अनेक प्राचीन धार्मिक ग्रन्थ आते हैं। इन धार्मिक ग्रन्थों में महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख मिलता है। ये ग्रन्थ निम्नलिखित इस प्रकार हैं–

(A) वैदिक साहित्य
(B) बौद्ध साहित्य
(C) जैन साहित्य

इन्हें भी जानें– आरण्यक–वनों में रहने वाले मुनियों द्वारा रचित ग्रन्थ है वेदों की दार्शनिक बातों से सम्बन्धित इनमें यज्ञ व स्तुति की अपेक्षा ज्ञान, चिन्तन एवं तप को अधिक महत्व दिया गया है।

वर्गीकरण किसी विषयवस्तु को जानने का बेहतर तरीका है। अतः प्रशिक्षु इतिहास में निम्नवत् वर्गीकरण क्रियाविधि द्वारा शिक्षण में रोचकता ला सकते हैं–

(A) वैदिक साहित्य	**(B)** बौद्ध साहित्य	**(C)** जैन साहित्य
1. वेद–	1. जातक	1. परिशिष्ट पर्व
• ऋग्वेद	2. पिटक	2. भद्रबाहु चरित
• यजुर्वेद	3. मिलिन्दपन्हो	3. आचारांग सूत्र
• सामवेद	4. दीपवंश	4. कालिका पुराण
• अथर्ववेद	5. महावंश	5. भगवती सूत्र
2. ब्राहमण	6. महावस्तु	6. कथा कोष
3. आरण्यक	7. ललित विस्तर	7. त्रिलोक प्रज्ञटित
4. उपनिषद	8. बुद्ध–चरित्र	8. लोक विभाग
5. वेदांग	9. सौंदरानन्द	9. पुण्याश्रव कथाकोश
6. पुराण	10. दिव्यावदान	10. आराधना कथाकोश
7. स्मृतियाँ	11. मंजु श्री मूलकल्प	11. आवश्यक सूत्र
	12. लंकावतार	12. स्थविरावली

उपर्युक्त दिए गए वैदिक, बौद्ध एवं जैन साहित्यों के बारे में प्रशिक्षु चर्चा करें। चर्चा उपरान्त स्वयं स्पष्ट भी करें, यथा–

(i) वेद– हिन्दुओं के प्राचीनतम ग्रन्थ वेद हैं। इनकी संख्या चार है। इनमें से ऋग्वेद सबसे अधिक प्राचीन है। वेदों से हमें ऐतिहासिक बातें ज्ञात होती हैं। यथा–

- आर्य लोग भारत के भिन्न–भिन्न भागों में किस प्रकार फैले, उनमें कौन–कौन से आन्तरिक विभाजन थे, उन्हें दस्युओं से किस प्रकार युद्ध करना पड़ा ?
- वैदिक काल में भारत की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक दशा कैसी थी।

(ii) ब्राहमण एवं उपनिषद– ब्राहमण एवं उपनिषद ग्रन्थों से हमें परीक्षित के बाद और बिम्बसार के पहले के इतिहास का ज्ञान प्राप्त होता है। जिन ब्राहमण ग्रन्थों में ऐतिहासिक तथ्य प्राप्त हैं, वे ऐतरेय, शतपथ, तैतरीय तथा पंचविश हैं। उपनिषद ग्रन्थों में परीक्षित, उसके पुत्र जन्मेजय, उसके उत्तराधिकारी तथा राजा जनक की ओर संकेत है। उपनिषद 108 हैं। यह वैदिक चिन्तन की चरम परिणित हैं।

(iii) सूत्र साहित्य–उपनिषदों के उपरान्त सूत्र साहित्य का प्रारम्भ होता है। सूत्र साहित्य तीन भागों में विभक्त हैं, यथा–

(क) कल्प सूत्र – कल्प सूत्र में वैदिक यज्ञों का वर्णन है।
(ख) गृह सूत्र – गृह सूत्र में गृहस्थ से सम्बन्ध रखने वाले संस्कारों तथा कर्मकाण्डों का वर्णन है।
(ग) धर्म सूत्र – धर्म सूत्र में सामाजिक, राजनीतिक एवं वैधानिक व्यवस्था दी गई है।

(iv) धर्मशास्त्र तथा भाष्य एवं टीकाएं– भारतीय धर्मशास्त्र से सम्बन्धित ग्रन्थ तथा उन पर लिखे गये भाष्य एवं टीकाएं में कानून तथा सामाजिक एवं धार्मिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली प्रचुर ऐतिहासिक सामग्री भरी पड़ी है।

(v) बौद्ध साहित्य– बौद्ध ग्रन्थ त्रिपिटक में भगवान बुद्ध के वचनों तथा सिद्धान्तों का संग्रह हैं। मिलिन्द प्रश्न में यूनानी राजा मिलिन्द तथा बौद्ध सन्त नागसेन का वार्तालाप है। बौद्धग्रन्थ पिटक, जातक निकाय में प्राचीनतम ग्रन्थ जातक कथाएं हैं।

(vi) जैन साहित्य– जैन साहित्य का सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रन्थ 'परिशिष्ट पर्वन' है जिसकी रचना आचार्य हेमचन्द्र ने की थी। इस ग्रन्थ में जैन–साहित्य की सभी बिखरी हुई ऐतिहासिक सामग्री एकत्रित कर दी गई। दूसरा महत्वपूर्ण ग्रन्थ भद्रबाहु चरित्र है। इसमें चद्रगुप्त मौर्य के जीवन की घटनाओं का उल्लेख है। इसके अतिरिक्त कथाकोष, भगवती सूत्र, लोकविभाग, कालिका पुराण, प्रबन्ध चतुर्विंशति आदि अन्य ग्रन्थ हैं जिनसे ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त होती है।

2. ऐतिहासिक ग्रन्थ– प्रशिक्षु अब ऐसे ग्रन्थों पर विचार करेगें जिनसे हमें ऐतिहासिक घटनाओं का पता चलता है, यथा –

(i) महाकाव्य– 'रामायण' और 'महाभारत' ऐसे दो महाकाव्य हैं, जो तत्कालीन सामाजिक एवं धार्मिक दशा पर काफी प्रकाश डालते हैं। रामायण में हमें हिन्दुओं एवं यवनों और शकों के संघर्ष का पता चलता है। महाभारत से हमें ब्राहमण धर्म की स्थिति ज्ञात होती है। इसके साथ ही सिथियन, यूनानी एवं बैक्ट्रियन जातियों का भी पता चलता है।

(ii) पुराण– 'भारतीय ऐतिहासिक कथाओं का सबसे अच्छा क्रमबद्ध विवरण पुराणों में मिलता है। पुराणों की संख्या 18 (अठारह) है। परन्तु इनमें से केवल पाँच पुराण–मत्स्य, वायु, विष्णु, ब्रहमाण्ड एवं भागवत, ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्व रखते हैं। शेष में अधिकतर देवी–देवताओं की कथाएं हैं, जो काल–क्रम के दृष्टिकोण से नितान्त भ्रम सूचक हैं।

(iii) अर्थशास्त्र– कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' तथा पंतजलि के 'महाभाष्य' ग्रन्थों का विशेष महत्व हैं, क्योंकि ये भारत के काल–क्रम के उद्वेलित सागर में लंगर का काम देते हैं। इनसे प्राप्त सूचनाएं अधिक विश्वसनीय हैं।

(iv) हर्षचरित्र– बाण ने 'हर्ष–चरित्र' की रचना लगभग 620 ई0 में की थी। इसमें तत्कालीन इतिहास एवं प्राचीन कथाओं का संग्रह है। इसमें बाण ने न केवल अपने आश्रयदाता कन्नौज के राजा हर्ष का चरित्र–चित्रण किया है वरन् सातवीं शताब्दी के भारत के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक दशा पर भी प्रकाश डाला है।

(v) विक्रमांकदेव चरित्र– बिल्हण का 'विक्रमांकदेव चरित्र' एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। यह बारहवीं शताब्दी के कवि थे। उन्होंने विक्रमांक' सम्राट की प्रशंसा में यह ग्रन्थ लिखा था। 'विक्रमांक' ने 1076 ई0 एवं 1126 ई0 के मध्य दक्षिण एवं पश्चिम के एक बड़े राज्य पर शासन किया था।

(vi) राजतरंगिणी– कल्हण की 'राजतरंगिणी' प्रथम ऐसा ग्रन्थ है जिसे पूर्ण रूप से ऐतिहासिक कहा जा सकता है। इसकी रचना 1148 ई0 में शुरू की गई थी। इसमें कल्हण ने काश्मीर के राजवंश का वर्णन किया है।

(vii) तमिल ग्रन्थ– तमिल ग्रन्थों में दक्षिण के सम्राटों की प्रशंसा की गई है। इनके सम्बन्ध में स्मिथ महोदय ने लिखा है–"अत्यन्त विशाल साहित्य और विशेषकर दक्षिण भारत के साहित्य के अन्वेषण का कार्य इतना महान है कि यह कभी पूर्ण नहीं किया जा सकता।" इस कथन से इनके महत्व का पता चलता है।

(viii) दीपवंश एवं महावंश– बौद्ध साहित्य में सर्वाधिक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रन्थ 'दीपवंश' तथा 'महावंश' है। इन दोनों में सिंहलद्वीप के प्राचीन क्रमबद्ध इतिहास है। इसके साथ ही मौर्य सम्राट अशोक तथा उसके वंश के सम्बन्ध में इन ग्रन्थों से पर्याप्त ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

3. विदेशी विवरण– प्रशिक्षु को यह भी जानना आवश्यक है कि अत्यन्त प्राचीन काल से ही भारत का विदेशों के साथ अत्यन्त घनिष्ट व्यापारिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्ध रहा है। विदेशी लेखकों और यात्रियों ने भी भारत के विषय में बहुत कुछ लिखा है। इन विदेशी लेखकों में यूनानी, रोम, चीन, तिब्बत तथा फारस देश के निवासी थे, यथा–

(i) यूनानी लेखक– यूनानी लेखकों में सर्वप्रथम 'हेरोडोटस' तथा 'टेशियस' हैं। 'हेरोडोटस' ने पाँचवी शताब्दी ई0 पूर्व भारत तथा भारत राज्य के सम्बन्ध में लिखा था। 'टेशियस' एक डॉक्टर था तथा उसे यात्रियों द्वारा प्राप्त आश्चर्यजनक कहानियों के संग्रह करने का बड़ा चाव था। इसी क्रम में यूनानी लेखक 'मेगस्थनीज' सिल्यूकस का राजदूत था वह चद्रगुप्त मौर्य के दरबार में आया था। मेगस्थनीज ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'इण्डिका' में भारतीय संस्थाओं, भूगोल तथा उत्पत्ति के सम्बन्ध में लिखा है।

(ii) चीनी लेखक– चीन का भारत के साथ प्राचीन काल से व्यापारिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्ध रहा है। चीनी यात्री फाह्यान 399 ई0 में भारत आया और उसने लगभग 15 वर्ष तक भ्रमण करने के पश्चात् अपने देश लौटकर अपनी यात्रा का वर्णन किया। इसी प्रकार चीनी यात्री ह्वेनसांग का भी बहुत ऊँचा स्थान है, यह हर्ष वर्द्धन के शासनकाल में भारत आया था। उसने अपनी यात्राओं का वर्णन 'पाश्चात्य संचार के लेख' में किया है। यह ग्रन्थ अत्यंत महत्वपूर्ण है इसमें न केवल तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक दशा का वर्णन है वरन् प्राचीन कथाओं का भी वर्णन है। इसी प्रकार चीनी यात्री इत्सिंग सातवीं शताब्दी के अन्त में भारत आया था, उसने 'नालन्दा' तथा 'विक्रमाशिला' में निवास कर वहाँ के बारे में लिखा था।

(iii) तिब्बत के लेखक– तिब्बत के लामा तारानाथ के ग्रन्थ मौर्य काल के उपरान्त के इतिहास को जानने में बड़े सहायक सिद्ध होते हैं। इनके बिना शक, पार्थियन एवं कुषाण लोगों के भ्रमण का पता नहीं चलता, तथा बौद्ध धर्म के इतिहास की पूर्ति इनके बिना नहीं हो सकती थी।

(iv) मुसलमान लेखक– इन लेखकों में 'अल्बरूनी' का महत्वपूर्ण स्थान है। यह महमूद गजनवी के आक्रमण के समय भारत आया था। उसने 'तहकीकाते हिन्द' में भारतवर्ष और यहाँ के लोगों की स्थिति का वर्णन किया है। यह पुस्तक 1033 ई0 में लिखी गई थी। इसमें हिन्दुओं के रीति–रिवाज, विवाह तथा साहित्य का अच्छा वर्णन है। इसके अतिरिक्त अन्य मुसलमान लेखक हैं–सुलेमान, अलमसूदी, हसन निजाम, फिरिश्ता, निजामुद्दीन आदि। इनकी रचनाएं भी भारतीय समाज पर प्रकाश डालती हैं।

(v) मार्को पोलो– वेनिस का प्रसिद्ध यात्री मार्को पोलो 1294–95 ई0 के लगभग दक्षिण भारत आया था। इनके विवरण भारत की न केवल राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक दशा पर प्रकाश डालते हैं वरन् तिथियों की क्रमबद्धता में भी सहायता पहुँचाते हैं।

4. अभिलेख– प्राचीन भारत के इतिहास जानने के लिए 'अभिलेख' सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं विश्वसनीय साधन है। अभिलेखों को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं यथा–देशी एवं विदेशी अभिलेख। देशी अभिलेख को हम पुन दो भागों में विभक्त कर सकते हैं– अशोक के अभिलेख एवं अशोक के बाद के लेख ।

(i) अशोक के अभिलेख– अशोक ने सम्पूर्ण राज्य में शिलाओं तथा स्तम्भों पर लेख लिखवाये थे। ये लेख राजाज्ञाओं तथा घोषणाओं के रूप में पाये जाते हैं। यह लेख अशोक के जीवन एवं व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हैं। तत्कालीन इतिहास जानने में सहायक हैं। यह खरोष्ठी एवं ब्राहमी लिपि में लिखे गए हैं।

इन्हें भी जानें– खरोष्ठी लिपि में दायें से बांये लिखा जाता है तथा ब्राहमी लिपि में बांये से दांये ओर लिखा जाता है।

(ii) अशोक के बाद के अभिलेख– अशोक के बाद के अभिलेखों को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं–सरकारी तथा गैर–सरकारी। सरकारी लेख प्रधानतः प्रशस्तियों अथवा भूमिदानों के रूप में पाये जाते हैं। प्रशस्तियाँ राज कवियों द्वारा सम्राटों की प्रशंसा में लिखी गई हैं। गैर–सरकारी लेखों की संख्या सरकारी लेखों से कहीं अधिक है, इनसे सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक दशा पर प्रकाश पड़ता है।

(iii) विदेशी लेख– विदेशी लेख एशिया–माइनर में बोगजकोई के लेखों में वैदिक देवताओं का उल्लेख है। इस लेख से भारत में प्रवेश करने के पूर्व आर्यों के पर्यटन का पता चलता है। ईरान के परसीपोलिस तथा नखशेरूस्तम के लेखों से प्राचीन काल में ईरान एवं भारत के सम्बन्ध का पता चलता है।

5. मुद्रा– प्राचीन भारत के इतिहास का ज्ञान प्राप्त करने में मुद्राओं से बड़ी सहायता मिलती है। इन मुद्राओं का वर्गीकरण हम निम्नलिखित रीति से कर सकते हैं, यथा–

(i) प्राचीन मुद्राएं– प्राचीन काल की मुद्राओं में प्रायः चित्र अथवा चिह्न होते हैं। इन मुद्राओं का केवल धार्मिक एवं कलात्मक महत्व हो सकता है। इनसे राजनीतिक तथ्यों का बोध नहीं होता है।

(ii) यूनानियों की मुद्राएं– यूनानियों के आक्रमण के बाद जो मुद्राएं निकली, उनसे सम्राटों के नाम ज्ञात होते हैं। कला की दृष्टि से इन मुद्राओं का बहुत महत्व है। लगभग 30 यूनानी सम्राटों एवं साम्राज्ञियों का परिचय इन मुद्राओं से मिलता है। इन्होंने लगभग 200 वर्ष तक शासन किया, इसका ज्ञान भी मुद्राएं देती हैं।

(iii) सिथियन तथा पर्थियन मुद्राएं– यूनानियों की मुद्राओं का अनुकरण सिथियन तथा पर्थियन आक्रमणकारियों ने भी किया। कलात्मक दृष्टि से यह उतनी अच्छी नहीं है परन्तु इनका ऐतिहासिक महत्व कम नहीं है। मौर्य साम्राज्य के बाद जो यूनानी, शक एवं पर्थियन भारत आए उनके इतिहास का ज्ञान हमें केवल मुद्राओं से होता है।

(iv) भारतीय राजाओं की मुद्राएं– भारतीय राजाओं ने भी मुद्राएं चलाई थी जो कि नृपतंत्रात्मक एवं लोकतंत्रात्मक दोनों ही प्रकार के राज्यों के इतिहास जानने में सहायक सिद्ध होती हैं। मालय, यौद्येय, पांचाल के मित्र राजाओं के इतिहास के प्रधान साधन मुद्राएं ही हैं। दक्षिण के सातवाहन राजाओं के इतिहास के संशोधन तथा परिवर्द्धन में मुद्राओं से बड़ी सहायता मिलती है।

6. स्मारक– स्मारक चिह्न को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं, यथा–देशी एवं विदेशी। प्रशिक्षु इनके बारे में भी कुछ जानें –

(i) देशीय स्मारक चिह्न– तक्षशिला में जो खुदाई हुई उसने कुषाणकाल के काल–क्रम के संदेह को अधिकांशतः दूर कर दिया है। हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ों की खुदाई से पता चलता है कि कम से कम पॉंच सहस्र वर्ष पूर्व सिन्धुघाटी की सभ्यता कैसी थी। सारनाथ का स्तम्भ भारतवर्ष की सर्वोच्च नक्काशी है। इसी प्रकार झाँसी जिले के देवगढ़ में पत्थर के मन्दिर, कानपुर जिले के भीतरगांव में ईटों के मंदिर, अजन्ता की गुफाओं की चित्रकारी, नालन्दा में बुद्धजी की ताँबें की मूर्ति का पता चलता है, जिससे हिन्दुकला एवं सभ्यता की उच्चकोटि ज्ञात होती है।

(ii) विदेशी स्मारक चिह्न– जावा और कम्बोज में जो स्मारक चिह्न उपलब्ध हैं उनसे भारत की कला का ही नहीं, वरन् प्राचीन भारत की उपनिवेश स्थापना की अभिरूचि का भी ज्ञान प्राप्त होता है। जावा ने अनेक देवालय तथा प्राचीन स्मारक प्राप्त हुए हैं जिससे हिन्दू–धर्म तथा संस्कृति का पता चलता है। मलाया में एक देवालय तथा कुछ पत्थर की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं जिनसे पता चलता है कि यहाँ के निवासी हिन्दू थे जो शिव, पार्वती, गणेश, नन्दी आदि की पूजा करते थे।

तिथि निर्धारण–

तिथिक्रम के अभाव के कारण भी प्राचीन भारतीय इतिहास के अध्ययन में कठिनाई उत्पन्न होती है। डॉ0 राजबली पाण्डेय के अनुसार–''प्राचीन भारत के लोग तिथिक्रम की अपेक्षा युग परम्परा को और घटनाओं की अपेक्षा विचार–धाराओं को अधिक महत्व देते हैं। ऐतिहासिक व्यक्तियों का स्थान सिद्धान्त ले लेते हैं। इसीलिए केवल युग–प्रवर्तक पुरूषों के ही सम्बन्ध में विशेष रूप से लिखा मिलता है।''

प्रशिक्षु तिथि निर्धारण पद्धतियों की विस्तृत जानकारी हेतु ''भारतीय पुरौतिहासिक पुरातत्व'' लेखक धर्मपाल अग्रवाल एवं पन्नालाल अग्रवाल का अध्ययन कर सकते हैं।

पुनरावृत्ति बिन्दु– प्रशिक्षु पुनरावृत्ति निम्नलिखित बिन्दुओं पर कराएं–

- इतिहास ज्ञान की वह शाखा है, जिसमें मानव के विभिन्न पक्षों या स्तरों एवं भूतकालिक घटनाओं का क्रमबद्ध वर्णन होता है।
- प्राक–इतिहास के विषय में जानकारी देने वाले विषय को 'पुरातत्व' कहते हैं।
- भारतीय इतिहास जानने के स्रोत अथवा साधन हैं–अनैतिहासिक ग्रन्थ, ऐतिहासिक ग्रन्थ, पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री एवं विदेशी लेखकों तथा यात्रियों के विवरण।
- अनैतिहासिक ग्रन्थ हैं–(इनके प्रमुख तीन भाग हैं) वैदिक साहित्य, बौद्ध साहित्य एवं जैन साहित्य।
- ऐतिहासिक ग्रन्थ के अन्तर्गत–महाकाव्य, पुराण, अर्थशास्त्र, हर्षचरित्र, राज–तरंगिणी, विक्रमांकदेव चरित्र, तमिल ग्रन्थ, दीपवंश एवं महावंश।
- विदेशी विवरण हमें –यूनानी, चीनी, तिब्बत, मुसलमान एवं मार्कोपोलो से प्राप्त होते हैं।
- मुद्राएं–प्राचीन, यूनानियों, सिथियन तथा पार्थिन, राजा (भारतीय) का मुद्राएं से भी इतिहास जानने में सहायता मिलती थी।

बोध प्रश्न–

1. इतिहास का अर्थ क्या है ? विद्वानों द्वारा दी गई दो परिभाषाएं लिखिए ?
2. इतिहास का महत्व अपने शब्दों में स्पष्ट करें।
3. इतिहास जानने के स्रोत कौन–कौन से है ? स्पष्ट करिए।
4. वैदिक, बौद्ध एवं जैन साहित्य की तालिका बनाइए।
5. विदेशी विवरण से आप क्या समझते हैं। लिखिए।
6. अभिलेख को हम कितने भागों में विभक्त कर सकते हैं ? स्पष्ट करिए।

पृथ्वी पर मानव की उत्पत्ति एवं विकास

- पाषाण या प्रस्तर काल
- ताम्र एवं कांस्य युग
- लौह युग

पृथ्वी पर जीवन की शुरूआत लगभग 3.5 अरब वर्ष पूर्व मानी जाती है। सर्वप्रथम जीवन का प्रारम्भ जल में एककोशीय प्राणी के रूप में हुआ, जिसमें न तो हड्डी थी और न ही माँस था। इन्हीं प्राणियों का धीरे–धीरे विकास हुआ और मछली, केंकड़े, साँप आदि जानवर पृथ्वी पर उत्पन्न हो गए। इन प्राणियों को जीवित रहने के लिए संघर्ष करना पड़ता था।

प्रशिक्षु चर्चा करें– पृथ्वी की उत्पत्ति एवं विकास कैसे हुआ ?

चर्चा उपरान्त प्रशिक्षु स्पष्ट करें कि पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति के पश्चात् ही मानव का जन्म हुआ। मानव ने पूर्ण विकसित होने में लम्बा समय बिताया। मानव शुरूआत में वानरों के समान रहता था, परन्तु धीरे–धीरे उसने पैरों पर चलना सीखा। मानव के मस्तिष्क के साथ ही मानव ने साथ–साथ रहना तथा प्रकृति द्वारा उपलब्ध विभिन्न खाने की वस्तुओं का प्रयोग करना भी सीखा।

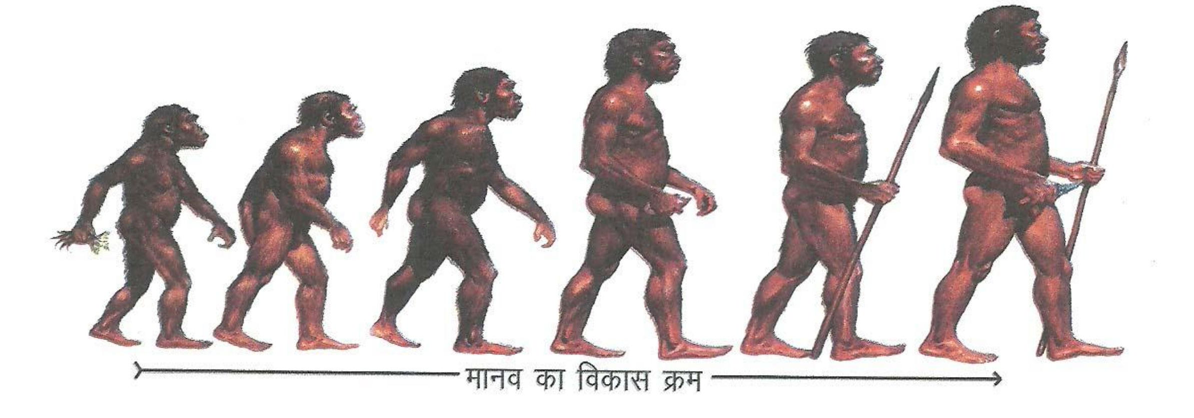

मानव विकास के इसी क्रम में लगभग 40 हजार वर्ष पूर्व वर्तमान मानव का आविर्भाव हुआ, जिसे 'होमो सैपियंस' कहा जाता है। होमो सैपियंस एक लैटिन शब्द है, जिसका अर्थ 'बुद्धिमान मानव' होता है। इसी बुद्धिमान मानव ने आग का प्रयोग करना और घर बनाना भी सीख लिया। इसी प्रकार मानव संस्कृति का विकास होना प्रारम्भ हो गया। विभिन्न स्थानों पर रहने वाले मानवों के समुदायों की संस्कृतियों का सामूहिक विकास होने पर मानव सभ्यता का जन्म हुआ।

प्रशिक्षु चर्चा करें– प्राचीन सभ्यता के इस क्रमिक विकास को किन तीन प्रमुख भागों में विभक्त किया गया है?

चर्चा उपरान्त प्रशिक्षु स्पष्ट करें, यथा– 1. पाषाण काल, 2. ताम्र एवं कांस्य युग, 3. लौह युग

1. पाषाण काल– पाषाण काल का तात्पर्य उस काल से है जब मनुष्य अपने औजार तथा अपनी आवश्यकता की अन्य वस्तुएं पत्थर की ही बनाता था। पुरातत्ववेत्ताओं की धारणा है कि मानव का जन्म पत्थर की ही कठोर भूमि पर हुआ था।

जब मानव ने पहली बार अपनी आँखें इस पृथ्वी पर खोलीं तब अपनी रक्षा के लिए उसे पत्थर ही मिला। उन दिनों मानव बिल्कुल असभ्य था और जंगली जीवन व्यतीत करता था। परन्तु धीरे–धीरे उसने सभ्य जीवन की ओर बढ़ना शुरू किया। इसीलिए व्यापक अर्थ में पाषाण–काल मानव सभ्यता के उस उषा–काल को कहते हैं, जब वह अपनी आवश्यकता की सभी चीजें पत्थर की बनाता था और उसने धातु का प्रयोग करना नहीं सीखा था।

सर्वप्रथम 1863 ई0 के लगभग हुए अनुसंधानों के आधार पर राबर्ट बुस फुट ने पाषाण काल को दो भागों में विभक्त किया था, यथा– पूर्व पाषाण काल एवं नव पाषाण काल। परन्तु इन दो कालों के मध्य सभ्यता के विकास के दृष्टिकोण से पर्याप्त अन्तर था। काफी समय के पश्चात् बर्किट एवं टाड ने उत्खननों के आधार पर दोनों कालों के बीच तारतम्य को जोड़ दिया। इसी बीच की कड़ी को मध्य पाषाण काल के नाम से अभिहीत किया। अतः वर्तमान में पाषाण काल को हम तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं, यथा–

पाषाण काल

- पुरा पाषाण काल (पूर्व पाषाण काल)
- मध्य पाषाण काल
- उत्तर पाषाण काल (नव पाषाण काल)

पूर्व पाषाण काल– मानव सभ्यता के प्रारम्भिक काल को पूर्व पाषाण–काल के नाम से जाना जाता है। इस काल के मानव जीवन की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित इस प्रकार हैं –

(i) औजार– इस काल में मानव का जीवन अत्यन्त कठोर एवं संघर्षपूर्ण था। सर्वप्रथम मानव ने जंगली पशुओं से अपनी रक्षा करने के लिए पत्थरों के हथियार बनाने शुरू किए। इन हथियारों में सर्वप्रथम उसने हथौड़ा बनाया। तत्पश्चात् कुल्हाड़ी, चाकू एवं शल्क आदि तैयार किए गए। उत्खनन से प्राप्त उपकरणों के आधार पर कहा जाता है कि इस समय के औजार भद्दे, बैडोल एवं अव्यवस्थित थे। पत्थर के औजारों में लकड़ी तथा हड्डियों के बेंट लगे रहते थे।

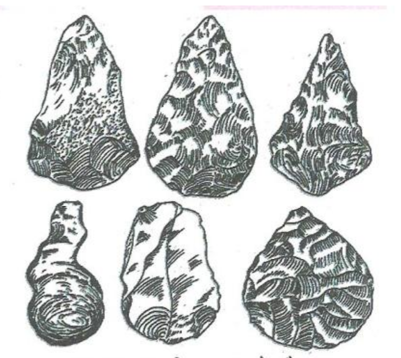

पुरापाषाण कालीन पत्थर के औजार

(ii) निवास स्थान– इस काल का मानव गुफाओं में निवास करता था। ये गुफाएं तालाबों, नदियों एवं जल स्रोतों के निकट प्राप्त हुई हैं। मानव जीवन घुमक्कड़ी था। कभी–कभी वह वृक्षों की डालियों तथा पत्तियों की झोपड़ियों में भी अपना घर बना लिया करते थे।

(iii) जीविका के साधन– इस काल में मानव अपनी जीविका के लिए पूर्णरूप से प्रकृति के ऊपर निर्भर रहते थे। इन्हें खेती का बिल्कुल ज्ञान नहीं था। यह अपनी जीविका चलाने के लिए जंगली पशुओं का शिकार किया करते थे। मछलियाँ पकड़ा करते थे। इसके अतिरिक्त कन्दमूल, फल खाकर भी अपनी भूख शान्त किया करते थे। इन्होंने माँस खाना भी सीख लिया था। इस समय कच्चा माँस खाने के उल्लेख प्राप्त होते हैं।

(iv) वेशभूषा– इस काल में मानव ने ठण्ड से बचने के लिए पेड़ों के पत्तों एवं छाल का प्रयोग प्रारम्भ किया। इसके बाद मानव पशुओं की खाल पहनने लगा। इस काल में मानव ने हड्डियों की सुइयाँ बनाकर खालों को सिलना भी सीख लिया था।

(v) आग की खोज– आग की खोज सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। आग की खोज के पश्चात मानव ने उसका प्रयोग ठण्ड से बचने, रोशनी करने तथा मांस को पकाने के लिए करना प्रारम्भ कर दिया।

(vi) मृतक संस्कार– उत्खनन से प्राप्त सामग्री के आधार पर ज्ञात होता है कि इस काल में मानव अपने मृतकों को दफना देता था। और उसके साथ भोजन एवं अन्य उपयोग की वस्तुएं भी रख देता था। इससे यह अनुमान है कि मानव पुर्नजन्म में भी विश्वास करता था।

(vii) कला– इस काल के अन्तिम चरण में मानव ने जंगली पशुओं के चित्र बनाना भी सीख लिया था। अल्तमीरा (स्पेन) तथा लास्को (पश्चिमी फ्रांस) भारत में भीमवेटका की गुफाओं की दीवारों पर बने चित्र आज भी इस काल के मानव की कला को दर्शाते हैं।

(viii) संगठन– इस काल में मानव टोलियाँ बनाकर रहते थे। प्रत्येक टोली का एक प्रधान होता था। प्रधान के नेतृत्व में यह टोलियाँ भोजन (आहार) की खोज में एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाया करती थीं। ये किसी एक स्थान पर हमेशा नहीं रहते थे वरन् जहाँ कहीं इन्हें शिकार, कन्द मूल, फल आदि पाने की आशा होती थी, ये टोलियों में वहीं चले जाया करते थे।

प्रशिक्षु चर्चा करें–

- मध्य पाषाण काल से आप क्या समझते हैं ?
- इस काल की प्रमुख विशेषताएं क्या थीं ?

चर्चा उपरान्त प्रशिक्षु मध्य पाषाण काल को स्पष्ट करें यथा–

मध्य पाषाण काल– वर्तमान में उत्खनन एवं आधुनिक शोध कार्यों से ऐसी सामग्री एवं अवशेष प्राप्त हुए हैं। जिनके आधार पर पूर्व पाषाणकाल के बाद एक ऐसे युग के तथ्य प्रकाश में आए हैं जिसे मध्य पाषाण काल का नाम दिया गया।

मध्य पाषाण काल की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित इस प्रकार हैं–

(i) निवास स्थान– मध्य पाषाण काल का मानव कन्दराओं में तथा छोटी–छोटी पहाड़ियों पर रहता था। मानव जानवरों का कच्चा माँस खाता था। इसके अतिरिक्त कन्दमूल फल भी खाता था। परन्तु इस समय वह कृषि और पशु–पालन से अपरिचित था।

(ii) अस्त्र–शस्त्र– इस काल के ब्लेड, प्वाइंट स्क्रेपर, इन्ग्रेवर, ट्रायंगल, क्रेसेण्ट नामक पत्थर के उपकरण प्राप्त हुए हैं। ये उपकरण जेस्पर, फ्लिट चर्ट एवं कल्सेडांनी नामक विशेष पत्थरों से निर्मित किए गए थे। इस काल के मानव ने एक से दो इंच के छोटे हथियार भी निर्मित किए, जिनमें लकड़ी के हेण्डिल भी मिलते हैं।

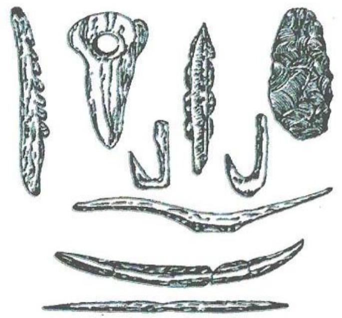

मध्यपाषाण कालीन औजार

(iii) अन्येष्टि संस्कार– मध्य पाषाण काल के मानव ने मृतकों को दफनाना शुरू कर दिया था। उत्खनन में प्राप्त अस्थि पंजरों के शीर्ष पर पत्थर के हथियार प्राप्त हुए हैं। इससे प्रतीत होता है कि इस काल के मानव में पारलौकिक भावना का जन्म हो गया था।

प्रशिक्षु चर्चा करें– नव पाषाण काल का प्रारम्भ कब हुआ और इस काल की मानव जीवन की विशेषताएं क्या थीं।

नव पाषाण काल अथवा उत्तर पाषाण काल– प्रशिक्षु चर्चा उपरान्त नवपाषाण काल निम्नवत् रूप से स्पष्ट करें यथा–

मध्य पाषाण काल के पश्चात् नव पाषाण का प्रारम्भ हुआ। उत्तर पाषाणकालीन यह सभ्यता भारतवर्ष के विस्तृत भू–भाग में थी। मध्य पाषाण काल के अनुपात में इस युग में पर्याप्त परिवर्तन आ गया था।

प्रशिक्षु जानें कि नव पाषाण काल की मानव जीवन की विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

(i) औजारों की उन्नति– उत्खनन में अनेक स्थानों से सेल्ट, कुल्हाड़ी, एड्स, पालिशर, हैमर स्टोन, फैब्रिकेटर, स्लिक स्टोन नामक हथियार प्राप्त हुए हैं। इस समय के हथियारों में चमकदार पालिश देखने को मिलती है। पहले की हथियारों की अपेक्षा यह सुव्यवस्थित एवं नुकीले, तीखे एवं सुन्दर हैं। कुछ हथियारों में हड्डी एवं लकड़ी की मूँठ भी प्राप्त हुई है। इस काल में पहिए एवं हंसिया का भी प्रयोग होने लगा था। इन उपकरणों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये उपकरण केवल आखेट के लिए निर्मित नहीं किये गये, वरन् अन्य कार्यों के लिए भी निर्मित हैं। पहिए के आविष्कार ने विभिन्न दूरी पर बसे हुए लोगों को एक दूसरे से मिलवाने का कार्य किया। वास्तव में यह युग आधुनिक यातायात का जन्मदाता था।

(ii) कृषि का आरम्भ– इस काल की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता कृषि का आरम्भ करना था। इससे पहले युग के मानव को कृषि का बिल्कुल भी ज्ञान नहीं था। अतः यह कार्य उस युग की एक महान क्रान्ति कही जा सकती है। जैसा कि विल दूरां ने भी कहा है– ''नव पाषाण काल में शिकार के स्थान पर कृषि एक दृष्टि से मानव इतिहास की क्रान्ति थी।'' इस काल में गेहूँ, जौ, बाजरा, मक्का, फल, शाक, कपास का उत्पादन होता रहा होगा। ऐसा उत्खनन से प्राप्त जानकारी के अनुसार कह सकते हैं।

(iii) पशु–पालन– उत्तर पाषाण काल अथवा नव पाषाण काल के लोगों ने इस बात का अनुभव किया कि यदि हम पशुओं की हत्या करना बन्द कर दें और उनको पालन शुरू कर देगें, तो उससे अधिक लाभ होगा। इसलिए इन लोगों ने पशु–पालन का कार्य शुरू कर दिया। इस काल के प्रमुख पालतू पशु थे– गाय, भैंस, बकरी, कुत्ता, घोड़ा, बैल आदि।

(iv) मिट्टी के बर्तन का निर्माण– नव पाषाण काल के लोगों ने मिट्टी से बर्तन बनाना शुरू कर दिया। कृषि एवं पशु–पालन का कार्य आरम्भ हो जाने के कारण अब इन लोगों के पास सामान अधिक हो गया। इसलिए अपने सामान को सुरक्षित रखने के लिए इन लोगों ने मिट्टी के बर्तन बनाना शुरू कर दिया। अभी चाक का आविष्कार नहीं हआ था अतः बर्तन हाथ से ही बनाए जाते थे जो कि आग में पका लिए जाते रहे होगें।

(v) वस्त्र निर्माण– नव पाषाण काल के लोगों ने पौधों के रेशों तथा उनके धागों से कातना शुरू कर दिया और उन्हें बुनकर वस्त्र बनाने लगे। इसकी जानकारी खुदाई में प्राप्त बहुत सी तकलियों तथा करघे से होती है।

इस समय वस्त्रों का रंगना भी आ गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि कताई–बुनाई के साथ साथ रंगाई की कला में भी विकास इस काल में हो चुका था।

(vi) गृह निर्माण– इस काल की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि गृह–निर्माण थी। कृषि एवं पशुपालन ने मानव को एक स्थान पर रूकने के लिए प्रेरित किया। अतः उसने लट्ठे, घास–फूस, और मिट्टी की सहायता से घर का निर्माण अर्थात झोपड़ी का निर्माण कर लिया था। वास्तव में, यहीं से मनुष्य की वास्तविक रूप से परिवार की इकाई को जन्म मिला होगा।

उपरोक्त वर्णन के आधार पर प्रशिक्षु स्पष्ट करें कि इस युग में मानव सभ्यता विकास की ओर निरन्तर बढ़ती गई। इसीलिए यह युग मानव सभ्यता के इतिहास में क्रान्ति का युग था। वास्तव में उस समय में आग का खोज, कृषि, पशुपालन, बर्तन बनाना, बुनना, घास की झोपड़ी बनाना, पहिए का निर्माण आदि विकास के घटनक्रम उस युग की महान क्रान्ति ही थीं।

2. ताम्र एवं कांस्य युग– मानव को धातुओं से एक ऐसी सामग्री मिली जो पत्थर से अधिक टिकाऊ थी। तथा जिसका प्रयोग विविध प्रकार के औजारों, उपकरणों और हथियारों को बनाने के लिए किया जा सकता था। इससे मानव की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति भी हो सकती थी। जब मानव की दृष्टि ताम्र (तांबा) पर पड़ी होगी तो वह कठोर होने के कारण मानव के आकर्षण का कारण बना होगा। अतः तांबे ने पत्थर का स्थान ले लिया। विश्व के कुछ भागों में काफी लम्बे समय तक तांबे के औजारों का इस्तेमाल पत्थर के औजारों के साथ–साथ होता रहा। जिस काल में मानव ने पत्थर और तांबे के औजारों का साथ–साथ प्रयोग किया, उसे 'ताम्र पाषाण काल' कहा गया। इस काल के प्रारम्भिक चरण में मानव को तांबे के बारे में पता नहीं था, जिसे खानों से निकाला जाता था। मानव केवल प्राकृतिक तांबे का प्रयोग करता था जिसे नदियों के तट पर जमा किया जाता था।

विद्वानों का मत है कि तांबे का प्रयोग लगभग 5000 ई0 पू0 में हुआ होगा। बाद में मानव ने खानों से अयस्क तांबा बनाना सीखा। इस प्रकार तांबे का प्रयोग लगभग 4500 ई0पू0 में दक्षिणी इराक के सुमेर नामक क्षेत्र से आरम्भ हुआ।

प्रशिक्षु ध्यान दें कि मानव ताबें से ही संतुष्ट नहीं हुआ। उसने जल्दी ही टिन या जस्ते की खोज की। तांबे एवं जस्ते को मिलाकर एक मिश्रित धातु, बनाई, जो कांसा कहलाई। कांसा मानव के विकास के लिए तांबे से अधिक उपयोगी प्रमाणित हुआ, क्योंकि कांसा तांबे की तुलना में अधिक सख्त था। अत्यधिक कठोर होने के कारण इससे बने उपकरण, औजार एवं हथियार अत्यन्त मजबूत एवं टिकाऊ थे। मजबूत औजारों के कारण बढ़ईगीरी (लकड़ी के काम) का भी विकास हुआ। मानव ने शीघ्र ही पहिए का भी आविष्कार किया। इस काल में मानव द्वारा कांस्य (कांसे) का सर्वाधिक प्रयोग किया गया था। अतः इसे 'कांस्य–युग' कहा जाता है।

पहिए के आविष्कार ने मानव सभ्यता के विकास की गति को तीव्रता से बढ़ाया। प्रशिक्षु पहिए के आविष्कार से मानव सभ्यता के विकास में हुए निम्नलिखित प्रभाव को भी जानें–

(i) पहिए का आविष्कार होने से मानव ने 'चाक' की सहायता से मिट्टी के बर्तन बनाना शुरू कर दिया।

(ii) पहिए की सहायता से कताई का कार्य आसान हो गया, जिससे भविष्य में कपड़ा बन सका।

(iii) पहिए ने यातायात के क्षेत्र में क्रान्ति ला दी। पहिए की सहायता से तेज चलने वाली गाड़ी बन सकी, जिससे यात्रा करना एवं सामान ढोना आसान हो गया।

कांस्य युगीन प्रारम्भिक सभ्यताओं की समान विशेषताएं– कांस्य युग में विश्व के विभिन्न भागों में अनेक सभ्यताओं का विकास हुआ। इन सभ्यताओं ने मानव–प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान दिया। यह उल्लेखनीय है कि इन सभी सभ्यताओं का विकास नदियों के किनारे ही हुआ था। उदाहरणार्थ सिन्धु नदी के किनारे सिन्धु सभ्यता अर्थात् हड़प्पा सभ्यता, दजला एवं फरात नदियों के तट पर सुमेरिया की सभ्यता और नील नदी के तट पर मिस्र की सभ्यता का विकास हुआ।

प्रशिक्षु चर्चा करें– नदियों के किनारे ही इन सभ्यताओं के विकसित होने के क्या कारण थे ? चर्चा उपरान्त प्रशिक्षु स्पष्ट करें कि–

(i) नदियों के किनारे की भूमि नर्म एवं उपजाऊ थी।

(ii) मानव जीवन के लिए जल आवश्यक है। नदी तट पर बसने से जल का अभाव नहीं रहता था।

(iii) नदियाँ प्रारम्भ से ही यातायात का मुख्य माध्यम रही हैं, अतः नदी के किनारे रहने से यातायात की कोई परेशानी नहीं होती थी।

(iv) नदियों में समय–समय पर बाढ़ आती रहती थी, जिससे बंजर भूमि पुनः उपजाऊ बन जाती थी, क्योंकि बाढ़ के पानी के साथ अनेक ऐसे खनिज मिट्टी में मिल जाते थे, जो भूमि को उपजाऊ बनाते थे।

कृषि में सुधार

आरम्भ में लकड़ी के हल को मानव खींचता था, मगर बाद में मानव इस हल को पशु से खिंचवाने लगा। नदियों के किनारे बसी सभ्यताओं के मानवों ने नदियों के किनारे की जमीन से जंगल काटकर खेती करने योग्य बनाया। मानव ने दलदलों का पानी निकालने के लिए नलियाँ खोदीं बाढ़ों से बस्तियों को सुरक्षित करने के लिए नदियों पर बाँध बनाए। खेतों को नियमित रूप से आवश्यकतानुसार पानी मिलता रहे, इसलिए बहुत सी नहरों का निर्माण किया। परन्तु जब अन्न का उत्पादन अधिक होने लगा तब मानव अपनी आवश्यकता के लिए अन्न उत्पादन के कार्य से मुक्त हो गए और ये लोग नगरों की ओर पलायन करने लगे।

नगरों एवं शहरों का उदय

कांस्य युग के आगमन से ही नगरों एवं शहरों का उदय होना आरम्भ हो गया। इस काल में सिंचाई की सुविधा का विकास होने के कारण अनेक समुदायों ने मिलकर एक ऐसी केन्द्रीय सत्ता की स्थापना की, जिसका आधिपत्य सभी स्वीकार करें ताकि वह संस्था सिंचाई के साधनों के विकास की ओर ध्यान दे सकें। ऐसी संस्था किसी एक गाँव में स्थापित नहीं हो सकती थी अतः नगरों का विकास होने लगा। सिंचाई के साधनों के विकसित होने से उपज बढ़ी, जिससे अनेक स्वयं के लिए अन्न उपजाने से मुक्त हो गए क्योंकि अब उन्हें अन्न आसानी से उपलब्ध था। जिन लोगों ने कृषि

का कार्य छोड़ दिया था वह विभिन्न कार्य करने लगे। जिससे व्यापार मे वृद्धि हुई और व्यापार के विकास ने मुद्रा (सिक्के) की आवश्यकता महसूस कराई। इससे मुद्रा का प्रचलन होने लगा। इसी प्रकार मनुष्यों की आवश्यकता ने नगरों का विकास किया। कांस्य युग में नगर पूरी तरह से विकसित थे। नगरों में पक्के मकान, चौड़ी सड़कें तथा ढकी हुई नालियाँ बनाई जाती थीं।

व्यापार एवं विकास

कांस्य युग में मानव का सामाजिक जीवन संगठित होने लगा था। कृषि और इसके अतिरिक्त अन्य आविष्कारों के कारण मानव ने एक स्थान पर स्थायी रूप से रहना तथा परिवार के रूप में जीवन व्यतीत करना शुरू कर दिया था। परिवार में सबसे बुजुर्ग व्यक्ति का ही नियन्त्रण होता था। परिवार के सभी सदस्य उसकी आज्ञा का पालन करते थे। अनेक परिवारों की जातियों के मिलने से कबीले अस्तित्व में आए। प्रत्येक कबीले का एक मुखिया होता था, जो अपने कबीले का नेतृत्व करता था। इन्हीं कबीलों से आगे चलकर राज्य की उत्पत्ति हुई।

कांस्य युग में श्रम का विभाजन हो गया था और लोगों ने विभिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञता प्राप्त कर ली थी। नगरों में रहने वाले व्यक्ति कृषि के स्थान पर शिल्पी, बढ़ईगीरी एवं राजगीरी आदि का कार्य करने लगे थे। समाज अनेक वर्गों में विभाजित हो गया था, क्योंकि विभिन्न कार्यों के आधार पर काम करने वाले व्यक्तियों ने अपने–अपने क्षेत्रों में बहुत उन्नति कर ली थी।

शासन व्यवस्था का उदय

व्यापार के विकास और नगरों के साथ ही जन–जीवन की रक्षा की समस्या उठ खड़ी हुई। अतः लोग किसी निश्चित शासन व्यवस्था को लागू करने का प्रयास करने लगे, जिसके परिणामस्वरूप राज्य का उदय हुआ। राज्य की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य एक सुचारू शासन व्यवस्था को लागू कर लोगों के जीवन एवं सम्पत्ति की रक्षा करना था। राज्यों द्वारा निश्चित नियम बनाए गए, जिनका पालन करना सबके लिए अनिवार्य था। शासन व्यवस्था को बनाए रखने के लिए शासक एवं योद्धा (सैनिक) वर्ग का भी जन्म हुआ।

धर्म, भाषा एवं कला का विकास

भारत में प्रथम उपयोग में लाई गई धातु कांसा थी जिसके कारण यह पवित्र मानी जाती है। कांस्य युगीन सभ्यता के लोग प्राकृतिक शक्तियों सूर्य एवं चन्द्रमा के अतिरिक्त विभिन्न देवी–देवताओं की पूजा करते थे, जो भिन्न–भिन्न शक्तियों के प्रतीक होते थे।

कांस्य युग में भाषा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण उन्नति हुई। इस काल में मानव ने अपने विचारों को लिखकर व्यक्त करना सीख लिया था, इस प्रकार इस युग में लिपियों का विकास प्रारम्भ हुआ। लगभग 3000 ई0 पू0 में कांस्य युगीन एक लिपि का आविष्कार हुआ, जिसे 'कीलाकार लिपि' कहा जाता है। इस लिपि में 250 से भी अधिक अक्षर थे। शुरूआत में यह लिपि चित्रों पर आधारित थी, जो बाद में ध्वनि पर आधारित हो गई थी।

कांस्य युग में मानव में कला के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण उन्नति की। वास्तुकाल, मूर्तिकला एवं चित्रकला का उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। कांस्य युगीन मानव अनेक इमारतों को निर्माता भी थे। इसके अतिरिक्त इन्होंने अनेक नगरों को भी

बसाया। इस काल के लोग मूर्ति कला में भी पारंगत थे। उन्होंने धातु, पाषाण एवं मिट्टी की मूर्तियाँ बहुसंख्या में बनाई, जो उत्खनन से प्राप्त हुई हैं। इसके साथ ही कांस्य युगीन मानव सुन्दर आभूषणों एवं बर्तनों के भी कुशल कारीगर थे। इन तथ्यों से स्पष्ट है कि कांस्य युगीन मानव कला प्रेमी थे।

पुनरावृत्ति बिन्दु– प्रशिक्षु निम्नलिखित बिन्दुओं पर पुनरावृत्ति कराएं –

- मानव ने सर्वप्रथम जिस धातु की खोज की, वह तांबा थी।
- तांबा के पश्चात् मानव ने टिन या जस्ते की खोज की। इसके बाद तांबा एवं जस्ता मिलाकर मानव ने एक मिश्रित धातु बनाई, जो कांसा कहलाई।
- कांसा मानव के लिए तांबे से अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ, क्योंकि कांसा अत्यधिक कठोर होने के कारण इससे बने उपकरण, और हथियार अत्यंत मजबूत एवं टिकाऊ थे।

लौह युग

ताम्र एवं कांस्य काल के पश्चात् लौह युग का आरम्भ होता है। लौह युग का आरम्भ उत्तर तथा दक्षिण भारत में एक साथ नहीं हुआ। दक्षिण भारत में उत्तर–पाषाण–काल के बाद ही इसका प्रयोग आरम्भ हुआ था। परन्तु उत्तर भारत में ताम्र–काल के बाद इसका प्रयोग आरम्भ हुआ था। विद्वानों का मानना है कि उत्तर भारत में इसका प्रयोग ईसा से लगभग 1000 वर्ष पूर्व आरम्भ हुआ था। यह अनुमान भी लगाया गया कि लौह–काल के लोग पामीर पठार की ओर से आये थे और धीरे–धीरे महाराष्ट्र में बस गए। कालान्तर में यह लोग मध्य प्रदेश के वनों को पारकर बंगाल की ओर चले गए।

लौह काल से मनुष्य के जीवन का वैज्ञानिक विकास आरम्भ हो गया और उसके जीवन में बहुत बड़े क्रान्तिकारी परिवर्तन होने लगे। मनुष्य के जीवन को सुखमय बनाने तथा इसकी सभ्यता एवं सस्कृति की उन्नति में किसी अन्य धातु से उतनी सहायता नहीं मिली, जितनी लौह से मिली है।

बोध प्रश्न

1. पृथ्वी पर मानव की उत्पत्ति एवं विकास कैसे हुआ? स्पष्ट करिए।
2. प्राचीन सभ्यता के क्रमिक विकास को कितने भागों में विभक्त किया गया है? पाषाण काल की विस्तृत जानकारी दीजिए।
3. कांस्य युग के बारे में आप क्या जानते हैं? कांस्य युग में कृषि के क्षेत्र में हुए सुधारों पर प्रकाश डालिए ।
4. कांस्य युग में पहिए के आविष्कार ने मानव सभ्यता के विकास को किस प्रकार प्रभावित किया? स्पष्ट कीजिए।
5. कांस्य युग में भाष के विकास के बारे में आप क्या जानते हैं? स्पष्ट कीजिए।
6. मानव द्वारा धातुओं के प्रयोग के विषय में आप क्या जानते हैं? विस्तृत विवेचना कीजिए ।

नदी घाटी की सभ्यताएं

विश्व के विभिन्न भागों में कांस्य युग में अनेक सभ्यताओं का विकास हुआ। ये सभ्यताएं नदी की घाटी में विकसित हुई थीं। नदियों की घाटी में विकसित होने के कारण ही ये नदी घाटी की सभ्यताएं कहलाई। प्रत्येक सभ्यता की अपनी कुछ विशेषताएं थीं, परन्तु इनमें परस्पर अनेक समानताएं भी थीं।

नदी घाटी की सभ्यताएं–
- सिंधु घाटी की सभ्यता
- मेसोपोटामिया की सभ्यता
- मिस्र की सभ्यता
- चीन की सभ्यता

प्रशिक्षु चर्चा करें– *नदियों की घाटी में कौन–कौन सी सभ्यताएं विकसित हुई थीं? प्रशिक्षु कुछ प्रमुख सभ्यताओं के बारे में चर्चा उपरान्त स्पष्ट करें, यथा –*

सिन्धु सभ्यता

1922 ई0 में राखलदास बनर्जी ने हड़प्पा से 640 कि0मी0 दूर स्थित मोहनजोदड़ों में उत्खनन के द्वारा एक भव्य नगर के अवशेष प्राप्त किए। प्रारम्भ मं उत्खनन कार्य सिन्धु नदी की घाटी में ही किया गया था तथा वहीं पर इस सभ्यता के अवशेष सर्वप्रथम प्राप्त हुए थे, अतः मार्शल ने इस सभ्यता को 'सिन्धु सभ्यता' कहा।

पुरातात्विक अन्वेषणों एवं उत्खनन से स्पष्ट हो गया है कि सिन्धु सभ्यता का क्षेत्र हड़प्पा एवं मोहन जोदड़ों तक ही सीमित नहीं था, वरन् यह अत्यन्त विस्तृत था। सिन्धु सभ्यता का विस्तार प्राचीन मेसोपोटामिया, मिस्र तथा फारस की सभ्यताओं के क्षेत्रों में बहुत अधिक विस्तृत था।

प्रशिक्षु सिन्धु सभ्यता के नगर निर्माण योजना एवं भवन निर्माण योजना पर चर्चा करें कि यह व्यवस्थाएं कैसी थीं?

सिन्धु सभ्यता की विशेषताएं–प्रशिक्षु चर्चा के उपरान्त सिन्धु सभ्यता की विशेषताएं को इस प्रकार से स्पष्ट करें। यथा–

नगर निर्माण योजना

सिन्धु घाटी सभ्यता का स्वरूप नगरीय था। सिन्धु सभ्यता की नगर योजना की आधार सामग्री मोहनजोदड़ों, हड़प्पा, चन्हूदड़ों, कालीबंगा, लोथल, बनबाली आदि से प्राप्त होती है।

सिन्धु सभ्यता नगरों में चौड़ी–चौड़ी सड़कें पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण दिशा की ओर थी। ये सड़कें एक दूसरे को प्रायः समकोण पर काटती थीं । इस प्रकार प्रत्येक नगर अनेक खण्डों (मुहल्लों) में बंट जाता था। एक सड़क 11 मीटर चौड़ी थी जो सम्भवतः राजमार्ग रही होगी। नगर की सभी सड़के राजमार्ग से मिलती थीं। नगरों में जल निकास का भी समुचित प्रबन्ध था। सड़कों के किनारे नालियाँ थी, जो पक्की एवं ढकी होती थीं। इनमें मेनहोल भी बनाया जाता था।

भवन निर्माण

भवनों के दो भागों में विभक्त कर सकते हैं, यथा –

(i) साधरण भवन– इन भवनों का आकार आवश्कतानुसार छोटा एवं बड़ा होता था। ये भवन एक से दो मंजिल तक के होते थे। ऊपर की मंजिल पर जाने के लिए ईटों एवं पत्थर की सीढियाँ होती थीं। भवन में खिड़कियाँ, रोशनदान, दरवाजे, रसोई घर, कुँआ, स्नानगृह ओर आंगन होता था। दरवाजे व छत लकड़ी के बने होते थे। दीवारें बहुत मोटी बनाई जाती थीं। फर्श ईंट, खड़िया एवं गारे से बनाया जाता था। भवनों में जल निकास की उचित व्यवस्था थी। घर के दरवाजे मुख्य सड़क पर न खुलकर घर के पीछे खुलते थे।

(ii) राजकीय एवं सार्वजनिक भवन– मोहनजोदड़ों में राजकीय एवं सार्वजनिक भवन के भग्नावशेष भी प्राप्त हुए हैं। एक विशाल भवन 71 मीटर लम्बा और इतना ही चौड़ा है इसमें एक विशाल कक्ष भी है। जिसकी छत 20 स्तम्भों पर टिकी हुई है। इसके फर्श पर अनेक चौकियाँ बनी हुई है। सम्भवतः इसका प्रयोग विचार विनिमय के लिए होता होगा।

विशाल स्नानागार

विशाल स्नानागार एक विशाल भवन में स्थित है। इसका जलाशय आयताकार है। यह 39 फीट चौड़ा एवं 8 फीट गहरा है। इसके प्रत्येक ओर जल तक पहुँचने के लिए ईटों की सीढ़ियाँ है। जलाशय की दीवार एवं फर्श पक्की ईटों से बना है। जलाशय में जल निकास की समुचित व्यवस्था की गई है। इसके चारों ओर बरामदे हैं तथा इनके पीछे कमरे बने हुए हैं।

अन्नागार

अन्नागार की लम्बाई एवं चौड़ाई क्रमशः 18 मीटर एवं 7 मीटर है। इसके अतिरिक्त मोहनजोदड़ों में सार्वजनिक भोजनालयों के अवशेष भी प्राप्त हुए हैं।

सामाजिक जीवन

उत्खनन से प्राप्त सामग्री एवं स्रोतों से सिन्धु सभ्यताकालीन सामाजिक स्थिति यथा–तत्कालीन खान–पान, वेशभूषा, आभूषण प्रसाधन सामग्री आदि के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई हैं। जो निम्नलिखित इस प्रकार हैं –

(i) सामजिक संगठन– सिन्धु सभ्यता का समाज मुख्यतः वर्गहीन समाज ही था। समाज मुख्यतः व्यापार प्रधान ही था। इसमें मुख्यवर्ग– व्यापारी, योद्धा, श्रमजीवी, विद्वान आदि थे। सम्भवतः इस सभ्यता के अन्तर्गत समाज 'मातृप्रधान' था।

(ii) कृषि फसल एवं आहार– सिन्धु सभ्यता के लोग मुख्यतः नौ प्रकार की फसल उगाते थे। मुख्य फसल एवं आहार– गेहूँ, जौ, चावल, मटर, दूध, सब्जियां, फल, भेड़, गाय , मछली, मुर्गे आदि जन्तुओं के मांस थे।

(iii) वेशभूषा एवं आभूषण– शरीर पर दो वस्त्र धारण किए जाते थे। प्रथम एक आधुनिक शाल के समान कपड़ा होता था जिसे कन्धे के ऊपर तथा दाहिनी भुजा के नीचे से निकालकर पहनते थे। जिससे दाहिना हाथ कार्य करने के लिए स्वतंत्र रहे। दूसरा वस्त्र शरीर पर नीचे पहना जाता था, जो आधुनिक धोती के समान होता था। स्त्रियों और पुरूषों के वस्त्रों में विशेष अन्तर नहीं था। साधारणतः सूती कपड़े पहने जाते थे परन्त ऊनी वस्त्रों का भी प्रचलन था।

स्त्री–पुरूष दोनों ही अंगूठी, कड़े, कंगन, कण्ठहार, कुण्डल आदि पहनते थे। स्त्रियाँ–चूड़ियां, कर्णफूल, हंसली, भुजबन्द, करधनी आदि भी पहनती थीं। ये आभूषण सोने, चाँदी, हाथी दांत, हीरों आदि से बनाये जाते थे। निर्धन व्यक्ति ताँबे, मिट्टी, सीप आदि के आभूषण पहनते थे।

(iv) प्रसाधन सामग्री– स्त्रियों को प्रसाधन अत्यंत प्रिय था। वह लिपिस्टिक का प्रयोग करती थी। लिपिस्टिक चन्हूदड़ों से प्राप्त हुई है।

(v) आमोद प्रमोद के साधन– सिन्धु सभ्यता के निवासियों के आमोद–प्रमोद के प्रमुख साधन–जुआ खेलना, शिकार खेलना, नाचना, गाना, मुर्गों की लड़ाई देखना आदि था।

(vi) औषधियाँ– सिन्धु सभ्यता निवासी विभिन्न औषधियों से परिचित थे। इस सभ्यता में खोपड़ी की शल्य चिकित्सा के उदाहरण कालीबंगा एवं लोथल से प्राप्त होते हैं।

(vii) गृहस्थी के उपकरण– इस सभ्यता के निवासी घड़े, कलश, थाली, गिलास, चम्मच, मिट्टी के कुल्हड़ का प्रयोग करते थे। कभी–कभी सोने, तांबे एवं चाँदी के बर्तनों का भी प्रयोग करते थे।

आर्थिक जीवन

उत्खनन से प्राप्त भग्नावशेषों से पता चलता हे कि सिन्धु सभ्यता के निवासियों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त सुदृढ़ थी। यथा–

(i) कृषि– कृषि इनका मुख्य व्यवसाय था। गेहूँ, जौ, कपास, मटर, तिल, चावल एवं अनेक फल भी उगाये जाते थे।

(ii) पशुपालन– सिन्धु सभ्यता के निवासी गाय, बैल, भेड़, बकरी, कुत्ता आदि पालते थे।

(iii) कपडे बुनना– सिन्धु निवासी सम्भवतः विश्व के सूत कातने तथा कपड़े बुनने वाले प्रथम लोग थे।

(iv) उद्योग एवं अन्य व्यवसाय– सिन्धु निवासी शिल्पकला में अत्यन्त दक्ष थे। मिट्टी के असंख्य बर्तन खुदाई से प्राप्त हुए हैं जो अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक हैं। धातुओं से सुन्दर आभूषण भी बनाए जाते थे। इसके अतिरिक्त सीप, शंख, हाथी दाँत आदि के भी आभूषण बनाए जाते थे।

(v) व्यापार– इस सभ्यता के निवासियों का विदेशों से भी व्यापारिक सम्बन्ध था। इस सभ्यता के प्रमुख बन्दरगाह– लोथल एवं सोत्काकोह थे। इनका विदेशों से जल एवं थल दोनों मार्गों से सम्पर्क था। थल पर बैलगाड़ियों तथा जल में जहाजों का प्रयोग किया जाता था।

धार्मिक जीवन

सिन्धु निवासी निम्नलिखित देवी–देवताओ की आराधना करते थे, यथा –

1. मातृदेवी की पूजा	2. शिव पूजा	3. योनि पूजा	4. पशु पूजा
5. सूर्य पूजा	6. वृक्ष पूजा	7. नदी पूजा	

मृतक संस्कार

प्रशिक्षु चर्चा करें कि सिन्धु निवासी मृतकों का अंतिम संस्कार कैसे करते थे ? चर्चा उपरान्त स्पष्ट भी करें कि सिन्धु निवासी धार्मिक विश्वासों के आधार पर तीन प्रकार से मृतकों का अन्तिम संस्कार करते थे। यथा –

(i) पूर्ण समाधि– मृतक को जमीन में गाड़ दिया जाता था। वहां समाधि बनाई जाती थी। लोथल में दो कंकाल एक ही कब्र में दफनाए मिले हैं।

(ii) आंशिक समाधि– इसमें मृतक को पहले पशु–पक्षियों का आहार बनने के लिए खुले स्थान पर छोड़ा जाता था तथा बाद में उसकी अस्थियों को पात्र में रखकर भूमि में रखा जाता था।

(iii) दाह कर्म– इसमें शव को जलाकर उसकी राख तथा अस्थियों को कलश में रखकर भूमि में गाड़ दिया जाता था। मोहनजोदड़ों में ऐसे कलश प्राप्त हुए हैं।

कला

कला एवं ललितकला की जानकारी हमें निम्नलिखित के द्वारा प्राप्त होती है, यथा –

(i) भवन निर्माण कला– विशाल अन्नगृह, मकान, सुनियोजित नगर आदि उनकी कला को प्रमाणित करते हैं।

(ii) मूर्तिकला– सिन्धु निवासी मूर्तियाँ बनाने में कुशल थे। उस समय की धातु, पाषाण एवं मिट्टी की मूर्तियाँ जिनमें धार्मिक देवी देवताओं, उपासिकाओं आदि की प्राप्त हुई है।

(iii) धातु कला– सिन्धु निवासी सोने, चाँदी, तांबे आदि के आभूषणों का निर्माण करते थे। मोहनजोदड़ों से प्राप्त कांसे की नर्तकी की मूर्ति इसका मुख्य उदाहरण है।

(iv) चित्रकला– इस सभ्यता के लोगों को चित्रकला का भी ज्ञान था। जिसकी पुष्टि प्राप्त बर्तनों एवं मुहरों पर चित्रित चित्रों से होती है।

(v) संगीत एवं नृत्यकला– संगीत सम्बन्धी उपकरण– ढोल, तबला आदि खुदाई से प्राप्त हुए हैं। नृत्य मुद्रा में स्त्री की धातु मूर्ति इस बात का परिचायक है कि वे नृत्य कला में रूचि रखते थे।

(vi) ताम्रपत्र निर्माण कला– सिन्धु सभ्यता कालीन अनेक ताम्रपत्र प्राप्त हुए हैं जो आकार में वर्गाकार हैं।

पुनरावृत्ति बिन्दु–   प्रशिक्षु पुनरावृत्ति में निम्न बिन्दुओं को चर्चा, चित्र एवं चार्ट द्वारा स्पष्ट करें –

- सिन्धु सभ्यता की नगर निर्माण योजना कैसी ?
- भवन निर्माण योजना
- विशाल स्नानागार एवं अन्नागार
- सिन्धु कालीन सामाजिक जीवन
- सिन्धु कालीन धार्मिक जीवन एवं आर्थिक जीवन

मेसोपोटामिया की सभ्यता–

मेसोपोटामिया की सभ्यता विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। यूनानी भाषा में 'मेसोपोटामिया' शब्द का अर्थ 'जल के मध्य का क्षेत्र' होता है। यह सभ्यता ईराक की दजला एवं फरात नामक दो नदियों के मध्य के क्षेत्र में विकसित हुई थी, इसी कारण से 'मेसोपोटामिया की सभ्यता' के नाम से पुकारा जाता है। इस क्षेत्र में तीन सभ्यताओं–सुमेरिया, बेबीलोनिया और असीरिया की सभ्यता का विकास हुआ था। अतः तीनों सभ्यताओं को सम्मिलित रूप से मेसोपोटामिया की सभ्यता के नाम से जाना जाता है।

प्रशिक्षु की अध्ययन की सुविधा हेतु इन तीनों सभ्यताओं का अलग–अलग वर्णन किया जा रहा है यथा–

1–सुमेरिया की सभ्यता– मेसोपोटामिया में सर्वप्रथम सुमेरिया की सभ्यता का ही विकास हुआ था। इस क्षेत्र को अत्यधिक उपजाऊ होने के कारण 'उपजाऊ क्रीसेण्ट' कहा जाता है। सुमेरिया सभ्यता के लोगों ने अपनी राजधानी सुमेर बनाई थी। इसी कारण इस सभ्यता को 'सुमेरियन की सभ्यता' कहा जाता है।

प्रशिक्षु, सुमेरिया कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक जीवन के बारे में भी जानें

(i) राजनीतिक स्थिति– दजला एवं फरात नदियों के कारण इस क्षेत्र में अनेक द्वीप बन गए थें। इन्हीं द्वीपों में धीरे–धीरे सभ्यता का विकास हुआ। और प्रत्येक द्वीप पर एक राज्य की स्थापना हुई। सुमेरिया सभ्यता के प्रमुख राज्य–उर, किश, निषुर, इरिदु आदि थे। समेरिया सभ्यता में शासन धर्म पर आधारित था। तथा 'राजा' को ईश्वर का प्रतिनिधि समझा जाता था। सारगन प्रथम इस सभ्यता का संस्थापक था। राजा के बाद राज्य में 'पुरोहित' का महत्व होता था।

(ii) सामाजिक जीवन– सुमेरिया सभ्यता के समाज पर धर्म का विशेष प्रभाव था। तत्कालीन समाज तीन वर्गों में विभक्त था– उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग एवं निम्न वर्ग। उच्च वर्ग में शासक, सामान्त, उच्चाधिकारी एवं पुरोहित आदि आते थे। मध्यम वर्ग में कृषक, व्यापारी, शिल्पी आदि आते थे। इसके अतिरिक्त निम्न वर्ग में दास आते थे।

तत्कालीन समाज में यद्यपि दहेज प्रथा का प्रचलन था, लेकिन फिर भी समाज में स्त्रियों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था।

(iii) आर्थिक जीवन– सुमेरियन सभ्यता के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि था। इस काल के लोगों ने नहरों एवं बांधों का निर्माण कराया, जिसके परिणामस्वरूप कृषि का विकास हुआ। इस काल में किसानों को अपनी कुल उपज का 1/3 भाग राज्य को कर के रूप में देना पड़ता था। समुरियन सभ्यता के अन्तर्गत व्यापार की स्थिति भी अच्छी थी। व्यापार दूर–दूर तक के क्षेत्रों के साथ किया जाता थ। इस सभ्यता के निवासी अनाज, खजूर, ऊनी वस्त्र आदि मिस्र एवं भारत ले जाते थे। इन देशों से सोना, चाँदी तथा मूल्यवान पत्थर (हीरा आदि) लेकर आते थे।

(iv) धार्मिक जीवन– सुमेरियन सभ्यता में धर्म का विशेष महत्व था। प्रारम्भ में केवल वह एक ही देवता (एकदेववाद) की पूजा किया करते थे। परन्तु बाद में अनेक देवताओं की पूजा की जाने लगी थी। प्राकृतिक शक्तियों में सूर्य एवं चन्द्रमा की पूजा की जाती थी अर्थात् यहाँ धर्म एकेश्वरवाद से बहुदेववाद की ओर अग्रसर हुआ।

(v) लेखन कला– सुमेरियन लोगों को लेखन कला का भी ज्ञान था। इनकी लिपि को 'कीलाकार लिपि' कहा जाता है। इस लिपि का आविष्कार लगभग 3000 ई0पू0 में सुमेरियन लोगों ने किया था। इस लिपि में लगभग 300 अक्षर थे, जिन्हें चिह्न, चित्रों और संकेतों के माध्यम से व्यक्त किया जाता था। इस लिपि को चिकनी मिट्टी की गीली तख्तियों पर नुकीली वस्तु (कलम) से लिखा जाता था। इस लिपि में अनेक लेख भी प्राप्त हुए हैं।

सुमेरिया सभ्यता के अध्ययन के बाद हम कह सकते हैं कि 300 ई0पू0 की इस सभ्यता ने मानव को काफी कुछ दिया, जिसके लिए मानव जाति इस सभ्यता की ऋणी रहेगी।

2. बेबीलोनिया की सभ्यता

सुमेरिया सभ्यता के पश्चात् इस क्षेत्र में बेबीलोनिया की सभ्यता का जन्म हुआ। बेबीलोनिया सभ्यता के लोगों ने सुमेरियन सभ्यता को नष्ट न करके उसमें सुधारकर पहले से अच्छा बनाया। इसी कारण बेबीलोनिया एवं सुमेरिया की सभ्यता में अनेक समानताएं हैं।

बेबीलोनिया के लोग सम्भवतः अरब के रेगिस्तान के घुमक्कड़ लोग थे जिन्होंने ई0पू0 2000 के लगभग सुमेर पर विजय प्राप्त की। इन्होंने 'बेबीलोन' को अपनी राजधानी बनाया। इसी कारण इस सभ्यता को बेबीलोनिया की सभ्यता कहा जाता है।

बेबीलोनिया सभ्यता का राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक जीवन निम्नलिखित रूपों से स्पष्ट किया जा सकता है –

1. राजनीतिक जीवन

बेबीलोन का सर्वप्रमुख शासक 'हम्मूराबी' था। उसने लम्बे समय लगभग 2123 ई0पू0 से 2080 ई0पू0 तक शासन किया। बेबीलोन में भी राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता था। हम्मूराबी न केवल अत्यंत शक्तिशाली शासक था, वरन् अत्यन्त योग्य भी था। उसको विश्व का प्रथम कानून निर्माता भी माना जाता है।

प्रशिक्षु हम्मूराबी की विधि संहिता को जानें– यह विधि संहिता 3600 पंक्तियों में लिपिबद्ध की गई थी। इसमें लगभग 285 धाराएं थीं। जिनमें प्रमुख निम्नलिखित इस प्रकार थीं–

(1) कानून को कोई भी अपने हाथ में नहीं ले सकता था। अपराधी को सजा देने का काम सरकार का था।
(2) कानून अमीर एवं गरीब सभी के लिए समान था।
(3) सभी प्रकार के ठेकों के लिए नियम निर्धारित किए गए।
(4) कर्जदारों को राहत देने के लिए रहन रखने की प्रथा चालू की गई।
(5) ब्याज की दरें निर्धारित की गई।
(6) मुआवजा देने की प्रथा भी चालू की गई।

हम्मूराबी की यह संहिता विश्व के इतिहास में विशिष्ट स्थान रखती है।

2.सामाजिक जीवन

बेबीलोनिया समाज तीन वर्ग–उच्च, मध्य एवं दास वर्ग में विभक्त था। उच्च वर्ग में पुरोहित तथा अन्य सम्पन्न व्यक्ति थे। जबकि मध्य वर्ग में किसानों एवं व्यापारियों को रखा जाता था। निम्न वर्ग में दास थे। इस सभ्यता में सामान्यतया एक पत्नी प्रथा ही प्रचलित थी।

3. आर्थिक जीवन

इस सभ्यता में कृषि ही प्रमुख व्यवसाय था। इस सभ्यता में किसान सम्पन्न थे, क्योंकि भूमि उपजाऊ थी। किसानों को कुल उपज का 1/3 सरकार को देना पड़ता था। इस सभ्यता में व्यापार उन्नति पर था। सड़कों एवं जहाजों से व्यापार किया जाता था। उनके भारत एवं मिस्र से व्यापारिक सम्बन्ध थे।

4. धार्मिक जीवन

इस सभ्यता में धर्म का विशेष महत्व था। यहाँ जिगुरात अर्थात, मंदिर राज्य की सम्पत्ति माने जाते थे। इस सभ्यता में अनेक देवी–देवताओं की पूजा की जाती थी। इस समय पशु–बलि का भी प्रचलन था। सूर्य और चन्द्रमा की भी पूजा की जाती थी।

असीरिया की सभ्यता

हम्मूराबी की मृत्यु के पश्चात् बेबीलोनिया का साम्राज्य कमजोर हो गया। असीरियन लोगों ने बेबीलोन पर आक्रमण कर अधिकार कर लिया। इन्होंनें मेसोपोटामिया के विशाल भू–भाग पर अपने साम्राज्य की स्थापना की। उनके राज्य में 'अस्सुर'– नामक नगर के कारण वे 'असीरियन कहलाए। इनका सबसे प्रसिद्ध शासक असीरि बेत्रिपाल था। यह एक विद्वान शासक था।

इस सभ्यता की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं धार्मिक जीवन व्यवस्था निम्नलिखित थी–

(i) राजनीतिक स्थिति– असीरियन की राजधानी निनेवे' थी। यह दजला नदी के किनारे थी। इस सभ्यता में कुशल एवं सुव्यवस्थित शासन की स्थापना की गई थी। इस सभ्यता में भी राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता था। वह अत्यन्त शक्तिशाली होता था। प्रशासन की सुविधा हेतु साम्राज्य को ईकाईयों में बांटा गया था। प्रत्येक इकाई का सर्वोच्च अधिकारी राज्यपाल होता था। जिसका कार्य–कर वसूल करना, प्रशासनिक व्यवस्था बनाए रखना एवं जनता की सुरक्षा करना था। इस सभ्यता में अपराधियों को कठोर दण्ड दिया जाता था।

(ii) आर्थिक जीवन– असीरियन सभ्यता भी कृषि प्रधान थी। यहाँ के लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती करना था। कृषि के अतिरिक्त उद्योगों का भी विकास होने लगा था। इन लोगों ने लोहे का प्रयोग करना भी शुरू कर दिया था। लोहे के औजार बनाने वाले ये सम्भवतः प्रथम लोग थे।

(iii) सामाजिक जीवन– इस सभ्यता के लोगों का समाज तीन भागों में विभक्त था। उच्च वर्ग में सामन्त एवं पुरोहित, मध्य वर्ग में व्यापारी एवं कृषक तथा निम्न वर्ग में दास आदि थे। इस काल में स्त्रियों की स्थिति अच्छी नहीं थी। परदा प्रथा प्रचलित थी।

(iv) धार्मिक जीवन– इस सभ्यता में धर्म का महत्व कम था। इस सभ्यता के लोग असुर, मर्दुक एवं ईश्वर की पूजा करते थे।

असीरियनों ने शक्ति के बल पर शासन की स्थापना की थी। अतः यह अधिक समय तक कायम नहीं रह सके। और इस सभ्यता का पतन हो गया।

मिस्र की सभ्यता

मिस्र में भी सभ्यता का विकास वहाँ की प्रमुख नदी 'नील' के किनारे ही हुआ था। मिस्र अफ्रीका महाद्वीप के उत्तरी पूर्वी भाग में स्थित है। मिस्र के उत्तर में भूमध्यसागर तथा पूर्व में लाल सागर है। मिस्र के दक्षिण–पश्चिम में रेगिस्तान है। मिस्र के बीच में नील नदी बहती है। जो मिस्र की भूमि को उपजाऊ बनाती है। मिस्र में नील नदी का विशेष महत्व हैं क्योंकि मिस्र के निवासियों के लिए पीने योग्य जल यही नदी उपलब्ध कराती है। यदि मिस्र में नील नदी न होती तो मिस्र का सारा क्षेत्र रेगिस्तान हो जाता। अतः मिस्र निवासी नील नदी की पूजा करते हैं। इसी कारण मिस्र को 'नील नदी का तोहफा' कहा जाता है।

प्रशिक्षु इन्हें भी जानें–मिस्र के इतिहास को तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं।

(i) पिरामिड काल– मृत्यु के उपरान्त मृत शरीर के साथ विभिन्न वस्तुएं भी दफन की जाती थीं और उन पर ऊँचे–ऊँचे चबूतरे बनाए जाते थे, जिन्हें 'पिरामिड' कहा जाता था। इसी कारण इस काल को 'पिरामिड काल' कहा जाता है।

(ii) सामन्ती काल– मिस्र के इतिहास के 2400 ई0पू0 से 1800 ई0पू0 तक के काल को 'सामन्ती काल' कहा जाता है, क्योंकि इस काल में सामान्तों की शक्ति बहुत बढ़ गई थी।

(iii) साम्राज्यवादी काल– मिस्र के इतिहास में 1800 ई0पू0 से 1000 तक के काल को 'साम्राज्यवादी काल' के नाम से पुकारा जाता है। क्योंकि इसी काल में मिस्र का विस्तार हुआ था और मिस्र का साम्राज्य नील नदी से फरात नदी तक फैल गया था।

मिस्र की सभ्यता की विशेषताएं

मिस्र की सभ्यता विश्व की प्राचीन सभ्यताओं में एक विशिष्ट स्थान रखती है। इस सभ्यता की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित थीं –

1. शासन व्यवस्था– मिस्र में निरंकुश शासन व्यवस्था थी। जिसका सर्वोच्च अधिकारी फारो (राजा) होता था। राज्य की सम्पूर्ण भूमि का स्वामी भी राजा ही होता था। तथा मिस्रवासी उसे ईश्वर का प्रतिनिधि मानते हुए पूजते थे। 'फारो' की सहायता के लिए अनेक पदाधिकारी होते थे, जिनमें प्रमुख मंत्री था। राज्य की आय का प्रमुख स्रोत भूमि कर ही होता था।

2. सामाजिक जीवन– मिस्र का समाज तीन वर्णों में विभक्त था। उच्च वर्ग जिसमें राजा एवं राजवंश के व्यक्ति, सामान्त, जमींदार तथा अन्य धनी व्यक्ति आते थे। द्वितीय मध्यम वर्ग में व्यापारी, व्यवसायी एवं बुद्धिजीवी वर्ग आते थे। तृतीय वर्ग कृषक, मजदूर एवं निर्धन व्यक्ति का था। इन समस्त वर्गों के रहन–सहन में पर्याप्त अन्तर था। मिस्र के निवासी भोजन में गेहूँ, जौ, माँस, मछली, दूध और खजूर का प्रयोग करते थे। मिस्र में स्त्रियों की स्थिति सम्माननीय थी। स्त्रियाँ सार्वजनिक एवं धार्मिक समारोहों में पुरूषों के साथ भाग लेती थीं। उन्हें पुरूषों के समान सभी अधिकार प्रदान किए गए थे।

3. धार्मिक जीवन– मिस्र के प्रत्येक नगर का अपना देवता होता था। मिस्र में देवी–देवताओं की संख्या लगभग 2200 थी। इनके प्रमुख देवता सूर्य थे। जिन्हें 'रे', 'रा', 'होरस' आदि नामों से जाना जाता था। मिस्र निवासी देवी देवताओं के अतिरिक्त पशुओं की भी पूजा करते थे। इसके साथ ही मिस्रवासी अपने सम्राटों (फराओं) की पूजा भी देवी–देवताओं के समान करते थे।

4. व्यवसाय एवं व्यापार– मिस्र के लोगों का मुख्य कार्य खेती करना था। नील नदी के कारण मिस्र की भूमि अत्यंत उपजाऊ थी। अतः कम वर्षा होने के पश्चात् भी किसान उपज पैदा करने में सफल रहते थे। उस समय मुख्य रूप से गेहूँ, जौ एवं अंगूर की खेती की जाती थी। कपास भी उगाया जाता था। कृषि के साथ–साथ प्रमुख पशुओं –गाय, बैल, भेड़ आदि को पालते थे। व्यापार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी किया जाता था। विभिन्न वस्तुएं भारत से यथा–इत्र, रंग, मसाले आदि भेजी जाती थी और अनेक वस्तुएं मंगायी जाती थीं।

चीन की सभ्यता– चीन की सभ्यता ह्वांग–हो नदी की घाटी में विकसित हुई। यह स्थान चीन के उत्तरी क्षेत्र में स्थित है। इस सभ्यता का विकास होने पर कुछ लोग दक्षिण दिशा में यांगसी क्यांग नदी की घाटी में जाकर बस गए। यह भूमि भी उपजाऊ थी।

चीन में प्रमुख राजवंशों में शांग–वंश एवं चाऊ–वंश हैं। शांगवंश के शासकों ने लगभग ई0पू 1766 से ई0पू0 1122 ई0पू0 तक शासन किया। इनके शासन में चीन में प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति हुई। चाऊ वंश ने ई0पू0 1122 से लेकर ई0पू0 249 तक शासन किया। पहले काल की तुलना में इसमें अधिक विकास हुआ। इसलिए इस काल को 'चीनी इतिहास का स्वर्णयुग' मानते हैं।

चीन की सभ्यता की विशेषताएं– चीन की सभ्यता की विशेषताएं निम्नलिखित थीं –

1. सामाजिक स्थिति– चीन का समाज वर्गों में विभक्त था। यथा–बुद्धिजीवी वर्ग, व्यापारी वर्ग, कारीगर एवं कलाकार वर्ग, कृषक एवं मजदूर वर्ग। इन चारों वर्गों में कृषक एवं मजदूर को छोड़कर शेष की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। सरकारी पदों पर विद्वान व्यक्तियों को ही नियुक्त किया जाता था। चीनी समाज में संयुक्त परिवार की प्रथा थी। प्रारम्भ में इस समाज में स्त्रियों की स्थिति ठीक थी, परन्तु धीरे–धीरे कमजोर स्थिति होती गई।
2. आर्थिक जीवन– चीन के लोगों का प्रमुख व्यवसाय कृषि ही था। चीन में गेहूँ, चावल, बाजरा, सोयाबीन तथा चाय की खेती की जाती थी। कृषि के साथ–साथ पशुपालन कार्य भी किया जाता था। पशुओं में सूअर एवं भेड़ को विशेष रूप से पाला जाता था। चीन के लोग व्यापार भी करते थे। रेशम उद्योग अत्यन्त विकसित था, इसी कारण चीन से रेशम का सर्वाधिक निर्यात होता था। इसके अतिरिक्त चीन के लोग कागज का भी निर्माण करते थे।
3. धार्मिक जीवन– चीन में धर्म का विशेष महत्व नहीं था। उस समय पुरोहित नहीं होते थे। परन्तु लोग सर्वशक्तिमान शक्ति की पूजा करते थे। जिसे वे 'शंगति' कहते थे। 'शंगति' का अर्थ स्वर्ग का देवता' होता है। राजा को शंगति का पुत्र माना जाता था। इसी कारण राजा की पूजा की जाती थी।

पुनरावृत्ति बिन्दुः– प्रशिक्षु निम्नलिखित बिन्दुओं पर पुनरावृत्ति कराएं –

- सिन्धु घाटी सभ्यता का विकास सिन्ध नदी के किनारे हुआ।
- सिन्धु सभ्यता विश्व का प्राचीन सभ्यताओं में से एक है।
- मेसोपोटामिया सभ्यता एशिया के पश्चिमी भाग में दजला एवं फरात नदियों की घाटी में विकसित हुई थी।
- मेसोपोटामिया में ही विश्व की तीन सभ्यताओं–सुमेरिया, बेबीलोनिया तथा असीरिया का जन्म हुआ।
- सुमेरिया सभ्यता में मन्दिरों को 'जिगुरात' कहा जाता था।
- मिस्र को नील नदी का उपहार कहा जाता था।
- मिस्र में फारो के मकबरे को पिरामिड कहते थे।
- मिस्र के मुख्य देवता –सूर्य एवं नील थे।
- चीन सभ्यता का विकास ह्वांग–हो एवं यांगत्से–क्यांग नदियों की घाटियों में हुआ था।
- चीन के लोग स्वर्ग के देवता 'शंगति' की पूजा करते थे।

बोध प्रश्न

1. सिन्धु सभ्यता का नगर नियोजन एवं सामाजिक जीवन का वर्णन कीजिए।
2. सिन्धु सभ्यताओं की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन करिए ।
3. मेसोपोटामिया सभ्यता की प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. मिस्र की सभ्यता के सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक जीवन पर प्रकाश डालिए।
5. चीन के सभ्यता की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन करिए।

वैदिक कालः पूर्व एवं उत्तर वैदिक काल

वैदिक काल (1500 ई0पू0 के आस–पास)

सिन्धु सभ्यता के पतन के पश्चात् सैंधव प्रदेश में आर्यों की एक नवीन सभ्यता का विकास हुआ, जिसे इतिहास में वैदिक काल के नाम से जाना जाता है। वैदिक काल अथवा वैदिक सभ्यता के विवेचना का आधार वेद हैं। वैदिक सभ्यता के निर्माता आर्य थे। आर्यों को विश्व की सर्वश्रेष्ठ एवं सुसंस्कृत जाति माना जाता है।

प्रशिक्षुओं के लिए यह जानना आवश्यक है कि आर्यों ने जिन नैतिक मूल्यों की स्थापना की, वे आज भी जीवन के आदर्श माने जाते हैं। आर्यों की श्रेष्ठता का अनुमान इसी बात से लगाया जाता है कि विश्व की प्रत्येक जाति अपने को आर्यों का वंशज बताती है और इस बात का दावा करती है कि उन्हीं का देश आर्यों का निवास स्थान था।

प्रशिक्षु आर्यों के बारे में चर्चा करने के बाद स्वयं भी बताएं कि –

- *आर्यों का रंग गोरा, कद लम्बा, ललाट उन्नत, नाक लम्बी तथा शरीर हृष्ट–पुष्ट था।*
- *आर्यों का प्रमुख पेशा कृषि एवं पशु पालन था तथा इनकी प्रमुख आदत भ्रमणशील जीवन व्यतीत करना था।*

आर्यों के मूल निवास स्थान के विषय में विद्वान एकमत नहीं है। आर्यों का मूल निवास स्थान कहाँ था, और वे भारत में किस ओर से प्रविष्ट हुए? यह एक अत्यन्त जटिल प्रश्न है जिसका सही उत्तर देना कठिन अवश्य ही है। इस सम्बन्ध में स्मिथ महोदय का कथन उचित ही प्रतीत होता है– ''आर्यों के मूल स्थान अथवा निवास स्थान की विवेचना जान बूझकर नहीं की गई है, क्योंकि इस विषय पर कोई धारणा प्रतिस्थापित नहीं हो सकी है।''

अनेक विद्वान एवं इतिहासकार निरन्तर प्रयासरत हैं। अपनी तर्कपूर्ण बुद्धि के बल पर भाषा विज्ञान, कल्पना शक्ति, शब्दार्थ भाषा विज्ञान, पुरातत्वों का निरीक्षण तथा जातीय विशेषताओं का गहन अध्ययन करने के पश्चात् विद्वानों ने आर्यों के मूल निवास के सम्बन्ध में निम्नलिखित सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है–

1. यूरोपीय सिद्धान्त– यूरोपीय सिद्धान्त का प्रतिपादन सन् 1786 ई0 में सर विलियम जोन्स ने किया। उन्होंने इस तथ्य की खोज की कि भारतीय आर्यों की संस्कृत भाषा के अनेक शब्द यूनानी आर्यों की भाषा से मिलते जुलते हैं।

2. मध्य एशिया का सिद्धान्त– इस सिद्धान्त के प्रमुख प्रतिपादक जर्मनी के प्रसिद्ध विद्वान प्रोफेसर मैक्समूलर हैं। मैक्समूलर ने वेदों तथा अवेस्ता को प्रामाणिक आधार माना है। इन ग्रन्थों के अध्ययन से पता चलता है कि भारतीय तथा ईरानियों ने बहुत दिनों तक साथ–साथ निवास किया था। अतः निश्चित रूप से भारत तथा ईरान के निकट ही कोई स्थान आर्यों का आदि देश रहा होगा तथा यहीं से इनकी एक शाखा ईरान को, दूसरी भारत को तथा तीसरी यूरोप को प्रस्थान कर गई होगी। इन ग्रन्थों ने यह भी प्रकाश डाला है कि प्राचीन आर्य पशुपालन एवं कृषि कार्य करते थे तथा सवारी के लिए घोड़ों का प्रयोग करते थे। ये पीपल के वृक्ष की पूजा करते थे। मध्य एशिया में यह सभी चीजें बहुतायत में पाई जाती हैं अतः मध्य एशिया ही आर्यों का निवास स्थान रहा होगा।

3. आर्कटिक प्रदेश का सिद्धान्त– इस सिद्धान्त के प्रतिपादक लोकमान्य बालगंगाधर तिलक हैं। उन्होंने आर्कटिक प्रदेश (उत्तरी ध्रुव प्रदेश) को आर्यो का मूल स्थान बताया है। अपने मत के पक्ष में ऋग्वेद तथा अवेस्ता ग्रन्थ को ही प्रमाण

के रूप में प्रस्तुत किया है। इस सिद्धान्त के पक्ष में एक तथ्य यह भी है कि महाभारत में सुमेरू पर्वत का उल्लेख आया है जहाँ एक वर्ष की अर्धरात्रि होती है। ऐसी रात्रि केवल ध्रुव प्रदेश में ही होती थी। अवेस्ता में भी एक भयंकर तुषारापात का उल्लेख किया गया है जो इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि उत्तरी ध्रुव में तुषारापात के पश्चात् आर्यों ने इस स्थल को छोड़ दिया होगा।

4. भारतीय सिद्धान्त– डॉ0 सम्पूर्णानन्द तथा श्री अविनाश चन्द्र दास के अनुसार सप्त सैंधव प्रदेश (सिन्धु प्रदेश) आर्यों का मूल निवास स्थान था। इन विद्वानों के तर्क दिया है कि ऋग्वेद में जिन पशु–पक्षियों, पेड़ों, वनस्पति तथा जलवायु का वर्णन किया गया है, ये सभी वस्तुएं एवं जलवायु सैंधव प्रदेश में ही विद्यमान थीं। इनमें डॉ0 झा के अनुसार आर्यों का मूल स्थान 'ब्रहमी देश' (भारत) था।

5. तिब्बत प्रदेश का सिद्धान्त– स्वामी दयानन्द सरस्वती ने तिब्बत को आर्यों का आदि देश कहा है। उनका मत है कि ऋग्वेद की भौगोलिक परिस्थितियों और तिब्बत की भौगोलिक परिस्थितियों में अत्यधिक साम्य देखने को मिलता है। प्रशिक्षु यह भी जानें कि प्रो0 मैक्समूलर द्वारा प्रतिपादित मध्य एशिया के सिद्धान्त को अधिकांश विद्वानों ने स्वीकार किया है। आर्यों की सभ्यता एवं संस्कृति का अध्ययन वेदों के आधार पर किया जाता है, अतः इस सभ्यता एवं संस्कृति को वैदिक सभ्यता तथा संस्कृति के नाम से जाना जाता है।

वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है, यथा–

1. ऋग्वैदिक अथवा पूर्व वैदिक कालीन सभ्यता
2. वैदिक अथवा उत्तरवैदिक कालीन सभ्यता

> *इन्हें भी जानें–*
> ऋग्वैदिक काल– जिस काल में ऋग्वेद की रचना हुई उसे ऋग्वैदिक काल कहा गया।
> वैदिक काल– जिस काल में ऋग्वेद के अतिरिक्त अन्य तीन वेद–यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद एवं ब्राह्मण, उपनिषद एवं आरण्यक ग्रन्थों की रचना हुई, उसे वैदिक काल कहा गया।

ऋग्वैदिक अथवा पूर्व वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति

इस काल में आर्यों ने भ्रमणकारी जीवन का परित्याग कर सामाजिक जीवन का विकास कर लिया था। अब उनके जीवन में स्थपित्व आ गया था। समाज का संगठन हो गया था।

> *प्रशिक्षु निम्न बिन्दु पर चर्चा करें–*
> - परिवार
> - विवाह
> - स्त्रियों की स्थिति
> - वर्ण व्यवस्था
> - भोजन
> - वस्त्राभूषण
> - सौन्दर्य प्रसाधन
> - आमोद–प्रमोद
> - शिक्षा

प्रशिक्षु सामाजिक संगठन की प्रमुख विशेषताओं पर चर्चा करने के बाद स्वयं भी स्पष्ट करें यथा–

(i) परिवार– परिवार पूर्व वैदिक कालीन समाज का मुख्य आधार था। परिवार पितृसत्तात्मक होते थे। परिवार संयुक्त प्रणाली पर गठित होते थे। कई पीढ़ियों के सदस्य एक ही घर में सम्मिलित रूप से निवास करते थे। परिवार का सबसे वृद्ध व्यक्ति परिवार का मुखिया होता था। अनेक परिवार के समूह को 'विश' तथा कबीले के लोगों को 'जन' कहा जाता था।

(ii) विवाह– वैदिक काल में विवाह एक पवित्र संस्कार माना जाता था। साधारणतः कन्या अपने पिता की आज्ञानुसार विवाह करती थीं, परन्तु साथ ही उन्हें अपने पति को चुनने के लिए स्वतंत्रता भी थी। साधारण वर्ग में एक पत्नी तथा उच्च एवं धनी वर्गों में बहुपत्नी प्रथा

प्रचलित थी। इस काल में बाल–विवाह का उल्लेख नहीं मिलता है। 'पाणिगृहण' और 'अग्नि परिक्रमा' ये दो विवाह के प्रमुख संस्कार थे।

(iii) स्त्रियों की स्थिति– समाज पितृसत्तात्मक था परन्तु इतना होने पर भी स्त्रियों को समाज में सम्मानीय स्थान प्राप्त था। स्त्रियों की शिक्षा की समुचित व्यवस्था थी। विदूषी महिलाओं को समाज में अति उच्च स्थान प्राप्त था। घोषा, अपाला आदि इस काल की विदूषी महिलाएं थीं। पत्नी धार्मिक आयोजनों एवं अनुष्ठानों में भाग लेती थी, उनके बिना धार्मिक अनुष्ठान अधूरा समझा जाता था। स्त्रियाँ पर्दा नहीं करती थीं।

(iv) वर्ण व्यवस्था– पूर्व वैदिक काल में चार वर्ण अस्तित्व में थे, यथा –

- ब्राह्मण
- क्षत्रिय
- वैश्य
- शुद्र

इन्हें भी जाने–
- ब्राह्मण– इनकी उत्पत्ति आदिपुरूष के मुख से हुई
- क्षत्रिय– आदिपुरूष की भुजाओं से हुई।
- वैश्य– आदिपुरूष की जंघाओं से हुई।
- शुद्र– आदिपुरूष के चरणों से हुई।

(v) भोजन– पूर्व वैदिक काल में आर्य शाकाहारी एवं माँसाहारी दोनों प्रकार का भोजन करते थे। शाकाहारी भोजन में आर्य गेहूँ, जौ आदि की रोटियाँ बनाकर खाते थे। दूध, घी, मक्खन आदि का प्रयोग बहुतायत में किया जाता था। विभिन्न प्रकार के फल एवं सब्जियों का भी प्रयोग होता था। भेड़ तथा बकरी का मांस खाया जाता था। सोमरस इनका प्रिय पद्धार्थ था, जिसका उपयोग धार्मिक अवसरों पर किया जाता था।

(vi) वस्त्राभूषण– साधारणः तीन प्रकार के वस्त्र धारण करते थे –

1. नीवी
2. वास
3. अधिवास

इन्हें भी जाने–
- नीवी–कटि भाग में पहने जाना वाला वस्त्र
- वास –चादर की भांति ओढ़ा जाने वाला वस्त्र
- अधिवास–ऊपर से ढँकने वाला वस्त्र

'उत्तरीय' वस्त्र को स्त्री एवं पुरुष दोनों ही धारण करते थे। सिर पर पगड़ी बाँधी जाती थी। वस्त्रों का निर्माण सूत, ऊन एवं चमड़े के द्वारा होता था। स्त्रियाँ धोती और अंगरखा पहनती थीं। ये लोग रंगीन वस्त्रों का प्रयोग करते थे, जिन पर कसीदा किया जाता था।

सोने के कर्णफूल, दस्तबन्द, हार, पायजेब आदि आर्यों के कुछ प्रमुख आभूषण थे। मणियों का भी प्रयोग किया जाता था।

(vii) आमोद–प्रमोद– आमोद–प्रमोद के प्रमुख साधन–रथदौड़, नृत्य, संगीत, घुड़दौड़ एवं शिकार थे। उत्सवों के अवसर पर स्त्री एवं पुरूष दोनों ही नृत्य और संगीत में भाग लेते थे। वीणा, मंजीर, बांसुरी, ढोल, शंख आदि वाद्य यन्त्रों के प्रयोग से ये भलीभाँति परिचित थे।

(viii) शिक्षा– स्त्री एवं पुरूष दोनों के लिए शिक्षा की समुचित व्यवस्था थी। शिक्षा कार्य गुरूकुल में किया जाता था। शिक्षा मौखिक रूप से दी जाती थी। स्मरण शक्ति पर विशेष बल दिया जाता था। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य व्यक्तित्व का विकास एवं चरित्र निर्माण करना था।

पूर्व वैदिक कालीन राजनैतिक दशा

इस काल में राजतंत्रीय राजव्यवस्था अपने अस्तित्व में थी, लेकिन वह कोई प्रचलित व्यवस्था नहीं था। उस समय की राजनैतिक दशा का ज्ञान निम्नलिखित शीर्षकों द्वारा किया जा सकता है–

(i) परिवार– परिवार' सबसे छोटी इकाई थी, जिसे 'कुल' कहा जाता था और 'कुल' के नेता को 'कुलप'। इस काल में संयुक्त परिवार प्रथा का प्रचलन था।

(ii) ग्राम– अनेक परिवारों को मिलाकर एक ग्राम बनाया जाता था। परिवार के प्रधान 'कुलप' के समान ही ग्राम के प्रधान को 'ग्रामणी' कहा जाता था। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण पद था क्योंकि 'ग्रामणी' ही ग्राम का एकमात्र प्रशासनिक अधिकारी होता था।

(iii) विश– अनेक ग्रामों को मिलाकर एक 'विश' बनाया जाता था। 'विश' के सर्वोच्च अधिकारी को 'विशपति' कहा जाता था।

(iv) जन– अनेक विशों को मिलाकर 'जन' का निर्माण होता था। 'जन' के सर्वोच्च उपधिकारी को 'रक्षक' कहा जाता था।

(v) राष्ट्र– देश अथवा राज्य को 'राष्ट्र' कहा जाता था।

पूर्व वैदिक कालीन

शासन व्यवस्था– पूर्व वैदिक कालीन शासन व्यवस्था अत्यन्त उच्चकोटि की थी। शासन व्यवस्था का संचालन राजा, पुरोहित, सेनानी या समिति द्वारा होता था। 'राजा' अथवा 'राजन' राज्य अथवा राष्ट्र का सर्वोच्च अधिकारी होता थां राजा का पद साधारणतः वंशानुगत होता था अर्थात–राजा का ज्येष्ठ पुत्र ही राजा का उत्तराधिकारी होता था। लेकिन यदि ज्येष्ठ पुत्र अयोग्य है तो उसके स्थान पर अन्य योग्य राजपुत्र को राजा नियुक्त किया जाता था। राजा का प्रथम कर्तव्य प्रजा पालन था। राजा में कुछ गुणों का होना अत्यन्त आवश्यक था यथा– राजा को इन्द्र के समान वीर, सूर्य के समान तेजस्वी तथा वरूण के समान दानी होना चाहिए। राजा ईश्वर का प्रतिनिधि समझा जाता था।

पूर्व वैदिक कालीन शासन व्यवस्था
1. राजा
2. पुरोहित एवं सेनानी
3. सभा एवं समिति
4. राज्य की आय के साधन
5. न्याय व्यवस्था

पुरोहित एक शिक्षक, दार्शनिक, पथ–प्रदर्शक एवं मित्र के रूप में राजा का मुख्य साथी होता था। युद्ध में वह राजा के साथ जाता था। धार्मिक कार्यकलापों के साथ ही राजनैतिक कार्यों में भी पुरोहित बढ़ चढ़कर हिस्सा लेता था।

सेनानी सेना का सर्वोच्च अधिकारी होता था। सेनानी की नियुक्ति राजा के द्वारा ही की जाती थी। सेनानी का मुख्य कार्य अपने राज्य की वाहय आक्रमण से सुरक्षा करना तथा अन्य राज्यों पर आक्रमण करना होता था।

सभा एवं समिति पूर्व वैदिक कालीन राजाओं के अधिकारों पर अंकुश लगाने के लिए दो संस्थाएं थी। सभा छोटी संख्या थी, जिसमें राजा के निकट सम्बन्धी होते थे। सभा में उच्चकोटि के राजनैतिक विषयों पर विचार–विमर्श होता था। समिति बड़ी संख्या थी, जिसके सदस्य जन साधारण के होते थे। समिति का कार्य युद्ध सन्धि, आय–व्यय आदि मामलों पर निर्णय लेना तथा राजा के निर्वाचन में भाग लेना था।

राज्य की आय के प्रमुख साधन भूमिकर तथा व्यापार कर थे। प्रजा से वसूल किए जाने वाले कर को 'बलि' कहा जाता था। 'कर' राज्य की आय का 16वां भाग था। कर अन्य और पशुओं के रूप में लिया जाता था। कर को 'भाग दुध' नामक अधिकारी एकत्र करता था।

न्याय व्यवस्था का सर्वोच्च अधिकारी राजा ही होता था। राजा अन्य कर्मचारियों के सहयोग से न्याय व्यवस्था का संचालन करता था। न्याय सम्बन्धी अधिकार 'अध्यक्ष' नामक अधिकारी को राजा ने प्रदान किए थे। गाँव के न्याय सम्बन्धी कार्य 'ग्राम्य जीवन' नामक अधिकारी करता था। गाँव के छोटे झगड़ों का निपटारा ग्राम पंचायतें करतीं थीं।

प्रशिक्षु चर्चा करते हुए शासन व्यवस्था को इस प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं।

पूर्व वैदिक कालीन आर्थिक व्यवस्था

प्रशिक्षु पूर्व वैदिक कालीन आर्थिक व्यवस्था की जानकारी निम्नलिखित के द्वारा दे सकते हैं यथा –

(i) पशु पालन– पूर्व वैदिक आर्यों का मुख्य धन्धा पशुपालन था। मुख्य पालतू पशु थे– गाय, भैंस, भेड़, बकरी, ऊँट, हाथी, घोड़े, बैल, कुत्ता, गधा, सुअर आदि । इनमें गाय पूज्यनीय मानी जाती थी। पशुओं की निरोग्यता एवं सुरक्षा के लिए प्रार्थना की जाती थी। वास्तव में आर्यों के पशु ही धन थे।

(ii) कृषि– पूर्व वैदिक कालीन आर्यों का दूसरा प्रमुख धन्धा कृषि था। कृषि में गेहूँ, जौ, चावल, चना, धान, उड़द, गन्ना, मूँग, तिल, फल, सब्जी आदि प्रमुख थे। वर्षा, कुँओं तथा नहरों का जल सिंचाई के लिए प्रयोग किया जाता था। कृषि के औजार लोहे एवं लकड़ी के बने होते थे। कृषि के लिए बैल, छोटे एवं बड़े हलों का प्रयोग किया जाता था। कृषि में वर्ष में दो फसलें प्राप्त की जाती थीं।

(iii) आखेट– पूर्व वैदिक आर्य जीवन निर्वाह और पशुओं की रक्षा हेतु आखेट किया करते थे। आखेट के लिए धनुष–बाण का ही प्रयोग किया जाता था।

(iv) उद्योग–धन्धें– आर्यों का प्रमुख उद्योग कपड़ा बुनना था। स्त्रियाँ बुनाई का कार्य करती थी। इसके अतिरिक्त स्वर्णकार, शिकारी, महुए, धोबी, नाई, जुलाहे, बढ़ई, कसाई, चटाई बनाने वाले, टोकरी बनाने वाले, कुम्हार, नट एवं गायक आदि अपने–अपने व्यवसाय में लगे हुए थे।

(v) व्यापार– पूर्व वैदिक काल में आन्तरिक एवं वैदेशिक दोनों ही प्रकार के व्यापार का उल्लेख मिलता है। व्यापार करने वालों को 'पाणि' कहा जाता था। विदेशी व्यापार ज्यादातर समुद्री मार्ग एवं देशी व्यापार थल मार्ग द्वारा होता था। व्यापार का माध्यम वस्तु विनिमय था, परन्तु व्यापार में निष्क, कृष्णल तथा शतमान आदि स्वर्ण मुद्राओं का भी प्रयोग होने लगा था। ब्याज पर ऋण देना भी एक प्रकार का व्यापार था।

पूर्व वैदिक कालीन धार्मिक व्यवस्था :– पूर्व वैदिक कालीन यज्ञों में राजा एवं प्रजा दोनों ही भाग लेते थे। यज्ञों में विभिन्न श्रेणी के पुरोहित होते थे। यज्ञों का स्वरूप एवं पद्धति अत्यन्त जटिल थी। कभी–कभी यज्ञ में पशुबलि भी दी जाती थी।

पूर्व वैदिक कालीन धार्मिक व्यवस्था – 1. यज्ञ 2. तप 3. देवता (i) स्वर्ग के देवता (ii) वायुमण्डलीय देवता (iii) पार्थिव देवता 4. धार्मिक स्वरूप

इस काल में 'तप' अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गए थे। तप की प्रमुख क्रियाएं –एक ही मुद्रा में महीनों तक खड़े रहना, अल्प भोजन गृहण कर जीवन–यापन करना, नुकीलें काँटों पर पड़े रहना आदि।

पूर्व वैदिक कालीन आर्य देवताओं को प्राकृतिक शक्तियों के रूप में पूजते थे। इन देवताओं को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है यथा –

(i) स्वर्ग के देवता– वरूण, सूर्य सावित्री, अदिति, ऊषा आदि थे।

(ii) वायुमण्डलीय देवता– इन्द्र, रूद्र, मरूत, वायु, एवं वात आदि थे।

(iii) पार्थिव देवता– पृथ्वी, अग्नि, सोम आदि थे।

पूर्व वैदिक आर्यों का धार्मिक स्वरूप अत्यन्त उच्चकोटि का था। यज्ञ एवं पशु बलि देने की प्रथा थी। प्रकृति के तत्वों को मूर्त रूप प्रदान कर उनकी देवता के रूप में उपासना की जाती थी।

प्रशिक्षु पूर्व वैदिक कालीन सामाजिक, शासन व्यवस्था, राजनीतिक व्यवस्था, आर्थिक एवं धार्मिक व्यवस्था के बारे में जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। आइए, अब हम उत्तर वैदिक कालीन सभ्यता एवं संस्कृति के बारे में भी जानें–

उत्तर वैदिक काल

लगभग 1000 ई0पू0 से 700 ई0पू0 का काल उत्तर वैदिक काल माना गया है। यह काल आर्य सभ्यता के विकास का युग था। प्रशिक्षु अब इस काल की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक स्थिति को भी जानें कि पूर्व वैदिक कालीन व्यवस्था से उत्तर वैदिक कालीन व्यवस्था में कितना परिवर्तन आ चुका था।

उत्तर वैदिक कालीन सामाजिक दशा

1. परिवार– पूर्व वैदिक काल की तरह उत्तर वैदिक कालीन समाज भी पितृ प्रधान था। समाज में संयुक्त परिवार की प्रथा की प्रचलन था। अथर्ववेद में परिवार की शान्ति के लिए प्रार्थनाओं का वर्णन मिलता है।

2. विवाह– उत्तर वैदिक काल में विवाह को एक पवित्र कार्य माना जाता था। विवाह स्त्री–पुरूष दोनों के लिए अनिवार्य था। अन्तर्जातीय एवं सजातीय दोनों प्रकार के विवाहों का प्रचलन था। इस काल में बाल–विवाह, विधवा पुनर्विवाह, बहुविवाह का भी प्रचलन था।

3. स्त्रियों की स्थिति– उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों के सम्मान एवं प्रतिष्ठा में कमी आई और उनकी स्थिति शोचनीय हो गई। उन्हें उपनयन संस्कार से वंचित कर दिया गया। कन्या के जन्म को अशुभ माना जाना लगा। लेकिन इस

काल की प्रमुख विदुषी महिलाओं में गार्गी और मैत्रेयी का उल्लेख मिलता है। स्त्रियों की शिक्षा का प्रबन्ध था। वह संगीत एवं नृत्य में प्रवीण होती थीं।

4. वर्ण व्यवस्था– इस काल में समाज में चार वर्ण–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र थे। वर्ण व्यवस्था धीरे–धीरे जटिल हो रही थी। वर्ण जन्म पर आधारित न होकर पैतृक हो गया था।

5. भोजन– उत्तर वैदिक काल में दूध, दही, घी, चावल, जौ, गेहूँ एवं सरसों आदि का प्रयोग भोजन के रूप में किया जाता था। इस काल में माँस खाना बुरा समझा जाता था। इस काल के आर्य पेय पदार्थ में सुरा का प्रयोग करते थे।

6. वस्त्राभूषण – उत्तर वैदिक काल में वस्त्र पहले की अपेक्षा कुछ श्रेष्ठ हो गए थे। वस्त्र मुख्यतः तीन प्रकार के थे – *(i)* नीवी (अन्दर पहनने वाला वस्त्र) *(ii)* वास (नीचे पहनने वाला वस्त्र) *(iii)* अधिवास (ऊपर पहननेवाला वस्त्र)। इसके अलावा स्त्री एवु पुरूष दोनों ही पगड़ी पहनते थे। ऊनी एवं सूती वस्त्र का प्रयोग किया जाता था। स्त्री पुरूष दोनों ही सोने चाँदी के बहुमूल्य जवाहरातों के आभूषण भी पहनते थे।

7. मनोरंजन– उत्तर वैदिक कालीन आर्यों के मनोरंजन के प्रमुख साधन नृत्य एवं संगीत थे। संगीत में वादन एवं गायन दोनों प्रकार का प्रचलन था। इनके प्रमुख वाद्य यन्त्र–ढोल, बाँसुरी आदि थे। इसके अतिरिक्त रथ दौड़, घुड़दौड़, जुआ आदि मनोरंजन के प्रमुख साधन थे।

8. शिक्षा– इस काल में शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य जीवन को समृद्ध एवं सुखमय बनाना था। शिक्षा गुरूकुल में प्रदान की जाती थी। शिक्षा मौखिक थी। शारीरिक एवं मानसिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था। विद्यार्थियों को वेद, उपनिषद, व्याकरण तथा व्यावहारिक ज्ञान की शिक्षा प्रदान की जाती थी। इस काल में शिक्षा के अनेक महत्वपूर्ण केन्द्र विकसित हो चुके थे।

9. आश्रम व्यवस्था– उत्तर वैदिक कालीन आश्रम व्यवस्था समाज की श्रेष्ठ व्यवस्था थी। मनुष्य के जीवन की आयु सौ वर्ष मानकर चार आश्रम निर्धारण किए गए थे, यथा –ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास। आश्रम व्यवस्था का पालन करना प्रत्येक स्त्री पुरूष का सामाजिक एवं नैतिक कर्तव्य था।

इन्हें भी जानें

- ब्रह्मचर्य आश्रम में व्यक्ति को विद्या अध्ययन करना था।
- गृहस्थ आश्रम में विवाह कर सन्तान उत्पन्न करना था।
- वानप्रस्थ आश्रम में वन की ओर गमन करना था।
- सन्यास आश्रम में सांसारिक मोह माया को त्यागना होता था।

उत्तर वैदिक कालीन राजनीतिक दशा–

अब प्रशिक्षु उत्तर वैदिक कालीन राजनीतिक व्यवस्था एवं संस्थाओं में व्यापक जो परिवर्तन हुए थे, उन्हें भी जानें –

1. राज्य का स्वरूप– इस काल में साम्राज्यवाद की भावना का विकास होने के कारण राजतन्त्रों का उदय हुआ। 'जनराज्यों' के स्थान पर 'प्रादेशिक राज्यों' की स्थापना हुई। इस काल के प्रमुख राज्य– पांचाल, कुरू, मगध, कलिंग, अवन्ति, विदर्भ आदि थे। राजा राज्य की स्थापना के बाद अश्वमेघ, राजसूय, वाजपेय यज्ञ कराते थे।

2. राजा का अधिकार– उत्तर वैदिक काल में राजा के दैवी अधिकारों में वृद्धि हो गई थीं इसका मुख्य कारण अनेक विशाल साम्राज्यों का उदय होना था। राजा का पद पैतृक था, परन्तु कभी–कभी राजा का निर्वाचन भी किया जाता था। राजाओं के लिए 'राजधिराज', 'अधिराज', 'एकराज', 'सम्राट' आदि शब्दों का प्रयोग किया जाने लगा था जो राजा की बढ़ती हुई प्रतिष्ठा और गौरव का प्रतीक था। राजा का प्रमुख कर्तव्य युद्ध क्षेत्र में सेना का नेतृत्व करना और प्रजा को निष्पक्ष न्याय प्रदान करना था।

3. राज्य के पदाधिकारी– राजा ने अनेक नए प्रशासनिक पदों का सृजन किया। इस काल के राज्य के अधिकारियों ने 'रात्निन', 'रत्नी' अथवा 'वीर' कहा जाता था। राजा राज्य अधिकारियों की सहायता से प्रशासन सुचारू रूप से चलाता था। इनमें प्रमुख राज्य अधिकारी थे – संग्रहीत, अक्षवाय, भागादुध, सूत, क्षत्री, पालागल, तक्षण, रक्षकार, विर्कतन, गोविकर्तन, स्थापति।

4. सभा तथा समिति– उत्तर वैदिक काल में राजा के अधिकारों पर अंकुश लगाने के लिए सभा तथा समिति नामक दो संस्थाएं थीं परन्तु इनका महत्व कुछ कम हो गया था। सभा छोटी थी इसमें राजा के निकट सम्बन्धी व्यक्ति होते थे। इसमें (सभा) उच्चकोटि के राजनीतिक विषयों पर विचार–विमर्श होता था। समिति बड़ी संस्था थी। जनाधारण इसके सदस्य होते थे। समिति का कार्ययुद्ध, सन्धि, आय–व्यय आदि मामलों पर निर्णय लेना था। यह राजा के निर्वाचन में भी भाग लेती थी।

इन्हें भी जानें :–

- संग्रहीत = (कोषाध्यक्ष)
- अक्षवाय = (जुए का अध्यक्ष)
- भागादुध = (कर एकत्र करने वाला)
- सूत = (राज्य का वृतान्त रखने वाला)
- क्षत्री = (खानसामा/राज्य परिवार का निरीक्षक)
- पालागल = (संदेश वाहक)
- तक्षण = (बढ़ई)
- रथकार = (रथ निर्माता)
- विर्कतन = (राजा के साथ शतरंज खेलने वाला)
- गोविकर्तन = (वन निरीक्षक)
- स्थापति = (मुख्य न्यायाधीश)

5. न्याय व्यवस्था– न्याय व्यवस्था का सर्वोच्च अधिकारी राजा होता था। न्याय व्यवस्था के संचालन हेतु कुछ अन्य पदाधिकारी होते थे जो सहयोगी हेते थे। न्यायाधीश को 'स्थापति' कहा जाता था। गाँव के साधारण अपराधों का निर्णय 'ग्राम्यवादिन' अधिकारी द्वारा अपनी सभा में किया जाता था। छोटे मामलों का निर्णय पंचायतों द्वारा किया जाता था। कुछ विशिष्ट मामलों पर निर्णय राजा 'सभा' की सहायता से करता था।

उत्तर वैदिक कालीन आर्थिक दशा

उत्तर वैदिक काल में आर्थिक दशा अच्छी थी, तथा निम्नलिखित क्षेत्रों में निरन्तर प्रगति हो रही थी, यथा –

1. कृषि– इस काल में लोगों का प्रमुख व्यवसाय कृषि था। इस काल में बीज, फसल, खेती करने की नई तकनीकों का विकास हुआ। अच्छी और ज्यादा मात्रा में फसल उगाने के लिए खाद का अधिक प्रयोग किया जाने लगा। चावल, गेहूँ, जौ आदि इस काल की प्रमुख फसलें थीं। सिंचाई की व्यवस्था कृषि हेतु उत्तम थी। सिंचाई के कृत्रिम साधनों का अभाव नहीं था।

2. पशु पालन– उत्तर वैदिक काल के लोगों के प्रमुख पशु थे –गाय, बैल, बकरी, भेड़ कुत्ता, घोड़ा, गधा आदि। गाय का इतना अधिक महत्व था कि जिसके पास ज्यादा गाय होती थी उसका उतना ही अधिक वैभव माना जाता था। राजा जब किसी व्यक्ति को सम्मानित करते थे तो उन्हें गाय ही प्रदान किया करते थे।

3. उद्योग धन्धें– इस काल में अनेक नवीन उद्योग प्रचलन में थे। वस्त्र एवं धातु उद्योग का विकास इस काल में अत्यधिक तीव्र गति से हो रहा था। सोना, चाँदी, सीसा, टिन, ताँबा, लोहा आदि धातुओं का प्रयोग बहुत अधिक होने लगा था। इन धातुओं से अस्त्रशस्त्र, औजार, बर्तन एवं आभूषण आदि बनाये जाते थे। इसके अतिरिक्त लोहार, चर्मकार, रथकार, महुए, कुम्हार एवं नर्तक आदि के व्यवसाय भी उन्नत थे।

4. वाणिज्य एवं व्यापार– इस काल में आन्तरिक एवं वैदेशिक व्यवसाय प्रगति पर था। विदेशी व्यापार समुद्र मार्ग से होता था। आंतरिक व्यापार हेतु यातायात के साधनों का प्रयोग किया जाता था। साधारणतः व्यापार विनिमय प्रणाली के द्वारा ही होता था। गाय विनिमय का एक माध्यम थी परन्तु मुद्रा का प्रचलन भी बढ़ने लगा था। इस काल में 'निष्क', 'शतमान' , 'कृष्णल' आदि मुद्राओं के प्रयोग का वर्णन मिलता हैं। बाँटों का प्रयोग तौल के लिए किया जाता था।

उत्तर वैदिक कालीन धार्मिक दशा– उत्तर वैदिक कालीन धार्मिक क्षेत्रों में बहुत सारे परिवर्तन हुए, जिसके कारण धार्मिक दशा अत्यन्त जटिल हो गई। प्रशिक्षु इन्हें भी जानें –

1. यज्ञों का महत्व– उत्तर वैदिक काल में यज्ञों का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया था। यज्ञीय विधि विधान की विस्तृत जानकारी गृह सूत्र और श्रोत सूत्र से प्राप्त होती है। यज्ञ प्रक्रिया अत्यन्त जटिल हो गई थी। यज्ञ एक माह से लेकर एक वर्ष तक चलते थे। इस काल में यज्ञ ब्राह्मण ही करा सकते थे।

2. तप– उत्तर वैदिक काल में तप का महत्व बहुत बढ़ गया था। उपनिषद में कहा गया– 'तप ही ब्रह्म हैं'। तथा तप ज्ञान प्राप्त करने का एक साधन है। बिना तप के ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती। तप से अलौकिक शान्ति एवं स्वर्ग की प्राप्ति होती है। तप की प्रमुख विधियाँ– नुकीले काँटों पर खड़े रहना, अल्प भोजन ग्रहण कर जीवन यापन करना, महीनों एक ही मुद्रा में खड़े रहना, गर्मियों में धूप एवं सर्दियों में ठण्डे में खड़े रहना था।

धार्मिक दशा–

- यज्ञों का महत्व
- तप
- दर्शन
- नवीन देवताओं का उदय
- धार्मिक स्वरूप

3. दर्शन– इस काल में दार्शनिक विचार परिवर्तन भी हुए। आत्मा और ब्रह्म की एकता पर विशेष जोर दिया गया। कर्म का महत्व और अधिक बढ़ गया। सत् ज्ञान के लिए कर्म आवश्यक समझा गया। ब्रह्म को सर्वव्यापक, अन्तर्यामी एवं सर्वशक्तिमान स्वीकार किया गया। आत्मा–परमात्मा, माया–मोक्ष, स्वर्ग–नरक, कर्म सिद्धान्त का प्रतिपादन इसी काल में हुआ।

4. नवीन देवताओं का उदय– इस काल में त्रिदेव अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश का महत्व बढ़ गया था। सृष्टि के रचयिता 'प्रजापति' को उच्च स्थान प्राप्त हो गया था। विष्णु को प्रधान यज्ञ पुरूष माना गया। रूद्र (शिव) की पूजा अब शिवजी, पशुपति एवं महादेव के रूप में की जाने लगी। इसके अतिरिक्त नाग, यक्ष, गन्धर्व आदि देवों की भी पूजा की जाने लगी।

5. धार्मिक स्वरूप– उत्तर वैदिक काल में धार्मिक स्वरूप अत्यन्त जटिल हो गया था। यज्ञ में 17 पुरोहितों की आवश्यकता होती थी। यज्ञ जटिल पद्धति एवं दीर्घकालिक हो गए थे, जिससे एक गृहस्थ के लिए इनका आयोजन करना कठिन कार्य हो गया था।

उत्तर वैदिक कालीन साहित्य

उत्तर वैदिक कालीन साहित्य को हम निम्नलिखित 10 भागों में विभक्त कर आसानी से जान सकते हैं। प्रशिक्षु ध्यान दें– ये 10 भाग निम्नवत् इस प्रकार हैं–

1. वेद– वेदों की संख्या चार है, यथा– ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद।

   (i) ऋग्वेद– यह आर्यों का प्राचीनतम एवं पवित्रतम वैदिक साहित्य का प्रमुख आधार है। इसमें देवताओं की गीतात्मक स्तुतियों का उल्लेख मिलता है। इसमें 10 मण्डल, 1028 सूक्त, 10580 ऋचाएं हैं। इस ग्रन्थ से तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थिति का ज्ञान पता चलता है।

   (ii) यजुर्वेद– इसमें यज्ञ सम्बन्धी विधि–विधानों का वर्णन मिलता है। यह वेद गद्यरूप में हैं। इसके दो भाग –शुक्ल यजुर्वेद और कृष्ण यजुर्वेद हैं। शुक्ल यजुर्वेद में केवल श्लोक पढ़ने को मिलते हैं जबकि कृष्ण यजुर्वेद में श्लोकों के साथ–साथ उनकी व्याख्या भी मिलती है।

   (iii) सामवेद–सामवेद में 1,549 अथवा 1,810 लगभग श्लोक हैं। यज्ञ के अवसर पर इन श्लोकों को गाया जाता था।

   (iv) अथर्ववेद– इसमें 20 मण्डल, 731 ऋचाएं एवं 5839 मंत्र हैं। इसमें भूतप्रेत को अपने वश में करने के मन्त्र दिए गए हैं। इसके भी 2 भाग हैं–पैपलाद, शौनक।

2. ब्राह्मण ग्रन्थ– ऋषियों द्वारा गद्य में वेदों की, की गई सरल व्याख्या को ब्राहमण ग्रन्थ कहा जाता है। प्रत्येक वेद के अपने ब्राह्मण ग्रन्थ है यथा–कौशीतकी तथा ऐतरेय ऋग्वेद के ब्राह्मण ग्रन्थ हैं। ऐतरेय ब्राह्मण ग्रन्थ में राज्याभिषेक, उत्सव, वैदिक काल के राजाओं का विवरण दिया गया है।

3. आरण्यक– इसमें आत्मा, मृत्यु एवं जीवन सम्बन्धी विषयों का वर्णन मिलता है। इनका पठन–पाठन वानप्रस्थी, मुनि तथा वनवासियों द्वारा वन में किया जाता था। इसलिए इन ग्रन्थों का नाम आरण्यक पड़ गया।

4. उपनिषद– उपनिषद में ब्रह्म एवं आत्मा सम्बन्धी विषयों पर उच्चकोटि का दार्शनिक चिन्तन कियागया है। इनकी संख्या लगभग 300 है। इनमें 12 उपनिषद प्रमुख हैं यथा– कौशीतकी, ऐतरेय, ईश, वृहदारण्यक (सभी ऋणवेद के) केन, छान्दोग्य (सामवेद), तथा तैतरेय, कंठ, श्वेताश्वर (कृष्ण यजुर्वेद)। मुण्डक, माण्डुका, प्रश्न उपनिषद (अथर्ववेद के) हैं। इनमें से कुछ गद्यात्मक एवं कुछ पद्यात्मक हैं।

5. वेदांग– वेदांग को वैदिक साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। ये वेदों की व्याख्या करते हैं। इनकी संख्या छः है, यथा–स्वर विज्ञान (शिक्षा) व्याकरण, छन्द, निरूक्त, ज्योतिष, कल्प (अनुष्ठान)।

6. सूत्र– वैदिक साहित्य में सूत्र एक विशेष प्रकार के साहित्य को कहते हैं। सूत्र संक्षिप्त लेख हैं। जिसमें कम से कम शब्दों में वाक्यों में अधिक से अधिक अर्थ व्यक्त किया गया। सूत्रों के श्रोत सूत्र में यज्ञों के विधि–विधान पर प्रकाश डाला गया है। गृहसूत्र में जन्म से लेकर मृत्यु तक व्यक्ति के कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है। धर्मसूत्र में चार वर्णों, आश्रम व्यवस्था एवं सामाजिक नियमों का उल्लेख है।

7. उपवेद– प्रत्येक वेद का एक–एक उपवेद है। ये उपवेद हैं– आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, शिल्पवेद।

इन्हें भी जानें–

- आयुर्वेद– ऋग्वेद का उपवेद है इसका सम्बन्ध रसायन शास्त्र, खनिज विज्ञान और शल्य चिकित्सा से है।
- धनुर्वेद– यजुर्वेद का उपवेद है। इसमें अस्त्र शस्त्र चलाने की विधियों का वर्णन है।
- गन्धर्ववेद– सामवेद का उपवेद है।
- शिल्पवेद–अथर्ववेद का उपवेद है।

8. पुराण– पुराणों की कुल संख्या अठारह है। इनमें प्राचीन आख्यान वंशावलिया आदि हैं। पुराणों में ब्रह्मा, मत्स्य, विष्णु, भागवत, अग्नि, वायु, मार्कण्डेय, गरूड़ पुराण ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। 18 पुराणों के अतिरिक्त अठारह उप–पुराण भी हैं।

9. रामायण– रामायण की रचना महर्षि बाल्मीकि द्वारा की गई। इसमें लगभग 6,000 श्लोक मूलतः थे। बाद में इनकी संख्या में वृद्धि की गई। इसकी रचना सम्भवतः ईसा पूर्व पांचवी सदी में शुरू हुई।

10. महाभारत– वेद व्यास ने महाभारत की रचना की। परन्तु यह अपने मूल रूप में नहीं है। इसमें भी बहुत सी दन्त कथाएं और प्रसंग जुड़ते गए हैं। शुरूआत में इसे 'जय संहिता' के नाम से जाना जाता था।

पुनरावृत्ति बिन्दु– प्रशिक्षु पुनरावृत्ति निम्नलिखित बिन्दुओं पर कराएं –

- आर्यों के मूल निवास स्थान सम्बन्धी सिद्धान्त हैं–यूरोपीय, मध्य एशिया, आर्कटिक, भारतीय एवं तिब्बत प्रदेश का।
- पूर्व वैदिक कालीन सामाजिक व्यवस्था की जानकारी–परिवार, विवाह, स्त्रियों की स्थिति, वर्ण व्यवस्था, भोजन, वस्त्राभूषण, शिक्षा, आमोद प्रमोद के साधनों द्वारा होती है।
- वैदिक कालीन शासन व्यवस्था की जानकारी–राजा, पुरोहित, सेनानी, सभा एवं समिति, राज्य की आय के साधन, न्याय व्यवस्था से प्राप्त होती है।
- पूर्व वैदिक कालीन आर्थिक व्यवस्था के बारे में–पशुपालन, कृषि, आखेट, उद्योगधन्धों के द्वारा हमें जानकारी मिलती है।
- उत्तर वैदिक कालीन राजनीतिक स्थिति की जानकारी –राज्य का स्वरूप, राजा के अधिकार, राजा के पदाधिकारी, सभा एवं समिति तथा न्याय व्यवस्था से मिलती है।
- उत्तर वैदिक कालीन साहित्य हैं–वेद, ब्राहमण ग्रन्थ, आरण्यक, उपनिषद, वेदांग, सूत्र, उपवेद, पुराण, रामायण, महाभारत आदि।

बोध प्रश्न

1. वैदिक काल से आप क्या समझते हैं ? आर्यों के मूल निवास स्थान के बारे में दिए गए सिद्धान्त का उल्लेख करिए।
2. पूर्व वैदिक कालीन सामाजिक एवं राजनीतिक दशा पर प्रकाश डालिए।
3. पूर्व वैदिक कालीन शासन व्यवस्था एवं धार्मिक व्यवस्था पर निबन्ध लिखिए।
4. उत्तर वैदिक कालीन साामजिक तथा आर्थिक जीवन पर प्रकाश डालिए।
5. उत्तर वैदिक कालीन धार्मिक जीवन का वर्णन करिए।
6. आर्यों के वैदिक साहित्य का उल्लेख करिए।
7. आर्यों का सामाजिक जीवन आदर्शमय था। इस कथन की विवेचना करिए।

महाजनपद काल

- भारत के 16 महाजनपद
- मगध का साम्राज्य
- सिकन्दर का आक्रमण एवं भारत पर उसका प्रभाव

छठीं शताब्दी ई0पू0 के आते–आते इन जनपदों का अत्यधिक विस्तार हो चुका था। विस्तार की प्रवृत्ति के कारण जनपदों में परस्पर संघर्ष हुए। इस संघर्ष में पराजित जनपद विजित राज्यों में विलीन हो गए। इन विजित जनपदों की राज्य सीमा और शक्ति में वृद्धि हो जाने के कारण इन जनपदों को 'महाजनपद' के नाम से पुकारा जाने लगा।

सोलह महाजनपद

बौद्ध एवं जैन साहित्य से हमें यह ज्ञात होता है कि तत्कालीन भारत अनेक राज्यों में विभक्त था। ये राज्य अपने अस्तित्व के लिए परस्पर लड़ते रहते थे। इन राज्यों में राजतान्त्रिक तथा गणतान्त्रिक दोनों ही प्रकार की शासन पद्धति अस्तित्व में थी। इनमें सोलह राज्य प्रमुख थे। राज्यों की संख्या सोलह होने के कारण ही इन्हें 'सोलह महाजनपद' के नाम से जाना जाता है। 16 महाजनपदों के विषय में बौद्ध एवं जैन साहित्य तथा पाणिनी के अष्टाध्यायी से जानकारी प्राप्त होती है।

प्रशिक्षु 16 महाजनपदों कौन से थे, इस पर चर्चा करें तथा चर्चा उपरानत इनके नाम एवं अन्य उल्लेख के बारे में स्पष्ट भी करें, यथा –

16 महाजनपद
1. अंग
2. मगध
3. काशी
4. कौशल
5. वज्जि
6. चेटि अथवा चेदि
7. वत्स
8. कुरू
9. पांचाल
10. अस्मक (अस्स्क)
11. मच्छ अथवा मत्स्य
12. शूरसेन
13. मल्ल
14. गान्धार
15. कम्बोज
16. अवन्ति

बौद्ध ग्रन्थों में वर्णित महाजनपदों का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है–

1. अंग– अंग महाजनपद की राजधानी गंगा के संगम पर स्थित 'चम्पा' थी। अंग आधुनिक बिहार के भागलपुर और मुंगेर जिले में फैला हुआ था। जातक कथाओं से पता चलता है कि 'चम्पा' तत्कालीन भारत की एक समृद्ध नगरी थी। तथा यहाँ के व्यापारी अनेक देशों से व्यापार करते थे। छठीं शताब्दी ई0पू0 में यहाँ का शासक 'ब्रहमदत्त' था।
2. मगध– मगध महाजनपद बिहार राज्य के गया और पटना जिले में फैला हुआ था। इसकी राजधानी 'गिरिव्रज' थी। बिम्बसार ने इसका नाम बदलकर 'राजगृह' कर दिया था। महात्मा बुद्ध के समय यहाँ 'हर्यक' वंश के बिम्बसार का शासन था। यह महाजनपद अपने वैभव के लिए उत्तर–पश्चिम में गंगा और सोन नदी से, दक्षिण में विन्ध्य पर्वतमाला के किनारे तथा जंगल से, पूर्व में चम्पा नदी से सुरक्षित एवं प्रख्यात था।
3. काशी– काशी महाजनपद सर्वाधिक प्राचीन था। इसकी राजधानी वाराणसी थी। वाराणसी वरूणा और असी नदियों के संगम पर स्थित थी। राजा ब्रहमदत्त के शासन काल में काशी अत्यधिक समृद्ध थी। इसका कौशल राज्य से संघर्ष चलता रहता था जिसके कारण काशी की शक्ति क्षीण होने लगी और अन्त में काशी कौशल राज्य में विलीन हो गयी ।

4. कौशल– कौशल उत्तर प्रदेश के मध्य में उत्तर की ओर स्थित था। इस राज्य की राजधानी 'श्रावस्ती' थी। इसके प्रसिद्ध दो नगर –अयोध्या एवं साकेत थे। प्राचीन काल में कौशल में सूर्यवंशी मान्धाता, सत्यवादी हरिश्चन्द्र, दिलीप, रघु, दशरथ और राम ने शासन किया। बुद्ध के समय कौशल का राजा प्रसेनजित था। प्रसेनजित ने काशी को विजित कर कौशल राज्य की सीमा का विस्तार किया था।

5. वज्जि– वज्जि महाजनपद आधुनिक बिहार राज्य के उत्तरी भाग में फैला था। यह आठ राज्यों का एक संघ था। इस संघ की राजधानी 'वैशाली' थी। वैधाली सभ्यता एवं संस्कृति का प्रमुख केन्द्र थी। छठी शताब्दी ई0पू0 में यह एक स्वतंत्र राज्य था परन्तु बाद में मगध नरेश अजातशत्रु ने इस जनपद को अपने राज्य में शमिल कर लिया था।

6. चेटि अथवा चेदि– चेटि जनपद आधुनिक बुन्देलखण्ड में स्थित था। इसकी राजधानी शुक्तिमती अथवा सोत्थिवती थी। यह केन नदी के तट पर स्थित थी। इस राज्य की उन्नति शिशुनाग के शासन काल में अत्यधिक हुई थी। महाभारत कालीन शिशुपाल यहां का राजा था। इसकी मृत्यु के पश्चात् इस राज्य का पतन हो गया।

7. वत्स– काशी महाजनपद के दक्षिण–पश्चिम एवं चेदि के उत्तर पूर्व में वत्स जनपद स्थित था। इसकी राजधानी कौशाम्बी थी। इस राज्य में राजतंत्रात्मक शासन था। इस राज्य का अवन्ति राज्य से संघर्ष चलता रहता था। छठी शताब्दी ई0पू0 में वत्स का शासक उदयन था।

8. कुरू– कुरू जनपद वर्तमान दिल्ली और मेरठ के समीप स्थित है। इस राज्य की राजधानी इन्द्रप्रस्थ थी। महाभारत युद्ध के बाद 'इन्द्रप्रस्थ' शक्तिहीन हो गया था। मगध राज्य ने कालान्तर में इस पर अपना अधिकार कर लिया।

9. पांचाल– पांचाल आधुनिक रूहेलखण्ड तथा गंगा–यमुना के दोआब में स्थित था। इस राज्य की दो शाखाएं– उत्तरी पांचाल एवं दक्षिणी पांचाल थी। महाभारत के अनुसार उत्तरी पांचाल की राजधानी 'अहिच्छत्र' तथा दक्षिण पांचाल की राजधानी 'काम्पिल्य' थी। महाभारत कालीन पांडवों की पत्नी 'द्रोपदी' यहीं के राजा धुपद की पुत्री थी।

10. अश्मक (अस्स्क)– अश्मक जनपद दक्षिण भारत में गोदावरी के तट पर स्थित था। इस राज्य की राजधानी 'पौदन्य' (आधुनिक पोतन) थी। इस राज्य का अवन्ति से संघर्ष चलता रहता था। इस राज्य को अवन्ति ने अपने अधीन कर लिया था।

11. मच्छ अथवा मत्स्य – मत्स्य राज्य वर्तमान में जयपुर–अलवर तथा भरतपुर के कुछ भाग में स्थित था। इस राज्य की राजधानी 'विराट नगरी' थी। यह राज्य पहले चेदियों के अधीन था, परन्तु बाद में मगध सम्राज्य ने इस पर अपना अधिकार कर लिया।

12. शूरसेन– मत्स्य के दक्षिण में शूरसेन जनपद स्थित था। इसकी राजधानी मथुरा थी। मथुरा अपने ज्ञान, बुद्धि एवं वैभव के लिए सर्वत्र विख्यात थी। इस राज्य में पहले गणतंत्र था, परन्तु बाद में राजतंत्र स्थापित हो गया था।

13. मल्ल– वज्जियों के संघ राज्य के उत्तर में दो भागों में विभाजित मल्ल एक पहाड़ी राज्य था। इसके एक भाग की राजधानी 'कुशीनगर' तथा दूसरे भाग की 'पावापुरी' थी। महात्मा बुद्ध के जीवन काल में ये दोनों ही नगर महत्वपूर्ण थे। इन नगरों में से पावापुरी में महात्मा बुद्ध ने अन्तिम समय भोजन किया तथा कुशीनगर में उनकी मृत्यु हुई।

महात्माबुद्ध की मृत्यु के कुछ समय उपरान्त ही मगध साम्राज्य ने इस राज्य को विजित कर अपने साम्राज्य में मिला लिया।

14. गान्धार– गान्धार राज्य आधुनिक 'अफगानिस्तान' का दक्षिणी पूर्वी भाग था। काश्मीर का कुछ दक्षिण भाग तथा पंजाब का कुछ पश्चिमी भाग इस राज्य की सीमा में आते थे। इसकी राजधानी 'तक्षशिला' थी। तक्षशिला ज्ञान के केन्द्र के रूप में सर्वत्र प्रख्यात थी। विद्यार्थी दूर–दूर से यहाँ शिक्षा ग्रहण करने आते थे। कुरूवंशीय धृतराष्ट्र की पत्नी गांधारी यहीं की राजकुमारी थीं।

15. कम्बोज– कम्बोज गान्धार राज्य की पड़ोसी राज्य था। इस राज्य की राजधानी 'राजपुर' थी।

16. अवन्ति– अवन्ति राज्य के दो भाग –उत्तरी अवन्ति एवं दक्षिणी अवन्ति थे। यह राज्य मालवा में स्थित था। उत्तरी अवन्ति की राजधानी– 'उज्जियनी' तथा दक्षिण अवन्ति की राजधानी 'महिष्मती' थी। बुद्ध के समय 'अवन्ति' एक शक्तिशाली राज्य था। इस राज्य का प्रसिद्ध शासक 'चण्ड प्रद्योत' था।

मगध का साम्राज्य– मगध साम्राज्य के नेतृत्व में जब उत्तरी पूर्वी भारत में राजनीतिक एकता स्थापित करने के प्रयास किए जा रहे थे। उस समय उत्तरी पश्चिमी प्रदेश छोटे–बड़े राज्यों में विभक्त था। इन राज्यों में आपसी संघर्ष होने से भारतीय सीमाएं असुरक्षित थी। इस प्रदेश की महत्ता आर्थिक एवं व्यापारिक दृष्टि से सर्वविदित थी। ऐसी परिस्थिति में किसी भी साम्राज्यवादी शक्तिशाली शक्ति का इस ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक ही था। फलतः इस प्रदेश की परिस्थितियों का लाभ उठाकर ईरानी और यूनानियों ने भारत पर आक्रमण कर दिया।

प्रशिक्षु चर्चा करें कि भारत पर आक्रमण क्यों हुआ।

सिकन्दर का भारत आक्रमण

सिकन्दर का भारत पर आक्रमण क्यों हुआ ? इसे जानने के पहले प्रशिक्षु यह भी जानें कि सिकन्दर कौन था ? सिकन्दर मकदूनिया के राजा फिलिप का पुत्र था। बचपन से ही यह बड़ा महत्वाकांक्षी था और विश्व विजय का स्वप्न देखता रहता था। 336 ई0पू0 में उसके पिता राजा फिलिप का वध किया गया, तब सिकन्दर 20 वर्ष का था। अतः अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् सिकन्दर 336 ई0पू0 में मकदूनिया के सिंहासन पर आसीन हुआ। सिंहासन पर बैठते ही उसने अपनी विश्व विजय का स्वप्न साकार करने की चेष्टा प्रारम्भ कर दी। उसने सर्वप्रथम यूनान के अनेक नगर राज्यों को जीता। इसके बाद मिस्र पर विजय प्राप्त की तथा फिर पश्चिमी एशिया पर अधिकार कर लियाा। विजय के क्रम को आगे बढ़ाते हुए सिकन्दर ने 327 ई0पू0 में काबुल घाटी को विजित करने के पश्चात् भारत पर आक्रमण करने की योजना बनाई। सिकन्दर ने 326 ई0पू0 के मार्च माह में बिना किसी खास विरोध के भारत में प्रवेश किया। उसने शीघ्र ही सीमान्त प्रदेश के कुछ राज्यों को बिना युद्ध किए ही अपने अधिकार में कर लिया तथा कुछ राज्यों पर युद्ध कर अधिकार कर लिया।

भारत अभियान में सिकन्दर को निम्नलिखित शक्तियों से संघर्ष करना पड़ा। प्रशिक्षु जानें कि सिकन्दर ने किनसे युद्ध अथवा आक्रमण कर विजय प्राप्त की, यथा –

1. अश्वक जाति से युद्ध– सिकन्दर ने सबसे पहले अलिसांगे–कुदार घाटी में निवास करने वाली अश्वक जाति को पराजित किया। अश्वकों को बन्दी बनाया तथा उनके स्वस्थ एवं सुन्दर बैलों को उनसे छीनकर मकदूनिया भेज दिया।

2. नीसा पर आक्रमण– नीसा राज्य पर अभिजात वर्ग का अधिकार था। यहाँ का शासक अक्रूफिस था। वह छोटे से संघर्ष में पराजित हो गया। उसने सिकन्दर की अधीनता स्वीकार कर ली। उसने सिकन्दर को लगभग 300 घोड़े भी भेंट स्वरूप दिए।

3. मस्सग पर आक्रमण– मस्सग गोरी नदी के पूरब में स्थित था। यह पश्चिम, दक्षिण तथा पूरब तीन दिशाओं में चट्टानों, पर्वत मालाओं एवं नदियों से सुरक्षित था। यहाँ का दुर्ग अमेद्य था। इस नगर का शासक अस्सकेनस वीर एवं साहसी था। इस दुर्ग पर अधिकार करने के लिए सिकन्दर को कड़ा संघर्ष करना पड़ा। मस्सग के शासक अस्सकेनस के मर जाने के पश्चात् यहाँ की स्त्रियों ने सिकन्दर से लोहा लेकर अपनी शौर्यता का परिचय दिया था परन्तु अन्त में सिकन्दर को ही विजय प्राप्त हुई।

4. आम्भी– तक्षशिला का शासक आम्भी था। आम्भी ने सिकन्दर से युद्ध के स्थान पर उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। आम्भी ने एक विशाल समारोह सिकन्दर के लिए आयोजित किया तथा उसे बहुमूल्य उपहार प्रदान किए। आम्भी ने सिकन्दर के विजयी अभियान में भी सक्रिय सहयोग प्रदान किया था।

5. अभिसार– अभिसार झेलम एवं चिनाव नदी के बीच स्थित था। अभिसार और अन्य छोटे राज्यों ने सिकन्दर के शौर्य के आगे हथियार डाल दिए और उसकी अधीनता स्वीकार कर ली।

6. पोरस से युद्ध– पोरस चिनाव एवं झेलम नदियों के मध्यवर्ती प्रदेश का शासक था। इस वीर शासक को परास्त करने में सिकन्दर को सर्वाधिक शक्ति एवं बुद्धि का प्रयोग करना पड़ा। पोरस की वीरता से सिकन्दर इतना अधिक प्रभावित हुआ कि उसने उसके जीते राज्य को वापस कर उससे (पोरस) मित्रता कर ली। सिकन्दर ने अपने विजयी अभियान में पोरस का सहयोग लिया।

7. ग्लोगनिकाई– इस राज्य को सिकन्दर ने परास्त किया। ग्लोगनिकाई को परास्त करने के पश्चात् सिकन्दर ने इस गणराज्य को पोरस के राज्य में मिला दिया।

8. कठोई से युद्ध– कठोई जाति ने अपने शौर्य, वीरता से सिकन्दर के दांत खट्टे कर दिए थे। परन्तु ठीक समय पर पोरस ने सिकन्दर की सहायता की, जिसके परिणामस्वरूप सिकन्दर ने कठोई जाति को भी परास्त करने में सफलता प्राप्त की।

9. सिकन्दर की सेना में विद्रोह– सिकन्दर सौभूति पर विजय प्राप्त करने के बाद जैसे ही व्यास नदी के तट पर पहुँचा, तभी उसकी सेना ने आगे बढ़ने से इन्कार कर दिया। सिकन्दर ने सेना को समझाने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु जब सेना नहीं मानी। तब सिकन्दर ने स्वदेश लौटने का निश्चय कर लिया।

10. सिकन्दर की स्वदेश वापसी एवं मृत्यु– 325 ई0पू0 सिकन्दर ने अपने देश की ओर प्रस्थान किया। सिकन्दर ने अपनी सेना को दो भागों में बाँट दिया। सेना का एक भाग–नियारकस की अध्यक्षता में जलमार्ग तथा दूसरा भाग–सिकन्दर

के नेतृत्व में थलमार्ग से वापस हुआ। मार्ग में सिकन्दर को तीव्र ज्वर आया परन्तु फिर भी वह मदिरा का सेवन करता रहा और निरन्तर चलता रहा। जिसके परिणामस्वरूप 32 वर्ष की आयु में स्वदेश पहुँचने से पूर्व ही 325 ई0पू0 में सिकन्दर की मृत्यु हो गई।

प्रशिक्षु चर्चा करें कि सिकन्दर के भारत पर आक्रमण पर क्या–क्या प्रभाव पड़ा ?

सिकन्दर के आक्रमण का प्रभाव– प्रशिक्षु सिकन्दर के भारत पर आक्रमण का प्रभाव हम तीन भागों में विभक्त कर जान सकते हैं –

1. राजनीतिक प्रभाव
2. आर्थिक प्रभाव
3. सांस्कृतिक प्रभाव

राजनीतिक प्रभाव

सिकन्दर के आक्रमण का राजनीतिक प्रभाव निम्नलिखित रूप से विभक्त किया जा सकता है –

राजनीतिक प्रभाव –
- आपसी फूट का प्रदर्शन
- इतिहास की तिथि निर्धारण में सहायक
- राजनीतिक एकता का अभाव
- यूनानी राज्यों की स्थापना
- दोषपूर्ण युद्ध विधि का ज्ञान

- सिकन्दर के आक्रमण से भारतीय राजाओं की आपसी फूट प्रदर्शित हुई। यहाँ के राजाओं ने एकजुट होकर सिकन्दर की शक्ति का सामना नहीं किया। परिणामतः सभी राजा परास्त हुए।
- सिकन्दर के आक्रमण से तिथिवार इतिहास को प्रस्तुत करने में सहायता प्राप्त हुई।
- तत्कालीन उत्तरी भारत के अनेक छोटे–छोटे राज्यों का विलय पोरस और आम्भी के राज्यों में हो गया। जिससे अब राज्य अपेक्षाकृत विस्तृत एवं राजनीतिक दृष्टि से एकजुट होने लगे।
- सिकन्दर के आक्रमण के परिणामस्वरूप पश्चिमी पंजाब, सिन्ध आदि समीवर्ती प्रान्तों में यूनानी राज्यों की स्थापना हुई।
- भारतीयों को सिकन्दर के विरूद्ध युद्ध करने से अपनी युद्ध विधि के दोषों का भलीभांति ज्ञान हो गया। जिसे भविष्य में उन्होंने दूर भी किया। उसे यह भी ज्ञात हो गया था कि यदि सेना संख्या में कम भी हो, किन्तु यदि वह अनुशासित एवं पारंगत हो, तभी विजय लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

आर्थिक प्रभाव

सिकन्दर के आक्रमण के आर्थिक प्रभाव निम्नलिखित हुए –

आर्थिक प्रभाव
- नये मार्गों का ज्ञान
- व्यापार को प्रोत्साहन
- मुद्रा पर प्रभाव

- सिकन्दर के आक्रमण से अनेक व्यापारिक मार्ग खुल गए। मार्गों ने एक जलमार्ग तथा तीन स्थल मार्ग–भारत, ईरान आदि पश्चिमी देशों के मध्य थे। व्यापारिक दृष्टि से काबुल, बलूचिस्तान में सुल्तान दर्रा तथा जोडोशिया से होकर जाने वाला स्थल मार्ग भविष्य में व्यापारिक दृष्टि से अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुआ।

- भारत एवं यूनान के मध्य व्यापारिक सम्बन्ध घनिष्ट हुए। भारत में गरम मसाले, हाथी दाँत आदि वस्तु का निर्यात एवं यूनान से कन्याओं का आयात होने लगा।
- भारतीय मुद्रा भी यूनानी मुद्रा शैली से प्रभावित हुई। भारतीय दीनार मुद्रा का प्रारम्भ यूनान की द्रूम अथवा दक्ष नामक मुद्रा शैली पर किया गया।

सांस्कृतिक प्रभाव

सिकन्दर के आक्रमण के सांस्कृतिक प्रभाव निम्नलिखित रूपों में दृष्टिगोचर होते हैं–

- यूनानी शैली पर आधारित अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक मूर्तियों का निर्माण प्रारम्भ हुआ। भारत एवं यूनानी कला के सम्मिश्रण से गांधार कला शैली का विकास हुआ। भारत की भवन निर्माण कला पर भी यूनानी प्रभाव पड़ा
- भाषा एवं साहित्य पर भी यूनानी प्रभाव पड़ा। अनेक यूननी शब्द यथा–पुस्तक, कलम, फलक, सुरंग आदि को संस्कृत भाषा में स्थान दिया गया।
- भारतीय ज्योतिष विद्या में पहले से ही बहुत उन्नति कर चुके थे परन्तु फिर भी भारतीयों ने 'राशि चक्र' के विषय में बहुत कुछ सीखा। ज्योतिषशास्त्र के सिद्धान्त 'रोमक' एवं पौलिस' के लिए भारतीय ज्योतिषी यूनानियों के ऋणी हैं।

सांस्कृतिक प्रभाव
- भारतीय कला पर प्रभाव
- भाषा एवं साहित्य पर प्रभाव
- ज्योतिष पर प्रभाव
- चिकित्सा पर प्रभाव

- भारतीय औषधि विज्ञान एवं चिकित्सा पद्धति तथा यूनानी औषधि विज्ञान एवं चिकित्सा पद्धति में बहुत कुछ समानता मिलती है। अतः निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि भारत एवं यूनान ने चिकित्सा के क्षेत्र में भी एक–दूसरे को प्रभावित किया होगा।

प्रशिक्षु पुनरावृत्ति में निम्नलिखित बिन्दु पर चर्चा करें एवं बताएं

- सिकन्दर कौन था, भारत आने का उसका लक्ष्य का था।
- सिकन्दर ने भारत के किन राज्यों को जीता ।
- सिकन्दर के आक्रमण के राजनीतिक, आार्थिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव क्या हुए ।

बोध प्रश्नः–

1. प्राचीन भारत के 16 महाजनपद के विषय में आप क्या जानते हैं ? प्रत्येक का संक्षिप्त परिचय लिखिए ?
2. मगध साम्राज्य का उल्लेख कीजिए। सिकन्दर के आक्रमण का वर्णन करिए।
3. सिकन्दर कौन था ? उसने भारत पर आक्रमण क्यों किया तथा उसके आक्रमण का भारत की राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ा, स्पष्ट कीजिए।

उपनिषद्काल–जैन एवं बौद्धधर्म

ईसा वर्ष छठी शताब्दी केवल भारत के लिए ही नहीं, वरन् समस्त विश्व के लिए एक विपुल क्रान्ति परिवर्तनों की शताब्दी थी। वस्तुतः उपनिषदकाल एक ऐसा युग था, जिसमें प्राचीन आदर्श एवं मान्यताओं का स्थान नवीन आदर्श एवं मान्यताएं ले रही थीं। इसी सम्बन्ध में बी0एन0 लूनिया का कथन सत्य प्रतीत होता है–"ईसा पूर्व छठी शताब्दी जिज्ञासा तथा तर्कशीलता का युग था, नवीन गवेषणाओं का युग था, सत्य के अन्वेषणों का काल था, इहलोक और परलोक के रहस्यों के उद्‌घाटनों का काल था।"

प्रशिक्षु चर्चा करें कि उपनिषद् काल से आप क्या समझते है ?

प्रशिक्षु चर्चा कर स्पष्ट करें कि वास्तव में यह काल प्रबल दार्शनिक विचारों एवं सत्यानुसन्धान का काल था। इसी काल में भारत में मध्य गंगा की घाटी में दो प्रमुख धर्मों का जन्म हुआ, जिन्हें बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म के नाम से पुकारा जाता है। इन धर्मों ने उपनिषदों द्वारा तैयार पृष्ठभूमि के आधार पर पुरातन वैदिक ब्राहमण धर्म के अनेकानेक दोषों को उजागर करते हुए भारत में सामाजिक धार्मिक सुधार आन्दोलन का सूत्रपात किया। इसीलिए विद्वानों में ठीक ही कहा है कि– "छठी शताब्दी ई0पू0 अनेक देशों में आध्यात्मिक अशान्ति तथा बौद्धिक जागरण का एक विलक्षण युग था। इस युग में सम्पूर्ण विश्व में धार्मिक क्रान्ति हुई।" छठीं शताब्दी ई0पू0 में धार्मिक क्रान्ति हुई। इसके परिणामस्वरूप अनेक नवीन धर्म प्रकाश में आये ।इन नवीन धर्मों में जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म प्रमुख थे।

जैन धर्म

जैन धर्म के प्रमुख प्रतिस्थापक तथा चौबीसवें तीर्थकार महावीर स्वामी का जन्म वैशाली के समीप कुण्डग्राम में ई0पू0 599 में एक धन सम्पन्न क्षत्रिय परिवार में हुआ था। महावीर के पिता का नाम सिद्धार्थ था। यह क्षत्रिय ज्ञांत्रिक कुल के प्रधान थे। इनकी माँ त्रिशला वैशाली के लिच्छवि शासक राजा चेटक की बहन थी। इन्हीं के छोटे पुत्र का नाम वर्द्धमान था जो कालान्तर में महावीर के नाम से प्रसिद्ध हुए। युवा होने पर उनका विवाह यशोदा नामक राजकुमारी से हुआ। यशोदा से एक कन्या का जन्म हुआ। जब यह सन्यासी हुए तो इसी कन्या का पति 'महावीर' का प्रथम शिष्य बना। वर्द्धमान बचपन से ही चिन्तनशील एवं गम्भीर स्वभाव वाले थे, अतः वह अधिक समय तक सांसारिक जीवन व्यतीत न कर सके। अतः उन्होंने लगभग 30 वर्ष की अवस्था में अपने माता–पिता की मृत्यु के पश्चातृ सन्यास ग्रहण कर लिया और ज्ञान की खोज में तपस्यारत हो गए। पहले वर्ष उन्होंने सिर्फ एक वस्त्र धारण किया। तेरह माह के पश्चात् उस वस्त्र का भी त्याग कर दिया और नग्नावस्था में रहने लगे। इन्होंने 12 वर्ष तक कठोर तपस्या की। अपनी तपस्या के 13वें वर्ष में जब वह मात्र 42 वर्ष के थे तब उन्हें 'सर्वोच्च ज्ञान' (कैवेल्य) की प्राप्ति हुई। ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् वर्द्धमान 'महावीर' अर्थात् सर्वोच्च योद्धा, 'जिन' अर्थात् 'विजयी', 'निग्रन्थ' अर्थात् बन्धनों से मुक्त तथा केवलिन अर्थात् सर्वोच्च ज्ञानी के नाम से प्रसिद्ध हुए। 'जिन' के आधार पर ही महावीर के अनुयायी 'जैन' कहलाए और महावीर के द्वारा चलाया गया धर्म 'जैन धर्म' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। महावीर स्वामी ने अनेक राज्यों की यात्रा कर जैन–धर्म का प्रचार–प्रसार किया। जिससे उनके अनुयायियों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई। जैन धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए महावीर स्वामी ने पावापुरी में जैनसंघ की स्थापना की। जैन धर्म के प्रसार में उनके अनेक शिष्यों यथा–आनन्द, सुरदेव, महासयग, कुण्डकोलिय कामदेव,

नन्दिनीपिया आदि ने भरपूर सहयोग दिया। महावीर स्वामी की मृत्यु के सम्बन्ध में विद्वानों में बड़ा मतभेद है। इनकी मृत्यु 72 वर्ष की आयु में राजगृह के निकट पावापुरी में 527 ई0पू0 में हुई।

> प्रशिक्षु जैन धर्म के सिद्धान्त के निम्नलिखित बिन्दुओं पर चर्चा करें, चर्चा उपरान्त स्पष्ट भी करें :–
>
> - आत्मवादिता एवं अनेकात्मवादिता
> - निवृत्ति की प्रधानता
> - कर्म की प्रधानता एवं पुनर्जन्म में विश्वास
> - मोक्ष अथवा निर्वाण
> - त्रिरत्न
> - तप एवं व्रत
> - अहिंसा
> - अठारह पाप
> - पंच महाव्रत
> - पंच अणुव्रत
> - जाति प्रथा एवं लिंग भेद का विरोध
> - वेदों में अविश्वास
> - यज्ञ पशुबलि एवं कर्मकाण्डों में अविश्वास
> - गुणव्रत
> - शिक्षाव्रत
> - तीर्थकरों में विश्वास

जैन–धर्म के सिद्धान्त– महावीर स्वामी ने जिन सिद्धान्तों का निर्धारण किया, वह जैन धर्म के अनुयायियों के लिए थे। वे निम्नलिखित हैं यथा–

(i) अनीश्वरवादिता– महावीर स्वामी का ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं था। उन्होंने न तो ईश्वर को संसार का रचयिता माना और न ही नियन्त्रक। उनका विश्वास था कि सृष्टि तो अनादि एवं अनन्त है। सृष्टि में परिवर्तन तो होते रहे हैं, परन्तु विनाश कभी नहीं हुआ है। सृष्टि का निर्माण द्रव्यों–आकाश, काल, धर्म, अधर्म, जीव आदि से हुआ है।

(ii) आत्मवादिता एवं अनेकात्मवादिता– जैन धर्म में आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार किया गया है। महावीर स्वामी के अनुसार आत्मा सुख–दुख का अनुभव करती है तथा प्रकाश के समान अस्तित्व, किन्तु आत्मा का कोई आकार नहीं होता है। प्रत्येक जीव–जन्तु में आत्मा अलग–अलग होती है। आत्मा का वास पेड़–पौधों में भी होता है। महावीर स्वामी के अनुसार आत्मा स्वभाव से निर्विकार एवं सर्वदृष्टा है।

(iii) निवृत्ति की प्रधानता– जैन धर्म में निवृत्ति की प्रधानता पर बल दिया जाता है। यह संसार दुखों से परिपूर्ण है और दुख का प्रमुख कारण तृष्णा है। तृष्णा का नाश निवृत्ति से सम्भव है। निवृत्ति मार्ग के अनुसरण से ही मनुष्य का कल्याण सम्भव है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को संसारिक सुखों का त्याग कर निवृत्ति मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।

(iv) कर्म की प्रधानता एवं पुनर्जन्म में विश्वास– जैन धर्म में कर्म को प्रधानता दी गई है तथा पुनर्जन्म में विश्वास व्यक्त किया गया है। पुनर्जन्म अथ्वाा आवागमन का सिद्धान्त मनुष्यों के कर्म पर आधारित है। कर्म के आधार पर ही अगला जन्म होता है। कर्मानुसार ही मनुष्य की अगले जन्म में आयु निर्धारित होती है, अतः मनुष्य को सदैव सत्कर्म करने चाहिए, जिससे मोक्ष प्राप्त हो सके।

(v) मोक्ष अथवा निर्वाण– हिन्दु एवं बौद्ध धर्म की भांति जैन धर्म में भी मोक्ष अथवा निर्वाण प्राप्ति को परम लक्ष्य माना गया है। जैन धर्म का मोक्ष के सम्बन्ध में मत है कि कर्मबन्धन की मुक्ति से मोक्ष अथवा निर्वाण प्राप्त किया जा सकता है। कर्मबन्धन से मुक्ति पाने के लिए मनुष्य को वर्तमान जन्म में सत्कर्म करना चाहिए ताकि उसके पूर्वजन्म के दुष्कर्मों का नाश हो जाए। मनुष्य यदि ऐसा करता है तो उसका ज्ञान अनन्त, असीम एवं विशुद्ध हो

जाता है और वह भौतिक तत्वों के मोहपाश से छुटकारा पा लेता है। जीवन की इसी अवस्था को 'निर्वाण' कहा जाता है। निर्वाण प्राप्ति के लिए जैन धर्म में 'त्रिरत्न' को आवश्यक बताया गया है।

(vi) त्रिरत्न– जैन धर्म में 'त्रिरत्न' को कर्मफल से छुटकारा पाने तथा निर्वाण के लिए आवश्यक बताया गया है। इनका मानना है कि यदि मनुष्य त्रिरत्नों का पालन करता है तो वह निश्चय ही मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त कर लेगा।

'त्रिरत्न निम्नलिखित इस प्रकार हैं–

त्रिरत्न
• सम्यक् ज्ञान
• सम्यक् दर्शन
• सम्यक् आचरण

(1) सम्यक् ज्ञान– जैन धर्म में सच्चा एवं पूर्व ज्ञान ही सम्यक ज्ञान हैं कुछ व्यक्तियों में तो यह विद्यमान होता है परन्तु अन्य लोग अभ्यास एवं विद्योपार्जन द्वारा इसकी प्राप्ति कर सकते हैं। अतः प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह जैन तीर्थकरों के उपदेशों का अध्ययन कर अनुसरण करें।

(2) सम्यक् दर्शन– जैन धर्म में यथार्थ ज्ञान के प्रति श्रद्धा को ही सम्यक् दर्शन कहा गया है।

(3) सम्यक् आचरण– सम्यक् आचरण से तात्पर्य है कि मनुष्यों को इन्द्रियों के वशीभूत न होकर सदाचारी जीवन व्यतीत करना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि वह सत्य, अहिंसा एवं ब्रह्मचर्य का पालन करें।

(vii) तप एवं व्रत– जैन धर्म के अनुसार सभी दुखों से छुटकारा पाने के लिए तृष्णा का नाश आवश्यक है। तृष्णा का नाश कठोर तप और व्रत के द्वारा किया जा सकता है।

(viii) अहिंसा– जैन धर्म में अहिंसा पर विशेष बल दिया गया है। जैन धर्म के जड़ एवं चेतन दोनों प्रकार की वस्तुओं में जीव का अस्तित्व विद्यमान है। इसलिए मनुष्य को ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए जिससे जीव हिंसा हो। यहाँ तक कि हिंसा के विषय में सोचना भी नहीं चाहिए। अहिंसा का पालन मन, वचन तथा कर्म से करना चाहिए।

(ix) अठारह पाप– जैन धर्मानुसार पापों से मनुष्य कर्म बन्धन में फँसता ही जाता है। ये पाप अठारह इस प्रकार हैं –

• झूठ	• लोभ	• निन्दा
• चोरी	• माया	• चुगली
• मैथुन	• मान	• दोषारोपण
• क्रोध	• मोह	• असंयम
• हिंसा	• कलह	• कपटपूर्ण झूठ (माथा मृशा)
• द्रव्य मुर्छा	• द्वेष	• मिथ्या दर्शन रूपी शल्य

(x) पंच महाव्रत– महावीर स्वामी ने जैन भिक्षु–भिक्षुणियों को पंच महाव्रतों का पालन का उपदेश दिया।इन पांच महाव्रतों में से अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह का प्रतिपादन 23वें तीर्थकर पार्श्वनाथ ने तथा पाँचवे महाव्रत–ब्रह्मचर्य का प्रतिपादन 24वें तीर्थकर महावीर स्वामी ने किया।

पंच महाव्रत
- अहिंसा
- सत्य
- अस्तेय
- अपरिग्रह
- ब्रह्मचर्य

1. अहिंसा– किसी के प्रति मन, कर्म एवं वचन से ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए जिससे उसे दुख अथवा कष्ट हो अर्थात् किसी को शब्दघात नहीं पहुँचाना चाहिए। साथ ही कोई भी ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए, जिससे किसी पशु, पक्षी, पेड़ पौधों को किसी प्रकार का कष्ट हो।
2. सत्य– मनुष्य को सदैव मधुरता से बोलते हुए सत्य बोलना चाहिए। इसके लिए क्रोध एवं भय के समय मौन रहना चाहिए। बिना विचारे नहीं बोलना चाहिए।
3. अस्तेय– किसी की भी वस्तु अथवा धन उसकी बिना सहमति के नहीं लेना चाहिए। बिना अनुमति के न तो किसी के घर में प्रवेश करना चाहिए और न ही रहना चाहिए।
4. अपरिग्रह– भौतिक वस्तुओं का त्याग करना चाहिए तथा सम्पत्ति का संग्रह नहीं करना चाहिए।
5. ब्रह्मचर्य– भोग विलास से दूर रहकर संयमपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहिए। ब्रह्मचर्य के अन्तर्गत किसी स्त्री को न तो देखना चाहिए और न ही उससे वार्तालाप करना चाहिए। जिस घर में स्त्री का वास हो, वहाँ नहीं रहना चाहिए।

(xi) पंच अणुव्रत– पंच महाव्रत का पालन करना जैन भिक्षु और भिक्षुणियों के लिए अनिवार्य था। पंच महाव्रत अत्यन्त कठोर थे इसलिए इनका पालन करना गृहस्थों के लिए सम्भव नहीं था। अतः महावीर स्वामी ने गृहस्थों को पंच अणुव्रत के पालन का उपदेश दिया। ये पंच अणुव्रत हैं– अहिंसा, अमृषा, अचौर्य, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य। ये महाव्रत की तुलना में कम कठोर एवं अधिक सरल थे तथा इनका पालन करना किसी भी गृहस्थ के लिए कठिन नहीं था। अतः इन्हें पंच अणुव्रत कहा गया।

पंच अणुव्रत
- अहिंसा
- अमृषा
- अचौर्य
- अपरिग्रह
- ब्रह्मचर्य

(xii) जाति प्रथा एवं लिंग भेद का विरोध– जैन धर्म जाति प्रथा के भेद को नहीं मानता है। महावीर स्वामी ने जाति प्रथा का घोर विरोध किया। उनका विचार था कि मनुष्य कर्म से ही ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र होता है, जन्म से नहीं। यही कारण था कि उन्होंने सभी जातियों के लिए जैन धर्म का द्वार खुला रखा। इसके साथ महावीर स्वामी ने लिंग भेद का भी विरोध किया। उनकी दृष्टि में स्त्री–पुरूष दोनों ही एक समान थे तथा दोनों ही मोक्ष प्राप्ति के अधिकारी है। अतः कोई भी स्त्री इस धर्म को स्वीकार कर सकती है।

(xiii) वेदों में विश्वास :–जैन धर्मावलम्बी वेदों को ईश्वरीय ज्ञान नहीं मानते हैं वरन् इन्हें मनुष्य द्वारा रचित मानते हैं यही कारण है कि जैन धर्मावलम्बियों का वेदों में जरा सा भी विश्वास नहीं है।

(xiv) यज्ञ, पशु–बलि एवं कर्मकाण्डों में अविश्वास– जैन धर्मावलम्बियों का हिंसा में विश्वास था, अतः वे पशुबलि तथा यज्ञ जैसे कर्मकाण्डों के घोर विरोधी थे, क्योंकि इससे हिंसा होती थी।

(xv) गुणव्रत–जैन धर्म के अन्तर्गत तीन गुण व्रत निम्नलिखित हैं –

1. दिग्व्रत – प्रत्येक दिशा में निर्धारित दूरी के आगे भ्रमण न करना।
2. अनर्थ दण्डव्रत – प्रयोजनहीन वस्तु जो पाप में वृद्धि करती है उनका त्याग करना।
3. देशव्रत – समयानुकूल भ्रमण की दूरी में और कमी करना।

इन तीनों का पालन करना आवश्यक बताया गया।

(xvi) शिक्षाव्रत– गुणव्रतों के अतिरिक्त जैन धर्म में चार शिक्षाव्रतों का भी उल्लेख किया गया है। ये शिक्षाव्रत निम्नलिखित हैं –

1. अतिथि सम्विभाग–अर्थात्–दान–दक्षिणा देना, पूजा करना तथा अतिथि को भोजन कराना।
2. सामयिक –अर्थात् पाप मुक्त हो चिन्तन करना।
3. प्रोषोधोपवास–अर्थात् सप्ताह में एक बार व्रत–उपवास रखना।
4. भोगोपभोग–अर्थात् भोजन की मात्रा का निर्धारण।

(xvii) तीर्थकरों में विश्वास :–जैन अनुयायी 24 तीर्थकरों में अटूट विश्वास रखते हैं वे इन्हें सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान मानते हैं। तीर्थकरों में महावीर स्वामी को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है।

प्रशिक्षु चर्चा करे– जैन धर्म की उन्नति एवं प्रसार किन कारणों से हुई?

जैन धर्म की उन्नति अथवा प्रसार– प्रशिक्षु चर्चा उपरान्त स्पष्ट करें कि भारत में जैन धर्म के प्रचार एवं प्रसार के प्रमुख कारण निम्नवत् थे।

1. तत्कालीन राजाओं का समर्थन एवं संरक्षण जैन धर्म को प्राप्त हुआ।
2. जैन धर्म के सिद्धान्त अत्यन्त सरल थे।
3. जैन धर्म सामाजिक समानता के सिद्धान्त पर आधारित था।
4. इस धर्म के सिद्धान्त अत्यन्त साधारण बोलचाल की भाषा में लिखे गए थे।
5. ज्ञान प्राप्ति पश्चात् महावीर स्वामी ने जैन संघ की स्थापना की थी। जैन संघ ने जैन धर्म के प्रचार–प्रसार में अद्वितीय भूमिका निभाई।

जैन धर्म का प्रचार–प्रसार बड़े उत्साह के साथ किया गया। परिणामस्वरूप यह धर्म भारत का प्रमुख धर्म बन गया और इस धर्म के अनुयायियों ने भी बहुत अधिक प्रगति की। परन्तु धीरे–धीरे इस धर्म की लोकप्रियता घटने लगी और यह धर्म पतन की ओर अग्रसर हो चला।

प्रशिक्षु चर्चा करें कि जैन धर्म के पतन के लिए कौन से कारण उत्तरदायी थे ?

चर्चा बिन्दु–

- जैन धर्म को राज्य धर्म के रूप में प्रतिष्ठित न होना
- प्रचार साधनों का अभाव जाति प्रथा का पुनरागमन
- कठोर एवं अव्यावहारिक सिद्धान्त

- दार्शनिक क्लिष्टता
- अन्य धर्मों से प्रतिद्वन्द्विता
- साम्प्रदायिकता विभाजन
- जैन साहित्य की भाषा
- अहिंसा पर बल
- ब्राहमण धर्म से सांलग्न (सांलग्न्य)
- विदेशी आक्रमण

चर्चा उपरान्त उपर्युक्त बिन्दुओं को स्पष्ट भी करें यथा –

- महावीर स्वामी के प्रयासों से अनेक राजघरानों ने जैन धर्म को स्वीकार किया परन्तु इस धर्म को कभी राजधर्म घोषित नहीं किया गया।
- महावीर स्वामी की मृत्यु के बाद जैन भिक्षुओं ने इस धर्म का प्रचार नहीं किया।
- धर्म व्यवस्था में जाति प्रथा का पुनः प्रवेश हो गया।
- मोक्ष प्राप्ति के लिए कठोर तप, शारीरिक कष्ट तथा उपवास पर विशेष बल दिया गया।
- जैन दर्शन के स्यादवाद, अनेकान्तवाद, द्वैतवाद, तत्वज्ञान आदि को समझना साधारण जनता के वश की बात न थी। परिणामतः यह धर्म तपस्वियों तक ही सीमित रहा।
- ब्राहमण बौद्ध धर्म के प्रतिद्वन्दी बन गए। इस धार्मिक प्रतिद्वन्द्विंता से जैन धर्म टक्कर न ले सका और पतन की ओर अग्रसर हो गया।
- जैन मतावलम्बियों में आन्तरिक मतभेद होने से यह धर्म दो सम्प्रदायों–दिगम्बर एवं श्वेताम्बर में विभक्त हो गया।
- जैन साहित्य का लेखन प्रारम्भ में प्राकृत भाषा में किया गया था परन्तु बाद में जैन साहित्य संस्कृत में लिखा जाने लगा, जिसे जनसाधारण को समझने में कठिनाई हुई।
- जैन धर्म में अहिंसा पर आवश्यकता से अधिक बल दिया गया, जैसे–समस्त प्राणी, बीज, अंकुर, पुष्प, अण्डे, ओले आदि सभी सजीव हैं तथा हिंसा के बारे में विचार करना भी हिंसा है। ये सभी ऐसे तथ्य थे जिनका पालन करना जनता के लिए सम्भव नहीं था।
- ब्राहमण धर्म के समान ही जैन धर्म में भी अनेक दोष उत्पन्न हो गए थे।
- विदेशी आक्रमणकारियों ने जैन मन्दिरों एवं मूर्तियों को ध्वस्त किया और जैन साहित्य को अग्नि की भेंट चढ़ा दिया। जैन धर्मावलम्बी अहिंसावादी थे, अतः उन्होंने आक्रमणकारियों का सामना नहीं किया और जैन धर्म पतन की ओर उन्मुख हो चला।

बौद्धधर्म

भारत शुरू से ही धार्मिक संस्कारों वाला देश रहा है। बौद्ध धर्म के प्रवर्तक महात्मा बुद्ध का जन्म नेपाल की तराई में स्थित कपिलवस्तु के समीप 'लुम्बिनी ग्राम' में शाक्य क्षत्रिय कुल के 'राजा शुद्धोधन' के यहाँ हुआ था। इनके बचपन का नाम 'सिद्धार्थ' था। इनकी माता का नाम 'महामाया' था। इनके जन्म के सातवें दिन ही इनकी माता का निधन हो गया। अतः इनका पालन–पोषण उनकी मौसी 'प्रजापति गौतमी' ने किया था इसीलिए वे गौतम के नाम से चर्चित थे।

इनके जन्म पर कालदेव एवं कौडिन्य ने भविष्यवाणी भी की थी कि यह या तो चक्रवर्ती राजा बनेगें या फिर महापुरूष। बचपन से ही उनकी गम्भीरता और आध्यत्मिकता के प्रति उनके रूझान को देखकर उनके पिता शुद्धोधन ने 16 वर्ष की आयु में उनका विवाह 'यशोधरा' नामक राजकुमारी से कर दिया। 28 वर्ष की अवस्था में उनके एक पुत्र हुआ जिसका नाम 'राहुल' रखा गया। इतना सभी होने पर भी इनका मन दाम्पत्य जीवन में नहीं लगा। सांसारिक दुखों के बन्धनों ने उन्हें बराबर अशान्त बनाए रखा और एक दिन 29 वर्ष की आयु में गौतम ने गृह त्याग दिया। इस घटना को बौद्ध धर्म में 'महाभिनिष्क्रमण' कहा गया। गृह त्याग के पश्चात् लगभग सात वर्ष तक ज्ञान की खोज में वे इधर से उधर भटकते रहे। लगभग 35 वर्ष की आयु में वह बिहार स्थित 'उरूवेला' की सुरम्य वनस्थली पहुँचे। यहाँ पर उन्हें 'कौण्डिन्य' आदि पाँच साधक मिले। बाद में यह 'उरूबेला' ही बौद्ध गया के नाम से प्रचलित हुआ। यही वह स्थान है जहाँ पीपल के पेड़ के नीचे गौतम को समाधि लगाने के 49वें दिन ज्ञान प्राप्त हुआ तभी से वे बुद्ध तथा पीपल का पेड़ 'बोधि वृक्ष' के नाम से जाना जाने लगा।

ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् महात्मा बुद्ध ने वाराणसी के समीप सारनाथ में अपने पाँच शिष्य (जो कि जाति के ब्राहमण थे) को पहली बार उपदेश दिया। बुद्ध का यह प्रथम उपदेश बौद्ध परम्परा में 'धर्मचक्र प्रवर्तन' के नाम से जाना जाता है। इसके पश्चात् उन्होंने कई राज्यों–मगध, कौशल, कौशाम्बी आदि का भ्रमण किया और वहाँ उपदेश दिए। उन्होंने मगध को अपना प्रमुख प्रचार केन्द्र बनाया।

महात्मा बुद्ध के उपदेश इतने प्रभावी थे, कि अनेक शासक, यथा–मगध का शासक बिम्बसार, कौशाम्बी का उदयन तथा कौशल का प्रसेनजित बुद्ध के अनुयायी बन गए। बुद्धत्व प्राप्ति के पश्चात् बुद्ध ने अपना सम्पूर्ण जीवन बौद्धधर्म के प्रचार–प्रसार में लगा दिया। 483 ई0पू0 में जब बुद्ध लगभग अस्सी वर्ष के थे, उनका निधन कुशीनगर में हुआ। बुद्ध के निधन की घटना को बौद्ध परम्परा 'महापरिनिर्वाण' के नाम से जाना जाता है।

बौद्ध धर्म के सिद्धान्त

1. चार आर्य सत्य
2. आष्टांगिक मार्ग एवं दसशील
3. क्षणिकवाद
4. अनीश्वरवाद
5. प्रतीत्य समुत्वाद
6. कर्मवाद
7. अनात्मवाद
8. पुनर्जन्म
9. कर्मकाण्ड
10. जाति–पांति का खण्डन
11. अहिंसा पर बल
12. वेदों में अविश्वास
13. निर्वाण

बौद्धधर्म के सिद्धान्त– महात्मा बुद्ध ने अपने सिद्धान्तों का प्रचार मौखिक रूप से ही किया। महात्मा बुद्ध मुख्य रूप से एक धर्म सुधारक थे। उन्होंने किसी नवीन धर्म की स्थापना करने के स्थान पर प्राचीन धर्म में चली आ रही कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया था। महात्मा बुद्ध का धर्म अत्यन्त व्यावहारिक था। महात्माबुद्ध का मत था कि मनुष्य के जीवन में आदि से अन्त तक दुख ही दुख है। अतः दुख से मुक्त होने के लिए उन्होनें कुछ सिद्धान्त बनाए।

चर्चा बिन्दु– दुख, दुख समुदाय, दुख, निरोधमार्ग। चर्चा उपरान्त प्रशिक्षु बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों को स्पष्ट करें। यथा–

1. चार आर्य सत्य– चार आर्य सत्य हैं–दुख, दुख समुदाय, दुख निरोध, दुख निरोध मार्ग।

- दुख– महात्मा बुद्ध के अनुसार जीवन में दुख ही दुख है, अतः क्षणिक सुखों को सुख मानना अदूरदर्शिता है।

- दुख समुदाय– महात्मा बुद्ध के अनुसार दुख का कारण तृष्णा है। इन्द्रियों को जो वस्तुएं प्रिय लगती हैं, उनको प्राप्त करने की इच्छा ही तृष्णा है और तृष्णा का कारण अज्ञान है।
- दुख निरोध– महात्मा बुद्ध के अनुसार दुखों से मुक्त होने के लिए उसके कारणों का निवारण आवश्यक है। अतः तृष्णा पर विजय प्राप्त करने से दुखों से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है।
- दुख निरोध मार्ग– महात्मा बुद्ध के अनुसार दुखों से मुक्त होने अथवा निर्वाण प्राप्त करने के लिए जो मार्ग है, उसे आष्टांगिक मार्ग कहा जाता है। आठ मार्गों का पालन करने से दुख का नाश सम्भव है।

2. आष्टांगिक मार्ग– ये मार्ग इस प्रकार से आठ मार्ग पर है इसे मध्य मार्ग भी कहते हैं यथा–

(1) सम्यक् दृष्टि– मिथ्या दृष्टि को त्यागकर यथार्थ स्वरूप पर ध्यान देना चाहिए।

(2) सम्यक् संकल्प– दूसरों के प्रति द्वेष एवं हिंसा का परित्याग करने का संकल्प लेना चाहिए।

(3) सम्यक् वाक्– झूठे अप्रिय एवं निन्दा वचन नहीं बोलना चाहिए।

(4) सम्यक् कर्मान्त– अहिंसा एवं इन्द्रिय संयम ही सम्पक् कर्मान्त है।

(5) सम्यक् आजीविका– मनुष्य को जीवकोपार्जन के लिए पवित्र रास्ता चुनना चाहिए।

(6) सम्यक् व्यायाम– शुद्ध ज्ञान युक्त प्रयत्न, जिसे धर्म की दृष्टि उत्पन्न हो, सम्यक् व्यायाम है।

(7) सम्यक् स्मृति– इसके अन्तर्गत निरन्तर चेतन रहने की आवश्यकता पर बल दिया जाता है।

(8) सम्यक् समाधि– चित को एकाग्र रखने को कहते हैं। सम्यक् समाधि प्राप्त करने पर मनुष्य निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

दसशील– प्रशिक्षु दसशील के बारे में चर्चा कर स्पष्ट करें कि –महात्मा बुद्ध ने मनुष्य के जीवन का परम् लक्ष्य निर्वाण प्राप्ति बताया। इस निर्वाण प्रााप्ति हेतु महात्मा बुद्ध ने आचरण की शुद्धता पर विशेष बल दिया। आचरण की शुद्धता हेतु उन्होंने 'दसशीलों' के पालन को आवश्यक बताया। ये 'दसशील' इस प्रकार हैं –

(1) अहिंसा
(2) सत्य
(3) अस्तेय अर्थात चोरी न करना
(4) अपरिग्रह अर्थात् धन संग्रह न करना
(5) ब्रह्मचर्य
(6) नृत्य एवं संगीत का त्याग
(7) सुगन्धित पदार्थों का त्याग
(8) असमय भोजन का त्याग
(9) कोमल शैया का त्याग
(10) कामिनी कंचन का त्याग

उपर्युक्त दस शीलों में से प्रथम पांच तो गृहस्थों के लिए एवं भिक्षुओं के लिए सभी शील थे। जिनके पालन करने से शुद्ध आचरण सम्भव हो सकता है।

3. क्षणिक वाद– महात्मा बुद्ध संसार को नित्य न मानकर क्षण–भंगुर मानते थे। उनका विश्वास था कि संसार की प्रत्येक वस्तु क्षणिक एवं निरन्तर परिवर्तनशील है। यह मनुष्य का श्रम है कि वह सांसारिक वस्तुओं को स्थायी समझ लेता है।

4. अनीश्वरवाद– महात्मा बुद्ध अनीश्वरवाद थे। उनका विचार था कि संसार की उत्पत्ति में ईश्वरीय सत्ता का कोई योगदान नहीं है, वरन् कार्य–कारण की श्रृंखला से यह संसार चलता रहता है अर्थात् संसार के कर्ता के रूप में ईश्वर का अस्तित्व नहीं है।

5. प्रतीत्म समुत्पाद– यह बौद्ध दर्शन तथा सिद्धान्त का मूल तत्व है। महात्मा बुद्ध का विचार था कि एक वस्तु के विनाश के पश्चात् दूसरे की उत्पत्ति होती है। प्रत्येक घटना के पीछे कार्य–कारण का सम्बन्ध है। कार्य–कारण का यही सिद्धान्त 'प्रतीत्म समुत्पाद' के नाम से जाना जाता है।

6. कर्मवाद– महात्मा बुद्ध का कर्म में विश्वास था। उनका कहना था कि यज्ञ, पूजा, बलिदान तथा स्मृति आदि से मनुष्य अपने कर्मों के फल को नहीं मिटा सकता अर्थात मनुष्य जैसे कर्म करता है वैसे ही फल को प्राप्त करता है।

7. अनात्मवाद– महात्मा बुद्ध के अनुसार आत्मा नाम की कोई वस्तु नहीं है। उनके अनुसार मनुष्य का व्यक्तित्व कुछ संस्कारों का समूह है।

8. पुनर्जन्म– ईश्वर और आत्मा के अस्तित्व में विश्वास न होते हुए भी बुद्ध का पुनर्जन्म में विश्वास था, परन्तु इस सम्बन्ध में उनका विचार है कि पुनर्जन्म आत्मा का नहीं वरन् अनित्य, अंहकार का होता है। वे पुनर्जन्म को भी कार्य कारण नियम द्वारा संचालित मानते थे।

9. कर्मकाण्ड, यज्ञ एवं पशुबलि में अविश्वास– पशुओं की बलि चढ़ाना तथा यज्ञ आदि में महात्मा बुद्ध का किंचित मात्र भी विश्वास नहीं था। कर्मकाण्डों के वे घोर विरोधी थे। यही कारण है कि वे ब्राहमणों को भी उच्च स्थान देने के पक्ष में नहीं थे।

10. जाति–पाँति का खण्डन– महात्मा बुद्ध का जाति–पाँति में कोई विश्वास नहीं था, वरन् वे सामाजिक एकता में विश्वास रखते थे। उनका मत था कि बौद्ध धर्म का अनुसरण कोई भी कर सकता है। चाहे वह किसी भी जाति का हो उन्होंने एक स्थान पर कहा– ''हे भिक्षुओं ! जिस प्रकार बड़ी –बड़ी नदियाँ समुद्र में गिरकर अपना अस्तित्व खो देती हैं, उसी प्रकार भिक्षु के वस्त्र धारण करने पर उनमें वर्ण–भेद नहीं रहता। धार्मिक जीवन में सब ऊँच–नीच समान हो जाते हैं।''

11. अहिंसा पर बल– महात्मा बुद्ध अहिंसा के पक्षधर थे। उन्होंने बुद्धत्व प्राप्त करने के पश्चात् जीवनपर्यन्त 'अहिंसा परमोधर्म' के सिद्धान्त का प्रचार–प्रसार किया। उनका मत था कि मनुष्य को अपने मन, वचन, कर्म से किसी जीव को दुख नहीं पहुँचाना चाहिए।

12. वेदों में अविश्वास– महात्मा बुद्ध ने वेदों को ईश्वर कृत नहीं माना तथा उनमें (वेदों) में अविश्वास प्रकट किया। उनका मत था कि मनुष्य को सदैव अपने अनुभव द्वारा ही अपना आध्यात्मिक मार्ग खोजना चाहिए उसे किसी गुरू ग्रन्थ अथवा किसी बाहरी साधन का आश्रय नहीं लेना चाहिए।

13. निर्वाण– महात्मा बुद्ध के अनुसार निर्वाण वह अवस्था है जिसमें ज्ञान की ज्योति द्वारा अज्ञान रूपी अन्धकार की समाप्ति हो जाती है अर्थात् मनुष्य की समस्त वासनाओं और तृष्णाओं का नाश हो जाता है। निर्वाण की प्राप्ति सत्कर्मों द्वारा की जा सकती है।

बौद्ध साहित्य– बौद्ध साहित्य मुख्यतः त्रिपिटकों में समाहित हैं। इसके अतिरिक्त दीपवंश, महावंश, मिलिन्दपन्हों, जातक कथाएं तथा संस्कृत भाषा में लिखित महावस्तु बुद्धचरित्र, सौंदरानन्द तथा महाविभाष आदि बौद्ध साहित्य के उच्च कोटि के प्रमुख ग्रन्थ हैं।

जातक कथाएं– जातक कथाएं भाषा में लिखी गई हैं। इसमें बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाएं तथा बुद्धकालीन धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का वर्णन किया गया है।

मिलिन्दपन्हों– मिलिन्दपन्हों में यूनानी शासक मिलिन्द तथा बौद्ध भिक्षु नागसेन के मध्य दार्शनिक विषय को लेकर हुए वाद–विवाद का वर्णन किया गया है।

दीपवंश एवं महावंश– इसमें तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक दशा तथा श्रीलंका के राजवशों का वर्णन किया गया है। ये दोनों ग्रन्थ पाली भाषा में लिखे गए हैं। इनकी रचना श्रीलंका में की गई थी।

इन्हें भी जानें–

(i) हीनयान– हीनयान शब्द का अर्थ है निम्न मार्ग। इस शब्द का प्रयोग महायानियों द्वारा अपने विरोधियों के लिए किया गया था।

(ii) महायान– महायान शब्द का अर्थ है उत्कृष्ट मार्ग। इस सम्प्रदाय की स्थापना नागार्जुन द्वारा की गई थी। इसके अनुयायी महायानी कहलाए।

बौद्ध संगीति– बौद्ध धर्म की व्याख्या हेतु बौद्ध सभाओं का आयोजन किया गया, जिन्हें बौद्ध संगीति के नाम से जाना जाता है। बौद्ध धर्म की व्याख्या हेतु चार बौद्ध संगीतियों का आयोजन हुआ।

प्रशिक्षु चर्चा करें कि चार बौद्ध समीतियों का आयोजन किसने एवं कब किया ? चर्चा उपरान्त स्पष्ट करें कि–

(i) प्रथम बौद्ध संगीति– महात्मा बुद्ध के निर्वाण प्राप्त कर लेने के कुछ समय पश्चात् ही 483 ई0पू0 में अजातशत्रु के शासन काल में बिहार स्थित राजगृह के शप्तपर्णी गुहा में प्रथम बौद्ध संगीति का आयोजन किया गया। इस संगीति में बुद्ध के उपदेशों को दो पिटकों–विनयपिटक एवं सुत्तपिटक में संकलित किया गया।

(ii) द्वितीय बौद्ध संगीति– बौद्ध भिक्षुओं में उत्पन्न आपसी मतभेदों को दूर करने के लिए महात्मा बुद्ध के निर्वाण के लगभग 100 वर्ष बाद 383 ई0पू0 चुल्लबंग (वैशाली) में कालाशोक के शासन काल में द्वितीय बौद्ध संगीति का आयोजन किया गया।

(iii) तृतीय बौद्ध संगीति– तृतीय संगीति का आयोजन मौर्यवंशीय शासक अशोक के शासन काल में 250 ई0पू0 में पाटलिपुत्र में किया गया। इस संगीति में लगभग 1,000 भिक्षुओं ने भाग लिया।

(iv) चतुर्थ बौद्ध संगीति– चतुर्थ बौद्ध संगीति का आयोजन कुषाणवंशीय शासक कनिष्क के शासन काल में प्रथम अथवा द्वितीय शताब्दी ई0 में काश्मीर के कुण्डलवन में किया गया। इस संगीति की अध्यक्षता वसुमित्र ने की। इस संगीति के पश्चात् बौद्ध अनुयायी हीनयान तथा महायान दो स्वतंत्र सम्प्रदायों में विभक्त हो गए।

बौद्ध धर्म की उन्नति अथवा प्रसार

महात्मा बुद्ध के प्रयासों से बौद्ध धर्म खूब फला फूला और सर्वत्र प्रचलित हुआ। बौद्ध धर्म की उन्नति अथवा प्रसार के निम्नलिखित कारण हैं –

1. बुद्ध का व्यक्तित्व– बुद्ध के व्यक्तित्व के विशिष्ट गुण–सहनशीलता, क्षमा, दया, स्नेह, करूणा आदि थे। उनकी सरलता, अकाट्य तर्क एवं प्रभावशाली उपदेश ये कुछ ऐसी बातें थीं जो राजा से लेकर रंक तक प्रत्येक व्यक्ति को उनकी ओर आकर्षित की और वह बुद्ध का अनुयायी बन गया।

2. सिद्धान्तों की सरलता एवं व्यावहारिकता– बौद्ध धर्म के सरल एवं व्यावहारिक सिद्धान्तों ने जनसाधारण को उनके कर्तव्यों का बोध कराया तथा स्वावलम्बी बनने का उपदेश दिया ।

3. सामाजिक समानता का सिद्धान्त– बुद्ध ने जाति पांति का विरोध कर समानता एवं नैतिकता, स्वतंत्रता पर विशेष बल दिया। जिससे निम्न वर्ग के भी लोग उनके अनुयायी बन गए। तथा बौद्ध धर्म शीघ्र ही सर्वत्र प्रचलित हो गया।

4. बौद्ध धर्म का लचीलापन– ब्राहमण धर्म की तुलना में बौद्ध धर्म अत्यन्त लचीला था। इसमें परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन भी सम्भव था। अतः विदेशी भी इस धर्म की ओर आकृष्ट हुए और इस धर्म का विकास हुआ।

5. लोक भाषा एवं रोचक शैली– महात्मा बुद्ध द्वारा अपनाई गई शैली अत्यन्त ही सरल एवं रोचक थी। उन्होंने अपने उपदेश सदैव लोक भाषा पाली में ही दिए। जनसाधारण ने उनके उपदेशों को सुगमता से ग्रहण किया। देखते–देखते उनके अनुयायियों की संख्या में अपार वृद्धि हो गई।

6. मठों की स्थापना– बुद्ध ने बौद्ध धर्म की उन्नति के लिए मठों की स्थापना की जिसमें उनके बौद्ध भिक्षु रहकर प्रचार–प्रसार कार्य सरलता से कर सकें। इससे भिक्षुओं में भ्रातत्व की भावना विकसित हुई और धर्म का उन्होंने जोर शोर से प्रसार किया।

7. राजकीय संरक्षण– बौद्ध धर्म की अनेक राजाओं यथा–बिम्बसार, प्रसेनजित, प्रद्योत, अशोक, कनिष्क, मिलिन्द, हर्ष आदि का राजकीय प्रश्रय प्राप्त था। तभी इस धर्म की उन्नति सम्भव हो सकी।

बौद्ध धर्म के पतन के कारण– भारत में इठी शताब्दी ई0पू0 से लेकर गुप्त शासकों के उत्थान तक बौद्ध धर्म ने निरन्तर उन्नति की। परन्तु गुप्त शासकों के काल में यह धर्म पतन की ओर अग्रसर हो गया। इसके पतन के क्या कारण थे

प्रशिक्षु बौद्ध धर्म के पतन के कारण के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं पर चर्चा करें –

- बौद्ध धर्म में भ्रष्टाचार का पनपना
- हिन्दु धर्म में सुधार
- आन्तरिक मतभेद
- राजकीय संरक्षण का अन्त
- विदेशी आक्रमण
- राजपूतों का उत्कर्ष

प्रशिक्षु चर्चा उपरान्त स्पष्ट करें कि –

- बौद्ध धर्म में भी बाद में जटिलता एवं कट्टरता का समावेश हो गया और इसका मौलिक स्वरूप ही बदल गया। परिणामतः अनुयायी में घटोत्तरी होने लगी।
- संघ एवं मठों में भ्रष्टाचार पनपने लगा। अनुयायी धर्म प्रचार न करके पारस्परिक विवादों में ग्रस्त होने लगे।
- शंकराचार्य, कुमारिल भट्ट तथा रामानुज आदि दार्शनिकों ने हिन्दू धर्म के दोषों को दूर किया। परिणामतः लोग पुनः उसकी ओर आकृष्ट हुए।
- शुंग, कण्व, आंध, सातवाहन शासकों ने ब्राहमण धर्म को संरक्षण दिया बौद्ध धर्म को नहीं।
- विदेशी आक्रमणकारियों ने बौद्ध संस्कृति के प्रतीक मठों, विहारों को नष्ट कर दिया जिससे यह धर्म शीघ्र ही लुप्त प्रायः हो गया।
- सम्राट हर्ष के बाद राजपूत शक्ति का उदय हुआ। राजपूत बौद्ध धर्म के अहिंसावादी सिद्धान्त के विरोधी थे अतः ये बौद्ध धर्म के पतन का प्रमुख कारण बना।

बोध प्रश्न

1. जैन धर्म से आप क्या समझते हैं? जैन धर्म के प्रमुख सिद्धान्तों का वर्णन करिए।
2. जैन धर्म की स्थापना किसने की? इस धर्म के उत्थान एवं पतन के कारण बताइए।
3. बौद्ध धर्म के संस्थापक कौन थे? इस धर्म के उत्थान एवं पतन के कारण लिखिए।

सौरमण्डल

भूमिका
- सौरमण्डल की परिभाषा
- सूर्य
- ग्रह
- उपग्रह
- चन्द्रमा
- क्षुद्रग्रह
- धूमकेतु
- उल्का एवं उल्का पिंड
- तारा मण्डल
- आकाश गंगा

मानव मस्तिष्क में सर्वप्रथम एक क्रमबद्ध इकाई के रूप में जिस विश्व की संकल्पना परिलक्षित हुई, उसे 'ब्रह्माण्ड' कहा गया। ब्रह्माण्ड वस्तुतः अंग्रेजी के कॉस्मास ***(Cosmos)*** का पर्याय है जिसका अर्थ होता है–सुव्यवस्था। ब्रह्माण्ड से सम्बन्धित अध्ययन को ब्रह्माण्ड विज्ञान कहते हैं।

सूर्य, चन्द्रमा और रात के समय आकाश में जगमगाते लाखों पिंड 'खगोलीय पिंड' कहलाते हैं। इन्हें आकाशीय पिंड भी कहा जाता है। हमारी पृथ्वी भी एक खगोलीय पिंड है।

चर्चा करें कि रात में खुले आकाश में दिखाई देने वाले आकाशीय पिण्ड आकाश में लाखों बत्तियों की भांति प्रकाशित हैं, क्या हैं ?

कुछ आकाशीय पिंड बड़े आकार वाले तथा गर्म होते हैं। वास्तव में ये पिंड गैसों के बने होते हैं और इनके पास स्वयं की उष्मा व प्रकाश होता है जिसे वे अधिक मात्रा में उत्सर्जित करते हैं। इन खगोलीय पिण्डों को तारा ***(star)*** कहते हैं। सूर्य भी एक तारा है। अन्य तारों की तुलना में सूर्य हमारे निकट है जिसके कारण यह हमें आकार में बड़ा एवं चमकीला दिखाई पड़ता है। हमारे सूर्य जैसे लाखों तारे और भी हैं जो हमसे अधिक दूर होने के कारण हम उनकी ऊष्मा या प्रकाश को महसूस नहीं कर पाते और वे आकार में छोटे दिखाई देते हैं।

कल्पना करें कि
- कुछ दूरी से देखने पर सभी वस्तुएं छोटी दिखाई देती हैं।
- अधिक ऊँचाई पर उड़ रहा हवाई जहाज आकार में छोटा दिखाई देता है और वही हवाई जहाज कम ऊँचाई पर उड़ता है तो आकार में बड़ा दिखाई देता है।

खगोलीय पिण्डों का एक दूसरा वर्ग भी है जिनमें स्वयं का प्रकाश व ऊष्मा नहीं होती है। वे केवल सूर्य जैसे तारों से प्राप्त प्रकाश को ही परावर्तित करते हैं। ऐसे आकाशीय पिण्ड 'ग्रह' कहलाते हैं। ग्रह को अंग्रेजी भाषा में प्लेनेट ***(Planet)*** कहते हैं जो ग्रीक भाषा के शब्द प्लेनेटाई से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है – चारों ओर घूमने वाला। हमारी पृथ्वी भी एक ग्रह है। इसका स्वयं का प्रकाश नहीं है बल्कि यह सूर्य से ऊष्मा और प्रकाश प्राप्त कर प्रकाशित होती है।

सौरमण्डल ***(Solar System)***

सूर्य, ग्रह, उपग्रह तथा अन्य खगोलीय पिंड जैसे क्षुद्र ग्रह, उल्काएं, धूमकेतु आदि को संयुक्त रूप से सौर मंडल या सौर परिवार कहते हैं। सूर्य अपने परिवार का मुखिया है और अपने परिवार के सभी सदस्यों को ऊष्मा व प्रकाश प्रदान करता है। सूर्य के मुखिया होने के कारण ही इस परिवार को सौर परिवार या सौर मण्डल कहते हैं।

सूर्य

सौर मण्डल का आकार तश्तरीनुमा है जिसके मध्य में सूर्य की स्थिति है। यह सौर परिवार का सबसे बड़ा सदस्य है। हमारी पृथ्वी से तो यह दस लाख गुना बड़ा है। यह गर्म गैसों से बना है। इसका गुरूत्वाकर्षण बल इससे सौर परिवार के सदस्यों को बाँधे रखता है। सूर्य, सौरमण्डल के लिए प्रकाश व ऊष्मा का एकमात्र स्रोत है। इस ऊर्जा के अभाव में पृथ्वी बिल्कुल ठंडी और निर्जीव हो जायेगी। सूर्य पृथ्वी से लगभग 15 करोड़ किलोमीटर दूर है। प्रकाश की गति लगभग 3 लाख किलोमीटर प्रति सेकेंड है। इतनी तीव्र गति से चलते हुए सूर्य का प्रकाश लगभग 8 मिनट में पृथ्वी पर पहुँच पाता है। सौरमण्डल के कुल द्रव्यमान का 99.85% भाग सूर्य में संचित है। सूर्य की संरचना का 98% भाग हाइड्रोजन तथा हीलियम से बना है।

ग्रह

हमारे सौर परिवार में आठ ग्रह हैं। सूर्य से दूरी के अनुसार इनका क्रम इस प्रकार है–बुध (मर्करी), शुक्र (वीनस), पृथ्वी (अर्थ), मंगल (मार्स), बृहस्पति (जूपिटर), शनि(सैटर्न), अरूण (यूरेनस), वरूण (नेप्च्यून)। इस प्रकार सूर्य के सबसे निकट बुध ग्रह है और वरूण सबसे दूर है

सूर्य बढ़ती दूरी के अनुसार ग्रहों के नाम याद करने का रोचक तरीका–
My Very Efficient Mother Just Served Us Nuts.

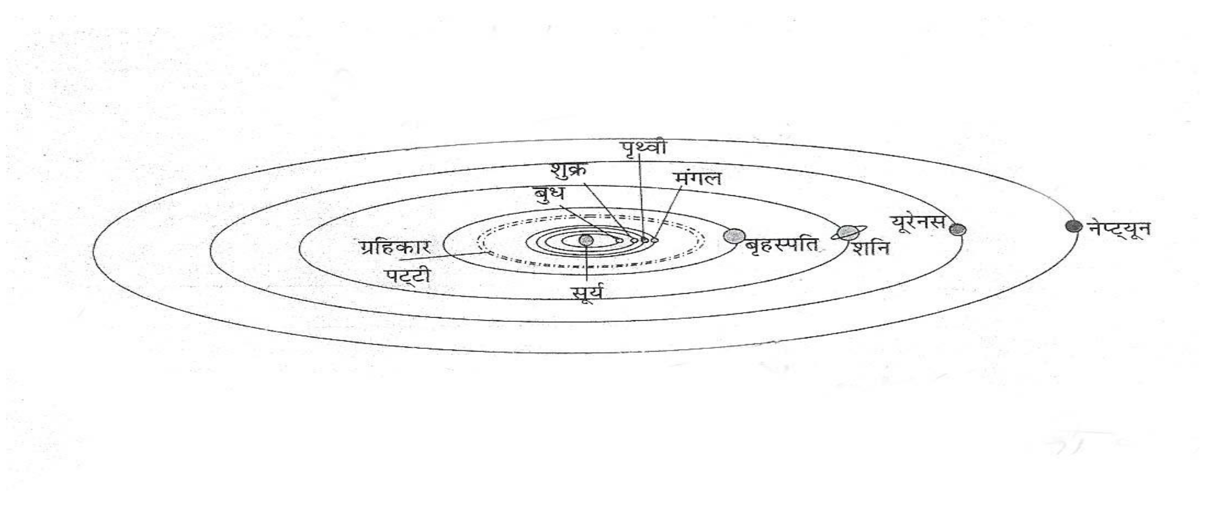

सौरमण्डल के सभी आठ ग्रह एक निश्चित दीर्घ वृत्ताकार पथ पर सूर्य का चक्कर लगाते हैं जिन्हे कक्षा ***(orbit)*** कहते हैं। अभी तक प्लूटो को नौवां ग्रह कहा जाता था किन्तु चेक गणराज्य के प्राग शहर में अन्तर्राष्ट्रीय खगोलीय संघ (I.A.U.) के 10 दिवसीय अधिवेशन में 75 देशों के 2500 वैज्ञानिकों ने समापन दिवस 24 अगस्त 2006 को निर्णय लिया कि प्लूटो अब ग्रह की श्रेणी से बाहर होगा। इसे बौना ग्रह कहा गया।

(I.A.U.) द्वारा ग्रह की नई परिभाषा दी गई– इसके अनुसार वह खगोलीय पिण्ड ग्रह कहलायेगा–

1. जो अपनी निश्चित कक्षा में सूर्य की परिक्रमा करते हैं
2. आकार में लगभग गोल हों
3. अन्य ग्रहों की कक्षा का अतिक्रमण नहीं करते हों।

ध्यातव्य है कि प्लूटो की कक्षा अन्य ग्रहों की तुलना में झुकी हुई है तथा यूरेनस की कक्षा का अतिक्रमण करती है। इसी तथ्य के आधार पर प्लूटो को सौरमण्डल के नौ ग्रहों के परिवार से बाहर कर दिया गया।

पृथ्वी से बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति व शनि ग्रह नग्न आँखों से दिखते हैं। ग्रहों के घटते हुए आकार के क्रम में नाम है – बृहस्पति, शनि, अरूण, वरूण, पृथ्वी, शुक्र, मंगल, बुध।

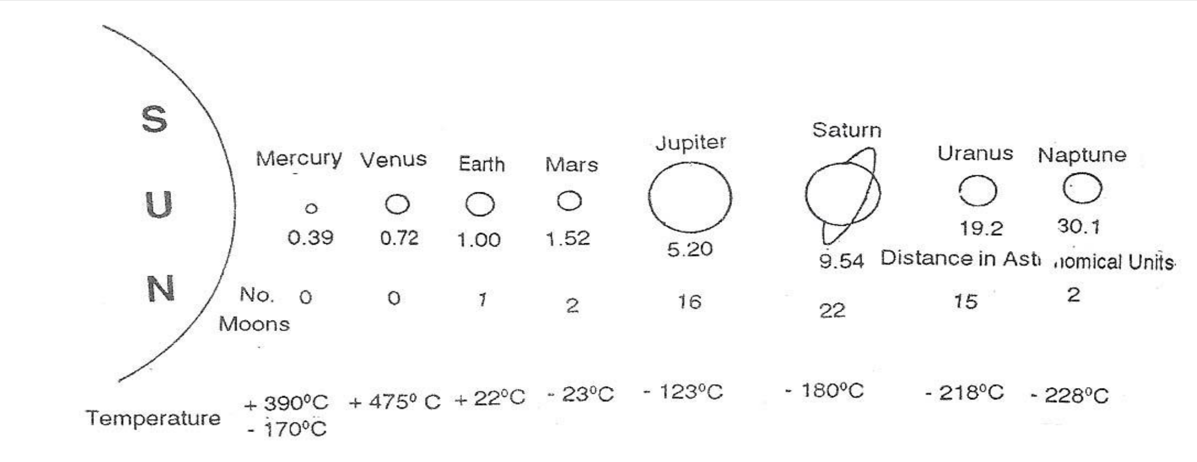

बुध ग्रह सूर्य से सर्वाधिक नजदीक स्थित है, यही कारण है कि इसका दैनिक तापान्तर सर्वाधिक है। इस ग्रह की कक्षीय गति सर्वाधिक है जो सूर्य के चारों ओर सबसे कम समय (88 दिन) में एक परिक्रमा पूरी कर लेता है। आकार में सबसे छोटा एवं सर्वाधिक तापान्तर के कारण वायुमंडल का अभाव पाया जाता है। बुध के पास अपना कोई उपग्रह नहीं है। शुक्र के अतिरिक्त बुध ग्रह को भी *प्रातः एवं सायं का तारा* कहा जाता है क्योंकि दोनों ही ग्रह सूर्य तथा पृथ्वी के मध्य में स्थित हैं। इसलिए सूर्योदय के पहले तथा सूर्यास्त के पश्चात् दिखते हैं। यद्यपि बुध तारा नहीं है तथापि अपनी चमक के कारण ही इसे उक्त संज्ञा प्राप्त है।

> रोचक तथ्य –
>
> खगोलीय पिंडों और उनकी गति के संबंधी अध्ययन करने वाले विद्वानों को खगोलशास्त्री कहते है। आर्यभट्ट प्राचीन भारत के प्रसिद्ध खगोलशास्त्री थे।

शुक्र ग्रह पृथ्वी के सबसे नजदीक है एवं द्रव्यमान, आकार में पृथ्वी के समान है इसलिए इसे पृथ्वी का ''बहन ग्रह'' ***(Sister Planet)*** भी कहा जाता है। सभी ग्रहों में शुक्र ग्रह सर्वाधिक चमकीला दिखता है। शुक्र के चमकीलेपन के कारण इसका घने बादलों से युक्त वायुमण्डल है। शुक्र ग्रह का भी अपना कोई उपग्रह नहीं है। इस ग्रह पर सर्वाधिक तापमान पाया जाता है। यह ग्रह घड़ी की सुई के अनुरूप घूर्णन करता है । शुक्र एवं यूरेनस दोनों पूर्व से पश्चिम घूर्णन करते हैं। इसीलिए यहाँ सूर्योदय पश्चिम दिशा में तथा सूर्यास्त पूरब दिशा में होता है।

मंगल ग्रह लाल रंग का दिखाई देता है, इसलिए इसे लाल ग्रह भी कहा जाता है। फोबोस तथा डीबोस, इसके दो उपग्रह हैं। इसी ग्रह पर सौर मंडल का सबसे ऊँचा पर्वत ओलिम्पस मीन्स अवस्थित है जो एक ज्वालामुखी पर्वत है।

बृहस्पति सभी ग्रहों में सबसे विशाल है इस कारण से ''मास्टर आफ गाड्स'' (Master of Gods) भी कहा जाता है। इसका द्रव्यमान शेष सभी ग्रहों के सम्मिलित द्रव्यमान से भी अधिक है। बृहस्पति ग्रह मुख्यतः हाइड्रोजन एवं हीलियम गैसों से मिलकर बना है। मेथेन गैसीय रूप में विद्यमान है। अब तक इसके कुल 28 प्राकृतिक उपग्रह ज्ञात हैं।

शनि ग्रह को गैसों का गोला भी कहा जाता है। अपने तीव्र घूर्णन के कारण ही यह सौरपरिवार का सबसे चपटा ग्रह है। शनि ग्रह के चारों ओर तीन वलय हैं। वलयों को नंगी आँखों से नहीं देखा जा सकता। इस छल्ले (वलय) रूपी विशेषता के कारण शनि ग्रह को "आकाशगंगा सदृश्य ग्रह" (Galaxy like Planet) कहा जाता है। इस ग्रह के सर्वाधिक 30 उपग्रह हैं। इसका सबसे बड़ा उपग्रह "टाइटन" है।

उपग्रह

अंग्रेजी में उपग्रह को सैटेलाइट कहते हैं जिसका शाब्दिक अर्थ होता है– साथी या सहचर। उपग्रह अपने नाम को सार्थक करते हैं और साथ ही साथ सूर्य की भी परिक्रमा करते हैं। जैसे चन्द्रमा पृथ्वी का एक उपग्रह है। यह पृथ्वी की परिक्रमा करने के साथ–साथ सूर्य की भी परिक्रमा करता है। बुध व शुक्र को छोड़कर सभी ग्रहों के एक या उससे अधिक उपग्रह है।

तारा–वह खगोलीय पिंड जिनका अपना प्रकाश व ऊष्मा हो।
ग्रह– वह खगोलीय पिंड, जो सूर्य की परिक्रमा निश्चित पथ पर करता हो, दूसरे ग्रह की कक्षा का अतिक्रमण न करें।
उपग्रह–वह खगोलीय पिंड जो ग्रहों के चारों ओर उसी प्रकार परिक्रमा करता है जिस प्रकार एक ग्रह सूर्य की परिक्रमा करता है।

चन्द्रमा

पृथ्वी के एकमात्र उपग्रह चन्द्रमा का व्यास, पृथ्वी के व्यास का लगभग एक चौथाई है। पृथ्वी के बहुत पास होने के कारण ही यह बड़ा दिखता है। पृथ्वी से चन्द्रमा की दूरी लगभग 385,005 किमी0 है। चन्द्रमा द्वारा परावर्तित प्रकाश पृथ्वी तक सवा सेकेण्ड में पहुँचता है। चन्द्रमा पृथ्वी की एक परिक्रमा 27 दिन व 8 घण्टे में दूरी करता है। इतने ही समय में यह अपनी अक्ष पर भी घूर्णन करता है। यही कारण है कि हमें चन्द्रमा का सदैव एक भाग ही दिखलाई देता है। चन्द्रमा पर न पानी है न वायु।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें –

- पृथ्वी पर जीवन है, अन्य ग्रहों पर नहीं, क्यों ?
- भारत द्वारा कृत्रिम उपग्रहों के अन्तरिक्ष में छोड़ने सम्बन्धी जानकारी एकत्र करायें।

क्षुद्र ग्रह *(Asteroids)*

मंगल और बृहस्पति की कक्षाओं के बीच विशाल अन्तराल में अनेक छोटे–छोटे पिंड हैं जो सूर्य की परिक्रमा करते हैं, इन्हें क्षुद्रग्रह या ग्रहिकाएं कहते हैं। प्रत्येक क्षुद्रग्रह की अपनी कक्षा है जो एक विशाल क्षेत्र में अवस्थित है। ऐसा विश्वास है कि क्षुद्रग्रह द्रव्य के वह खण्ड हैं जो किसी कारण ग्रह का रूप नहीं ले पाये।

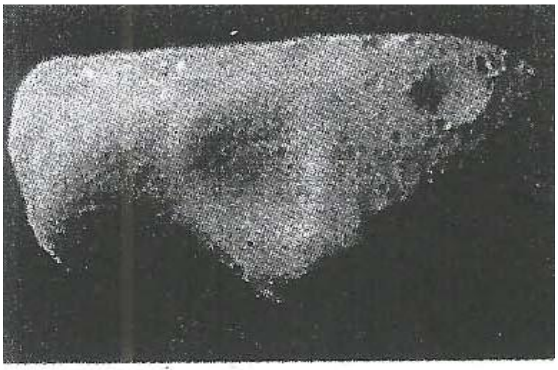

क्षुद्र ग्रह

धूमकेतु (पुच्छल तारा)

धूमकेतु बहुत छोटे आकार के खगोलीय पिंड हैं, जो दीर्घवृत्तीय कक्षाओं में सूर्य की परिक्रमा करते हैं। ये पृथ्वी से केवल तभी दृष्टिगोचर होते हैं जब वे सूर्य के बहुत निकट आ जाते हैं। इसकी विशेषता है एक छोटी चमकदार शीर्ष (head) और उसके पीछे एक लम्बी पूँछ। धूमकेतु की पूँछ सदैव सूर्य से विपरीत दिशा में रहती है। हैली ऐसा ही एक धूमकेतु है जो लगभग 76 वर्ष बाद प्रकट होता है।

उल्काएं एवं उल्का पिंड

उल्काएं, बहुत छोटे आकार के पत्थर जैसे पिंड हैं जो सूर्य के चारों ओर परिक्रमा कर रहे हैं। इनके अस्तित्व का ज्ञान हमें तब होता है, जब इनमें से कोई, संयोगवश पृथ्वी के वायुमण्डल में प्रवेश कर जाता है। जब कोई उल्का पृथ्वी के वायुमण्डल में प्रवेश करती है तो यह वायु के घर्षण से गर्म होकर ऊष्मा उत्पन्न करती है। फलतः उल्का चमकने लगती है और अल्प समय में ही यह वाष्पित हो जाती है। उल्काओं को सामान्यतः "टूटता तारा" कहा जाता है, यद्यपि ये तारे नहीं है।

कुछ उल्काएं आकार–प्रकार में इतनी अधिक बड़ी होती है कि ये वायुमण्डल में पूरी तरह वाष्पित होने के पूर्व ही पृथ्वी पर आ गिरती हैं, इन्हें उल्का पिंड कहते हैं।

तारे व तारामंडल

ऐसे खगोलीय पिंड, जो लगातार प्रकाश एवं ऊष्मा उत्सर्जित करते हैं। सूर्य भी एक तारा है, जो पृथ्वी के नजदीक होने के कारण अधिक बड़ा दिखाई देता है। अन्य तारे हमें विन्दु के रूप में दिखाई देते हैं क्योंकि ये पृथ्वी से बहुत अधिक दूरी पर स्थित हैं। तारे दिन व रात दोनों ही समय आकाश में उपस्थित रहते हैं। दिन में सूर्य के प्रकाश के कारण ये हमें दिखाई नहीं देते हैं। ध्रुव तारा सदैव उत्तर दिशा में चमकता है। इसकी किरणें उत्तरी ध्रुव पर 90^0 कोण बनाती हैं।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें–

- क्या तारे केवल रात में ही दिखाई देते हैं ?
- तारे टिमटिमाते क्यों हैं ?

तारामण्डल

रोचकतथ्य

तारों का प्रकाश हम तक विभिन्न घनत्व वाली वायुमण्डल की परतों से अपवर्तित होकर पहुँचता है जिससे कभी तो किसी ओर का प्रकाश हम तक पहुँचता है और दूसरे का नहीं इससे हमें तारों के टिमटिमाने का एहसास होता है।

तारों के किसी समूह को तारामण्डल कहते हैं। पृथ्वी से देखने पर तारों का कोई समूह किसी विशेष आकृति का आभास देता प्रतीत होता है। इसे रात्रि में आकाश में देखा जा सकता है। जैसे– सप्तर्षि तारामण्डल।

आकाश गंगा

करोड़ों तारामण्डल मिलकर एक आकाशगंगा (गैलेक्सी) का

निर्माण करते हैं। मन्दाकिनी आकाशगंगा में हमारा सौरमण्डल स्थित है। यह सर्पिलाकार है। इसमें रात्रि के समय आकाश में तारों के समूह की एक दूधिया पतली सी दिखाई देने वाली मेखला "मिल्की वे" कहलाती है। लाखों आकाशगंगाएं मिलकर ब्रह्माण्ड (Universe) का निर्माण करती हैं। हम सभी इसी ब्रह्माण्ड का हिस्सा है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें

- क्या आप ब्रहमांड के साथ अपना संबंध बना सकते हैं ? आप पृथ्वी पर हैं तथा पृथ्वी सौरमण्डल का भाग है। हमारा सौरमण्डल आकाशगंगा मिल्की वे का एक भाग है जो स्वयं ब्रहमांड का हिस्सा है।

  इस चित्र में आपका स्थान कहां है ?

मूल्यांकन

1. सही उत्तर दीजिए –

(i) सूर्य का प्रकाश कितने समय में पृथ्वी तक पहुँचता है ?

(क) 8 सेकेण्ड (ख) 8 मिनट (ग) 80 मिनट (घ) 80 सेकेण्ड

(ii) सौरमण्डल में कुल ग्रहों की संख्या कितनी है ?

(क) 9 (ख) 8 (ग) 10 (घ) इनमें से कोई नहीं

(iii) पृथ्वी का जुड़वा ग्रह किस ग्रह को कहा जाता है ?

(क) शुक्र (ख) शनि (ग) यूरेनस (घ) बृहस्पति

(iv) किन ग्रहों की कक्षाओं के बीच क्षुद्रगह पाये जाते हैं ?

(क) पृथ्वी , मंगल (ख) यूरेनस, नेप्च्यून (ग) बुध, शुक्र (घ) मंगल, बृहस्पति

2. संक्षेप में उत्तर दीजिए –

(i) हम हमेशा चन्द्रमा के एक भाग को क्यों देख पाते हैं ?

(ii) सौरमण्डल से आप क्या समझते हैं ?

(iii) ग्रह व तारे में क्या अन्तर हैं ?

3. सुमेलित कीजिए –

(i)	सौर परिवार का सबसे बड़ा ग्रह	(क)	आकाश गंगा
(ii)	सूर्य से सबसे दूर स्थित ग्रह	(ख)	बुध
(iii)	करोड़ों तारा मण्डलों का समूह	(ग)	नेप्च्यून
(iv)	सर्वाधिक तापान्तर वाला ग्रह	(घ)	बृहस्पति

4. सौर मंडल की रचना का वर्णन कीजिए ।

क्रियाकलाप/ प्रोजेक्ट

1. ग्रहों व उपग्रहों के बारे में जानकारी एकत्रित कराना।
2. चार्ट पेपर पर सूर्य से दूरी के अनुसार ग्रहों की कक्षाओं का प्रदर्शन कराना।
3. निकटतम स्थित तारामंडल का भ्रमण कराकर अनुभव लेखन।
4. पृथ्वी और सौरमण्डल पर एक क्विज आयोजन कराना।

मानचित्रण

- मानचित्र
- परिभाषा, अर्थ
- विशेषताएं
- घटक
  - दूरी
  - दिशा
  - प्रतीक
- मानचित्र के प्रकार
- उपयोगिता

पृथ्वी का आकार गोलाकार है इसलिए इसका सही प्रदर्शन करने के लिए ग्लोब का प्रयोग किया जाता है। ग्लोब मानव द्वारा निर्मित पृथ्वी का ऐसा मॉडल है जिससे पृथ्वी के स्वरूप का गहन व विस्तृत ज्ञान होता है। परन्तु ग्लोब का प्रयोग किसी छोटे क्षेत्र के विस्तृत अध्ययन के लिए नहीं किया जा सकता। एक समय पर ग्लोब का अधिकतम आधा भाग ही देखा जा सकता है, इसलिए एक ही समय पर समस्त संसार का अध्ययन अथवा विश्व के दूरस्थ स्थित भागों का तुलनात्मक अध्ययन नहीं किया जा सकता। इतना ही नहीं ग्लोब को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में भी कठिनाई का अनुभव होता है। ग्लोब के प्रयोग में इन्हीं असुविधाओं के कारण मुख्यतः मानचित्र का ही प्रयोग होता है।

प्रशिक्षुओ के समक्ष ग्लोब का प्रदर्शन करते हुए चर्चा करें –

- पृथ्वी की आकृति का यथार्थ चित्रण ग्लोब द्वारा ही सम्भव है किन्तु मानचित्रों की तुलना में ग्लोब का प्रयोग कम होता है।
- ग्लोब के समस्त भाग को एक दृष्टि मे नहीं देख सकते।
- ग्लोब को लाने–ले जाने में असुविधा।
- ग्लोब पर दो स्थानों के बीच की दूरी मापन में कठिनाई।
- पृथ्वी के किसी छोटे भाग को दिखाने के लिए ग्लोब को वृहद् आकार का बनाना पड़ सकता है।
- ग्लोब बनाने में व्यय की तुलनात्मक रूप से अधिकता है।

मानचित्र

मानचित्र, भूगोल का एक अनिवार्य उपकरण है। मानचित्र, ऐसी सांकेतिक लिपि है जिसमें भूगोल का अपरिमित ज्ञान रूपी खजाना छिपा है। मानचित्र को अंग्रेजी भाषा में Map कहते हैं। मैप शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के ''मैप्पा'' शब्द से हुई है। लैटिन भाषा में 'मैप्पा' **(Mappa)** का शाब्दिक अर्थ कपड़े का मेजपोश या रूमाल' होता है। अतः मध्यकालीन युगों में कपड़े पर बने संसार के चक्र मानचित्र ''मैप्पामुण्डी'' कहलाने लगे। विभिन्न विद्वानों द्वारा मानचित्र की परिभाषाओं को दिया गया –

''मानचित्र धरातल के आलेखी निरूपण होते हैं।'' –फिन्च तथा ट्रिवार्था

''निश्चित मापनी के अनुसार धरातल के किसी भाग के लक्षणों के समतल सतह पर निरूपण ही मानचित्र है।''– एफ0जे0 मांकहाउस

''मानचित्र धरातल अथवा उसके किसी भाग का तथा वहाँ के भौतिक और राजनैतिक लक्षणों आदि का अथवा खगोलीय पिंडों का कागज या किसी अन्य पदार्थ की समतल सतह पर निर्मित ऐसा चित्र है जिसमें अंकित प्रत्येक विन्दु निश्चित मापनी या प्रक्षेप के अनुसार अपनी भोगोलिक अथवा स्थिति के अनुरूप स्थित होता है।'' –– डडले स्टैम्प

उपर्युक्त विद्वानों द्वारा दी गई मानचित्र की परिभाषाओं से मानचित्र की निम्नलिखित विशेषताएं प्रकट होती हैं –

- मानचित्र पृथ्वी के वास्तविक रूप का प्रदर्शन नहीं करता, बल्कि मापक के अनुसार घटाए गए स्वरूप का प्रदर्शन होता है।
- मानचित्र सम्पूर्ण पृथ्वी अथवा उसके किसी भाग का समतल कागज पर एक विशेष अनुपात में लघु चित्रण होता है।
- पृथ्वी की त्रिविमीय आकृति (Three Dimensional) का द्विविमीय (Two Dimensional) समतल कागज पर प्रदर्शन ही मानचित्र है।
- मानचित्र को किसी न किसी मापक पर बनाया जाता है अर्थात् मानचित्र पर किन्हीं दो विन्दुओं के मध्य की दूरी धरातल पर उन्हीं बिन्दुओं के मध्य की वास्तविक दूरी में एक निश्चित अनुपात होता है, जिसे मानचित्र पर अंकित किया जाता है।
- समस्त पृथ्वी या उसके किसी भाग, आकाश या किसी अन्य आकाशीय पिंड के दृश्य एवं विचारे गये अवस्थितिक व वितरणात्मक प्रतिरूपों का मापनी के अनुसार प्रतीकात्मक आरेखन ही मानचित्र है।
- मानचित्र पृथ्वी की सतह के एक या एक से अधिक तत्वों का चित्रण करता है। यह मानवकृत होने के कारण केवल वही देता है जो बनाने वाला देना चाहता है।

मानचित्र के घटक – मानचित्रों के अध्ययन–अध्यापन के लिए इसके तीन प्रमुख घटकों का व्यावहारिक ज्ञान आवश्यक है। बिना इनके मानचित्र निर्माण या निर्मित मानचित्र को समझना कठिन है। ये घटक निम्नलिखित हैं–

1. दिशा 2. दूरी 3. प्रतीक चिहन

दिशा–मानचित्रों का यह प्रमुख घटक है। किसी भी प्रकार के मानचित्र के अध्ययन के लिए दिशा का ज्ञान होना अपरिहार्य है। मानचित्र में ऊपर की ओर दाहिने कोने पर एक तीर ;/ततवूद्ध का निशान बना होता है, जिसके ऊपर अक्षर उ0 लिखा होता है। यह तीर का निशान उत्तर दिशा की ओर संकेत करता है। यदि हम उत्तर दिशा के बारे में जानते हैं तो अन्य तीन दिशाओं दक्षिण, पूरब एवं पश्चिम के बारे में भी जान सकते हैं।

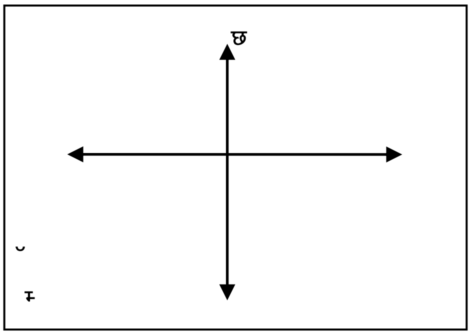

पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण इन चारों दिशाओं को 'प्रधान दिक्विन्दु' कहते हैं। बीच की चार अन्य दिशाओं का ज्ञान भी सामाजिक विषय के अध्ययन में आवश्यक है।

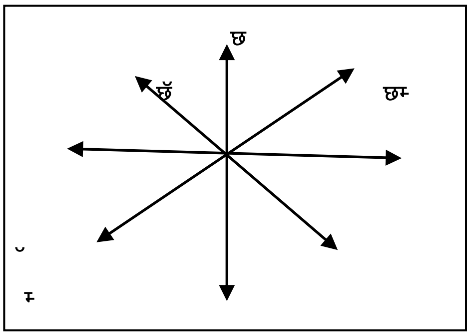

ये दिशाएं क्रमशः उ0पू0, द0पू0, उ0प0, दक्षिण पश्चिम (द0प0) हैं। इन सहायक दिशाओं के माध्यम से किसी भी स्थान की सही स्थिति का पता लगाया जा सकता है।

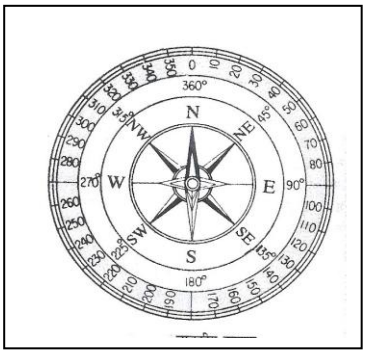

दिक्सूचक (compass) की सहायता से किसी भी स्थान की दिशा का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। यह एक ऐसा छोटा या यंत्र है जिसकी सहायता से मुख्य दिशाओं का पता लगाया जा सकता है। इसकी चुम्बकीय सुई की दिशा हमेशा उत्तर–दक्षिण दिशा में होती है।

प्रशिक्षुओं के साथ चर्चा करें

- प्रशिक्षण स्थल के आस–पास स्थित महत्वपूर्ण प्रतिष्ठानों की विभिन्न दिशाओं में अवस्थिति।
- दिक्सूचक को प्रदर्शित करके भ्रमण/अवलोकन कराकर दिशा का ज्ञान
- श्यामपट का ऊपरी भाग उत्तर, नीचे का भाग दक्षिण, दायें हाथ की तरफ का भाग पूरब व बांये हाँथ की तरफ का भाग पश्चिम दिशा को प्रदर्शित करता है।

दूरी

मानचित्र एक ऐसा आरेख है जो पूरे संसार या उसके किसी एक भाग को छोटा करके कागज पर दर्शाता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि मानचित्र छोटे पैमाने पर खींचे जाते हैं। पैमाने का चयन अत्यधिक सावधानीपूर्वक किया जाता है तथा दो विन्दुओं के बीच की दूरी वास्तविक रहे। यह तभी सम्भव है जब कागज पर एक छोटी दूरी धरातल की वास्तविक दूरी को व्यक्त करती हो। इस उद्‌देश्य के लिए एक मापक **(scale)** या मापनी का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{पैमाना या मापक} = \frac{\text{दो विन्दुओं के बीच की मानचित्र पर दूरी}}{\text{उन्हीं दो विन्दुओं की धरातल पर वास्तविक दूरी}}$$

इस प्रकार दो दिए गये विन्दुओं के बीच की मानचित्र पर मापी गई दूरी तथा उन विन्दुओं के बीच धरातल पर मापी गई वास्तविक दूरी के अनुपात को उस मानचित्र का मापक कहा जाता है।

यदि इलाहाबाद एवं लखनऊ के बीच की दूरी 200 कि0मी0 है तो इसका प्रदर्शन मानचित्र पर कैसे करेंगे ?

वास्तविक दूरी	= 200 कि0मी0
पैमाना 1 से0मी0	= 50 कि0मी0
50 कि0मी0 की दूरी	= 1 से0मी0
1 ״ ״	= 1/50 से0मी0
200 ״ ״	= 1/50 X 200 से0मी0
	= 4.0 से0मी0

$$\text{पैमाना} = \frac{1 \text{ से0मी0}}{50 \text{ कि0मी0}}$$

इलाहाबाद लखनऊ

$$= \frac{1 \text{ से0मी0}}{50 \times 100000 \text{ से0मी0}}$$

$$= \frac{1}{50,000,00}$$

पैमाना = 1 : 5000000

इस पैमाने पर कागज पर 4 से0मी0 की रेखा खींचकर स्थानों के नाम लिख देते हैं।

प्रशिक्षुओं से स्थानीय नगरों व कस्बों की प्रशिक्षण केन्द्र से दूरियों को मापक के आधार पर प्रदर्शन करायें।

मापक के प्रकार –सामान्य रूप से मानचित्रों में दो प्रकार के मापकों का प्रयोग किया जाता है –

1. दीर्घ मापक मानचित्र
2. लघु मापक मानचित्र

जब कभी बड़े क्षेत्रफल वाले भागों जैसे महाद्वीपों या देशों को कागज पर दिखाना होता है, तब लघुमापक या मापनी का प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ–यदि किसी स्थल के 500 कि0मी0 को मानचित्र पर 5 से0मी0 दर्शाता है तो इसे लघुमापक वाला मानचित्र कहते हैं।

इसी प्रकार जब कभी एक छोटे क्षेत्रफल वाले भाग यथा–आपके गाँव या शहर को कागज पर दिखाना हो, तब बड़े पैमाने का उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए स्थल पर 500 मीटर की दूरी को मानचित्र पर 5 से0मी0 से दर्शाया जाता है। इस प्रकार के मानचित्र को दीर्घ मापक मानचित्र कहते हैं। ध्यातव्य है कि बड़े पैमाने वाले मानचित्र छोटे पैमाने वाले मानचित्र की अपेक्षा अधिक जानकारी प्रदान करते हैं।

ध्यान देने योग्य तथ्य –

- बड़े क्षेत्रफल –लघुमापक
- छोटे क्षेत्रफल–वृहद मापक
- यदि दो पैमाने

1: 1000 तथा 1: 10000 हो तो इनमें से लघु पैमाना 1:10000 होगा तथा वृहद मापक 1:1000 होगा।

प्रतीक चिहन

यह किसी भी मानचित्र का तृतीय घटक है। किसी भी मानचित्र पर वास्तविक आकार एवं प्रकार में विभिन्न प्रकार की आकृतियों, भवनों, पुलों, वृक्षों, सड़कमार्गों, नहरों, कुओं, धार्मिक स्थलों, सार्वजनिक प्रतिष्ठानों को प्रदर्शित करना संभव नहीं होता है। इसी व्यावहारिक कठिनाई को दूर करने के लिए चित्रों, रेखाओं, अक्षरों, व छायाओं, रंगों का प्रयोग किया जाता है। इन प्रतीक चिह्नों की विशेषता यह है कि ये कम स्थान में अधिक बोध कराते हैं। इनके प्रयोग से मानचित्र आसानी से खींचा तथा अध्ययन किया जा सकता है। इन्हें रूढ़चिह्न कहा जाता है इन प्रतीक चिह्नों के उपयोग में अन्तर्राष्ट्रीय सहमति होती है।

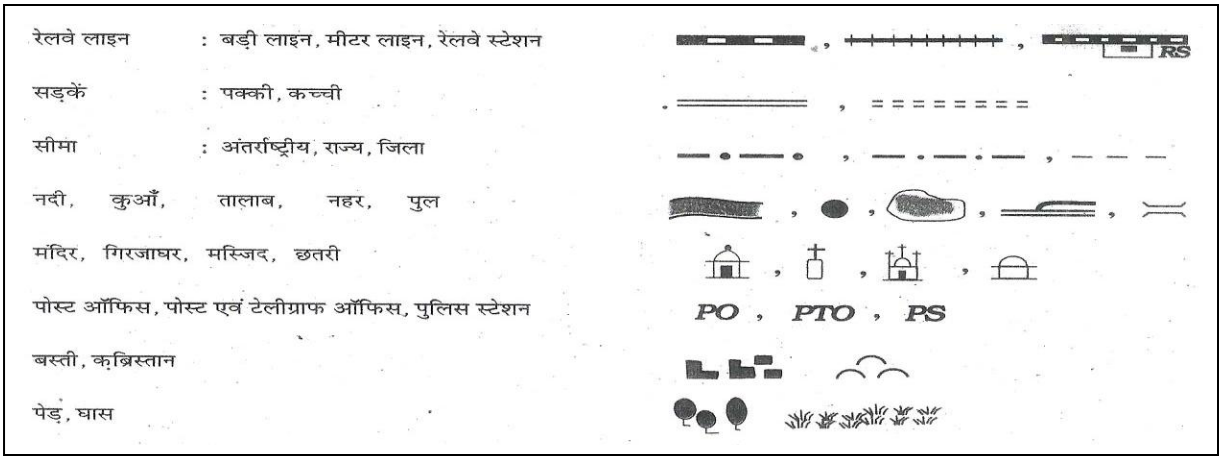

प्रशिक्षुओं को समूहों में विभक्त कर ताश की तरह कार्ड पर प्रतीकों का समूहवार प्रदर्शन करना तथा मानचित्र पर स्थानीय भवनों, सड़कों पुलों, स्टेशन इत्यादि का मानचित्रण कराना।

परम्परागत चिह्नों के साथ–साथ मानचित्रों में रंगों का प्रयोग कर प्राकृतिक व सांस्कृतिक भूदृश्यों का प्रदर्शन किया जाता है।

भूदृश्य	प्रयुक्त रंग
पर्वतीय भाग	भूरा
पठारी भाग	पीला
हरे–भरे मैदानी भाग	हरा
ग्रामीण व नगरीय बस्तियाँ	लाल रंग
तालाब, नदी, झील, सागर	नीला रंग
सीमायें	काला

मानचित्रों के प्रकार –

मानचित्र वर्गीकरण के निम्नलिखित मुख्य आधार होते हैं

1. मापनी के आधार पर
2. स्थलाकृतिक लक्षणें की मात्रा के अनुसार
3. उद्देश्य के आधार पर

1. मापनी के आधार पर

भूसम्पत्ति मानचित्र ***(cadastral Map)*** नगरों के प्लानों, तथा स्थलाकृतिक मानचित्रों को बृहद मापनी वाले मानचित्र की संज्ञा दी जाती है। वहीं दूसरी ओर दीवारी मानचित्र ***(wall maps)*** व एटलस मानचित्र लघुमापक मानचित्र कहलाते हैं।

प्रशिक्षुओं के समक्ष दीवाल मानचित्र व एटलस का प्रदर्शन कर मापनी का तुलनात्मक प्रदर्शन करना।

2. स्थलाकृतिक लक्षणों की मात्रानुसार

ऐसे मानचित्रों में धरातल पर अवस्थित ऊँचे तथा नीचे वाले स्थानों का प्रदर्शन किया जाता है। इस मानचित्र में उच्चावच (उच्च–ऊँचा, अवच–नीचा) के प्रदर्शन के लिए हेश्यूर प्रणाली, समोच्च रेखीय (समान ऊँचाई वाले विन्दुओं को मिलाने वाली काल्पनिक रेखायें), स्थानिक ऊँचाई, तल चिह्नों की सहायता ली जाती है।

ऐसे मानचित्र जिनमें स्थलाकृतिक लक्षणों के स्थान पर सांस्कृतिक व आर्थिक तत्वों के प्रदर्शन को प्राथमिकता दी जाती है, प्लेनीमीट्रिक मानचित्र कहते हैं।

प्रशिक्षुओं से प्रश्नोत्तर माध्यम से चर्चा करें कि क्यों ऊँचाई का मापन समुद्र तल से ही किया जाता है।

महत्वपूर्ण तथ्य

तलचिहन **(Bench Mark- B.M.)** सर्वेक्षण के समय प्रत्येक स्थान की ऊँचाई समुद्र तल को आधार मानकर अंकित की जाती है। किसी स्थान विशेष की ऊँचाई को मापकर पत्थरों पर चिहन बनाकर B.M. 100मी0 लिख दिया जाा है।

स्थानिक ऊँचाई **(Spot Hight)**– समुद्र तल से विभिन्न ऊँचाई ज्ञात कर मानचित्रों पर त्रिभुज बनाकर उनमें संबंधित स्थानों पर अंकित कर दी जाती हैं।

समोच्च रेखाएँ– मानचित्रों पर समुद्र तल से समान ऊँचाई वाले स्थानों को मिलाते हुए खींची जाने वाली काल्पनिक रेखाएं।

हेश्यूर – सामान्य ढाल की दिशा में खींची गई छोटी–छोटी खण्डित रेखाएं।

3. उद्देश्य के आधार –प्रत्येक मानचित्र किसी निशिचित उद्देश्य से बनाया जाता है। मानचित्र की अन्तर्वस्तु या प्रदर्शित तथ्यों को देखकर भली–भाँति समझा जा सकता है। उद्देश्य के आधार पर मानचित्र कई प्रकार के हो सकते हैं–

- प्राकृतिक मानचित्र
- राजनैतिक मानचित्र
- खगोलीय मानचित्र
- भूकंपीय मानचित्र
- जलवायु व मौसम मानचित्र
- मृदा मानचित्र
- वनस्पति मानचित्र
- जनसंख्या व बस्ती मानचित्र
- सांस्कृतिक मानचित्र
- ऐतिहासिक मानचित्र
- सैनिक मानचित्र
- भूमि उपयोग मानचित्र
- परिवहन मानचित्र
- खनिज मानचित्र
- औद्योगिक मानचित्र
- वितरण मानचित्र

उपयोगिता

संसार में मानचित्रों का उपयोग दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। विभिन्न देशों में प्राकृतिक संसाधनों की खोज हो रही है। इन संसाधनों को अंकित करने के लिए आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक पक्षों को प्रदर्शित करने के लिए मानचित्रों का निर्माण एवं उपयोग किया जाता है। भूगोल में मानचित्रों का उपयोग सबसे अधिक होता है। ग्लोब व मानचित्र भूगोल के प्रमुख उपकरण एवं मानचित्रों को भूगोल की जानकारी के लिए ''अंधे की लकड़ी'' भी कहा जाता है। कृषि, व्यापार, वाणिज्य, नौ संचालन, परिवहन, पत्रकारिता, नगरीय नियोजन में मानचित्रों का उपयोग बढ़ रहा है। 21वीं सदी के वैज्ञानिक प्रगति से हवाई मानचित्रण, सेटेलाइट मौसम मानचित्रण से संचार व्यवस्था ने भी प्रगति की है। भूराजनीतिक दृष्टिकोण से सैन्य मानचित्रों का उपयोग भी रणनीति निर्माण हेतु उपयोगी साबित हो रहा है।

मूल्यांकन

1. मानचित्र की उत्पत्ति 'मैप्पा' से हुई है, यह किस भाषा का शब्द है ?

(क) जर्मन (ख) अंग्रेजी (ग) लैटिन (घ) हिन्दी

2. पृथ्वी का आकार है –

(क) एक विमीय (ख) द्विविमीय (ग) त्रिविमीय (घ) इनमें से कोई नहीं

3. मानचित्र के कितने प्रमुख घटक है –

(क) 2 (ख) 3 (ग) 4 (घ) 1

4. मानचित्र में दिशा का प्रदर्शक चिहन है –

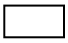 (क) (ख) = (ग) (घ)

5. प्रतीक चिहन क्या प्रदर्शित करता है –

(क) चारागाह (ख) सड़कें (ग) कब्रिस्तान (घ) ऊँची भूमि

(i) दिशाओं का ज्ञान किस यन्त्र से होता है ?

(ii) मापक किसे कहते हैं ?

(II) सुमेलित कीजिए

(i) नहर (क) 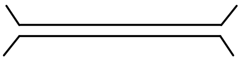

(ii) पुल (ख)

(iii) कब्रिस्तान (ग) 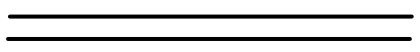

(iv) पक्की सड़क (घ) 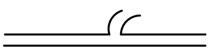

(III) 1. मानचित्र एवं रेखा चित्र में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

2. मानचित्रों की उपयोगिता की समीक्षा कीजिए।

क्रियाकलाप /प्रोजेक्ट कार्य/ जीवन कौशल

1. प्रशिक्षु प्रशिक्षण कक्ष का रेखाचित्र खिंचवाकर उस कक्ष में रखे सामान जैसे –शिक्षक की मेज, ब्लैकबोर्ड, डेस्क, दरवाजा व खिड़कियों को दर्शाने के लिए प्रशिक्षुओं से कहें।
2. एक चार्ट पर 10 प्रतीक चिहनों का प्रदर्शन नाम सहित कराना

भूदृश्य	प्रतीक चिहन

3. भ्रमण कराकर प्रशिक्षुओं द्वारा अवलोकित स्थान विशेष का मानचित्रण करायें।
4. रिक्त मानचित्र पर अभ्यास करायें –

– भारत में उत्पादित विभिन्न फसलों के क्षेत्र

– भारत में उत्पादित विभिन्न खनिजों के क्षेत्र

– इत्यादि

ग्लोबः अक्षांश व देशान्तर रेखाएं

हमारी पृथ्वी की वास्तविक आकृति एक चपटे दीर्घवृत्त के समान है, परन्तु पृथ्वी के क्षैतिज व उर्ध्वाधर अर्द्धव्यासों में इतना कम अन्तर (21.5 कि0मी0) कि इसकी आकृति को लगभग गोलाकार या नारंगी के समान मान लिया जाता है। हमारी पृथ्वी त्रिआयामी है अर्थात् पृथ्वी में लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई या गहराई रूपी तीन विमायें हैं। यह ध्रुवों पर चपटी है। अतः गणितीय दृष्टि से पृथ्वी एक जीऑयड (Geoid) है। जिआयड का शाब्दिक अर्थ है– पृथव्याकार। यह दो शब्दों ***(Geo + id)*** से मिलकर बना है जो पृथ्वी और इसके त्रिविमीय आकृति होने को प्रदर्शित करता है। पृथ्वी की वास्तविक आकृति को प्रदर्शन करने के लिए एक मॉडल के रूप में ग्लोब का निर्माण किया गया है। इस प्रकार स्पष्ट है कि पृथ्वी की आकृति का यथार्थ चित्रण ग्लोब द्वारा ही सम्भव है।

- पृथ्वी का आकार
- ग्लोब
- अक्षांश रेखाएं
- कर्क, मकर भूमध्य रेखा
- देशांतर रेखाएं
- देशांतर व समय
- स्थानीय व मानक समय
- भारतीय मानक समय
- अन्तर्राष्ट्रीय तिथि रेखा

- प्रशिक्षुओं से पृथ्वी की आकृति पर चर्चा करें।
- पृथ्वी पूर्णतः गोला क्यों नहीं है।

आकार व प्रकार में ये छोटे या बड़े बनाये जा सकते हैं। जैसे बड़े ग्लोब जो आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक नहीं ले जाए जा सकते, पाकेट में रखने योग्य ग्लोब जो आसानी से दूरस्थ ले जाये जा सकते हैं। ग्लोब स्थिर नहीं होते हैं। ग्लोब को भी उसी प्रकार घुमाया जा सकता है जैसे कि कुम्हार का पहिया या लट्टू घूमता है। ग्लोब पर महाद्वीप, महासागर, देशों को उनके वास्तविक आकार व आकृति में प्रदर्शित किया जाता है।

धरातल पर किसी भी स्थान की स्थिति जानने के लिए किसी दूसरे स्थान का सन्दर्भ लिया जाता है। किन्तु सन्दर्भ के लिए कोई स्थान या विन्दु न हो तो स्थिति का निर्धारण कठिन होता है। पृथ्वी की आकृति लगभग गोलाकार है। इसलिए इसका कोई किनारा नहीं है, जहाँ से दूरी का मापन किया जा सके। किन्तु फिर भी इस पर दो विन्दु–उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव निश्चित हैं, इसीलिए इन्हें आधार भूत 'सन्दर्भ विन्दु' कहते हैं। ये दो विन्दु भौगोलिक ग्रिड को आधार प्रदान करते हैं। भौगोलिक ग्रिड में दो प्रकार की रेखाएं होती हैं। ये क्षैतिज तथा उर्ध्वाधर खींची जाती हैं। इन्हें क्रमशः अक्षांश समानान्तर (Parallels of Latitude) तथा देशान्तरीय याम्योत्तर (Meridians of Longitude) कहा जाता है।

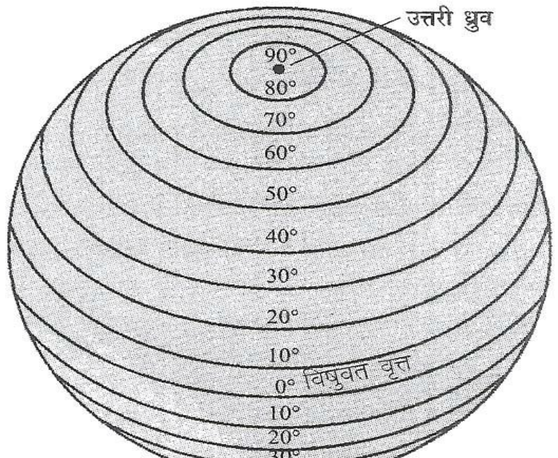

चित्र 4.2 अक्षांश रेखाएँ

- *प्रशिक्षुओं के समक्ष किसी गोल आकार के फल को लेकर पृथ्वी की आकृति, अक्षांश व देशान्तर पर चर्चा करें।*

अक्षांश : (Latitude)

अक्षांश समानान्तर पूर्व पश्चिम दिशा में एक–दूसरे के समानान्तर खींचे जाते हैं। उत्तरी व दक्षिणी ध्रुव के मध्य अर्थात् दोनों ध्रुवों से समान दूरी पर खींची गई काल्पनिक रेखा को विषुवत वृत्त कहते हैं। स्पष्ट है कि यह वृत्त ग्लोब को दो बराबर भागों में बांटता है और सभी अक्षांश समानान्तरों से बड़ा होता है। अतः इसे वृहत वृत्त (Great circle) कहते हैं। अन्य सभी समानान्तर रेखाएं विषुवत् वृत्त से छोटी होती है और ग्लोब को दो असमान भागों में विभक्त करती हैं। अतः इन्हें लघुवृत्त (Small circle) कहते हैं। विषुवत रेखा से ध्रुवों की ओर जाने में अक्षांश समानान्तरों की लम्बाई उत्तरोत्तर घटती जाती है। ध्रुवों की कोई लम्बाई नहीं होती और वे विन्दु मात्र ही होते हैं।

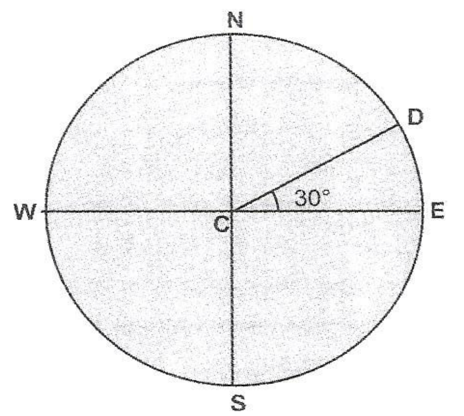

दिल्ली का अक्षांश (∠ DCE = 30°)

किसी स्थान की भूमध्य रेखा से उत्तर व दक्षिण की ओर पृथ्वी के केन्द्र पर कोणात्मक दूरी को उस स्थान का अक्षांश कहते हैं। यदि कोई स्थान भूमध्य रेखा के उत्तर में है तो उसका अक्षांश उत्तरी और यदि दक्षिण में है तो उसका अक्षांश दक्षिणी होता है। जैसे–दिल्ली का अक्षांश 30^0 उत्तरी है तो इसका तात्पर्य यह है कि दिल्ली भूमध्य रेखा के उत्तर में है और यह स्थान पृथ्वी के केन्द्र पर भूमध्य रेखा के साथ उत्तर दिशा में 30^0 कोण बनाता है।

पृथ्वी लगभग गोलाकार है और एक गोले में 360^0 होते हैं। यदि भूमध्य रेखा से उत्तरी या दक्षिणी ध्रुव की ओर बढ़ते हैं तो हम पृथ्वी के गोले के एक चौथाई भाग पार कर लेते हैं। इस प्रकार उत्तरी ध्रुव का अक्षांश 90^0 उत्तर तथा दक्षिणी ध्रुव का अक्षांश 90^0 दक्षिणी होता है।

भूमध्य रेखा से एक समान कोणीय दूरी वाले स्थानों को मिलाने वाली रेखा को अक्षांश रेखा कहते हैं। भूमध्यरेखा 0^0 की अक्षांश रेखा है। अतः इस पर स्थित प्रत्येक स्थान का अक्षांश 0^0 होगा। यदि अक्षांश समांतरों को 1^0 के अन्तराल पर खींचते हैं तो उत्तरी एवं दक्षिणी दोनों गोलार्धों में 89 अक्षांश समांतर प्राप्त होंगे। इस प्रकार विषुवतवृत्त (भूमध्य रेखा) को लेकर अक्षांश समांतरों की कुल संख्या 179 होगी। किसी स्थान का अक्षांश सूर्य अथवा ध्रुवतारे की सहायता से ज्ञात किया जा सकता है। भूमध्य रेखा पर 1^0 डिगी आक्षांश की लम्बी 110.569 किमी0 है, जबकि ध्रुवों पर यह लम्बाई 111.7 किमी0 हो जाती है।

महत्वपूर्ण अक्षांश रेखाएं –

विषुवत वृत्त	–	0^0
उत्तरी ध्रुव	–	90^0 उ0
दक्षिणी ध्रुव	–	90^0 द0
कर्क रेखा	–	$23½^0$ उ0
मकर रेखा	–	$23½^0$ द0
उत्तरी ध्रुव वृत्त	–	$66½^0$ उ0

दक्षिणी ध्रुव वृत्त – $66\frac{1}{2}^0$ द0

देशांतर **(Longitude)**

उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुव को मिलाने वाली रेखा को देशान्तर रेखा कहते हैं। इन्हें Meridians of Longitude भी कहते हैं। सभी देशांतर रेखाएं लगभग भूमध्य रेखा जितनी लम्बी होती है और वृहत् वृत्त (Great Circle) कहलाती हैं। जिस देशांतर रेखा के सन्दर्भ में अन्य देशान्तर रेखाओं की गणना की जाती है उसे प्रधान मध्याह्न रेखा (Prime Meridian) कहते हैं। इसके निर्धारण हेतु वाशिंगटन डी0सी0 में 22 अक्टूबर 1884 को आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी में इग्लैण्ड के लन्दन के पूर्व में ग्रीनविच (Greenwich) नामक स्थान पर स्थित रायल बेधशाला (Royal Observatory) से गुजरने वाले देशांतर रेखा को प्रधान मध्याह्न माना गया और इसे ग्रीनविच मध्याह्न (Greenwich Meridian) का नाम दिया गया। वर्तमान में ग्रीनविच मध्याह्न को शून्य मानकर बाकी देशांतरों की गणना की जाती है। अतः प्रधान मध्याह्न का अर्थ ग्रीनविच मध्याह्न ही है।

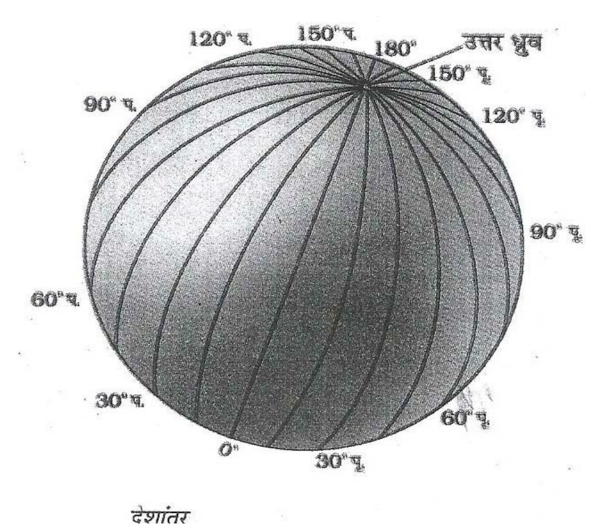

देशांतर

प्रधान मध्याह्न को 0^0 मानकर इसके 180^0 पूर्व तथा पश्चिम में देशांतर रेखाएं खींची जाती हैं। इस प्रकार संख्या की दृष्टि से पृथ्वी पर कुल 360^0 देशांतर होते हैं। जो देशांतर रेखायें प्रधान मध्याह्न के पूर्व में खींची जाती हैं उन्हें पूर्वी देशांतर तथा जो देशांतर रेखाएं प्रधान मध्याह्न के पश्चिम में खींची जाती हैं, उन्हें पश्चिमी देशांतर कहते हैं। 180^0 पूर्वी तथा पश्चिमी देशांतर रेखा एक ही हैं यह प्रधान मध्याह्न रेखा के ठीक विपरीत होती है। प्रधान मध्याह्न पृथ्वी को पूर्वी तथा पश्चिमी गोलार्द्धों में बाँटती है। पूर्वी गोलार्द्ध में स्थित स्थानों का देशांतर पूर्व तथा पश्चिमी गोलार्द्ध में स्थित स्थानों का देशान्तर पश्चिम होता है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें

खरबूजा या नारंगी पर जिस प्रकार धारियाँ (रेखाएं) दिखाई देती हैं, उसी प्रकार हमारे ग्लोब पर देशांतरों का जाल फैला है।

देशांतर व समय

देशांतर व समय का आपस में प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध पृथ्वी के अक्ष पर उसके घूर्णन के कारण है। पृथ्वी अपने अक्ष पर 24 घंटे में एक चक्कर पूर्ण करती है और इस प्रक्रिया में पृथ्वी 360^0 घूमती है। इसका तात्पर्य यह है कि पृथ्वी एक घंटे में $360/24 = 15^0$ घूमती है।

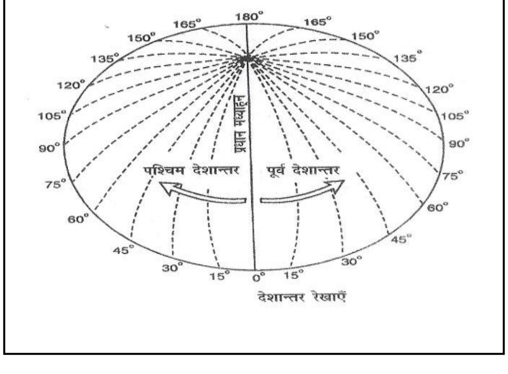

अतः दो स्थान एक–दूसरे से 15^0 पूर्व अथवा पश्चिम में है तो उनके समय में एक घण्टे का अन्तर होता है। जिन स्थानों के

देशांतर में 1^0 (1^0 = 60 मिनट) का अन्तर है उनके समय में 60/15 =4 मिनट का अन्तर होता है।

पृथ्वी पश्चिम से पूरब की ओर घूमती है इसलिए पूरब में स्थित स्थानों पर सूर्योदय पहले होता है और पश्चिम में स्थित स्थानों पर सूर्योदय बाद में होता है। अतः हम जैसे–जैसे पूरब दिशा की ओर बढ़ते हैं, समय में उत्तरोत्तर प्रति देशांतर वृद्धि होती जाती है। इसके विपरीत जैसे–जैसे हम पश्चिम दिशा की ओर बढ़ते हैं, समय में उत्तरोत्तर देरी होती जाती है।

जैसे –मान लीजिए ग्रीनविच प्रधान देशांतर पर दोपहर के 12 बजते हैं तो 90^0 पूर्वी देशांतर पर शाम के 6:00 और 90^0 पश्चिमी देशांतर पर प्रातः के 6:00 बजते हैं। 180^0 देशांतर ग्रीनविच देशांतर की ठीक विपरीत दिशा में अवस्थित है अतः वहाँ अर्धरात्रि है।

स्थानीय समय *(Local Time)*

जब किसी स्थान का देशांतर सूर्य के ठीक नीचे होता है तो वहाँ की घड़ियों में अपराहन के 12.00 बजा लिए जाते है। ऐसी स्थिति में उस स्थान विशेष की घड़ियों में वह समय स्थानीय समय कहलाता है। एक ही देशांतर पर स्थित सभी स्थानों का स्थानीय समय एक जैसा ही होता है।

मानक समय *(Standard Time)*

स्थानीय समय के अनुसार स्थान–स्थान पर समय परिवर्तन होने पर विभिन्न प्रकार के संचार, परिवहन व सार्वजनिक क्रियाकलाप कुप्रभावित हो सकते हैं तथा व्यवस्थायें ठप हो सकती हैं। इस समस्या के हल के लिए 1884 ई0 में वाशिंगटन डी0सी0 में आयोजित गोष्ठी में ग्रीनविच के देशांतर को 0^0 मानकर समस्त विश्व को समय कटिबंधों (Time zones) में विभाजित करने की योजना निर्मित की गई। इसके आधार पर समस्त संसार को कुल 24 कटिबंधों में विभाजित किया गया। प्रत्येक कटिबंध 15^0 या 7^0 30′ मिनट देशांतर है ताकि दो निकटवर्ती कटिबंधों के समय में एक या आधे घंटे का अन्तर हो। रूस का अधिक देशांतरीय विस्तार होने के कारण देश में 11 समय कटिबंध व संयुक्त राज्य अमेरिका में 5 समय कटिबंध को बनाया गया है।

भारतीय मानक समय *(IST)*

देश की प्राकृतिक सीमाओं के अन्दर जहाँ तक सम्भव हो समय की एकरूपता को बनाये रखने के लिए देश की केन्द्रीय याम्योत्तर और उसके स्थानीय समय को पूरे देश के लिए मानक याम्योत्तर एवं मानक समय मान लिया जाता है। भारत का कुल देशान्तरीय विस्तार लगभग 30^0 है। अतः भारत की मानक मध्याह्न रेखा $82\frac{1}{2}^0$ पूर्वी देशांतर को माना गया है जो इलाहाबाद से गुजरती है। भारत का मानक समय ग्रीनविच मानक समय से 5 घंटे 30 मिनट आगे है।

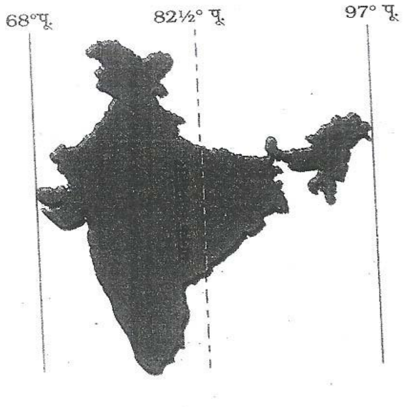

भारत का मानक याम्योत्तर

चर्चा करें कि –

- *भारत की पूर्वी सीमा तथा पश्चिमी सीमा में कितने घंटे का समय में अन्तर है और क्यों ?*
- *भारत को आजादी 15 अगस्त 1947 को मिली थी, जबकि पाकिस्तान को 14 अगस्त 1947 को, क्यो ?*

अन्तर्राष्ट्रीय तिथि रेखा ***(International Date Line)***

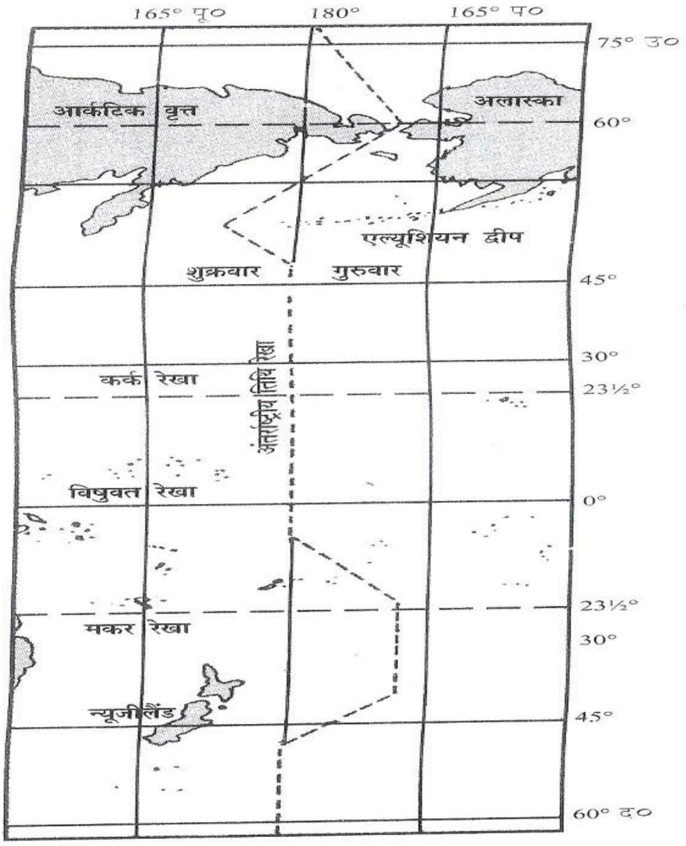

ग्लोब पर 180^0 देशांतर रेखा को अन्तर्राष्ट्रीय तिथि रेखा कहा जाता है क्योंकि इस देशांतर के दोनों ही ओर तिथियों (Date) में एक दिन का अन्तर होता है। ग्रीनविच देशांतर 0^0 एवं 180^0 देशांतर के बीच 24 घंटे का अन्तर होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि जब ग्रीनविच के पूर्व में समय की गणना की जाती है तो 180^0 पूर्व पर समय 12 घंटे आगे होता है तथा ग्रीनविच के पश्चिम जाने पर 180^0 देशांतर पर समय 12 घंटे पीछे होता है। उदाहरणार्थ– यदि ग्रीनविच देशांतर पर बृहस्पतिवार, 21 सितम्बर 2006 को दोपहर के 12 बजे हों तो 180^0 पूर्वी देशांतर पर 21 सितम्बर 2006 की मध्यरात्रि होगी जबकि 180^0 पश्चिमी देशांतर पर 20 सितम्बर 2006 की मध्यरात्रि होगी। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि 180^0 देशांतर के दोनों ओर दो अलग–अलग तिथियाँ पाई जाती हैं। जब इस रेखा को पूर्व की ओर लाँघते है तो एक दिन दोहराया जाता है और जब इसे पश्चिम की ओर लाँघते हैं तो एक दिन कम कर दिया जाता है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें

- *Travel to east, one day more to feast,*
  travel to west, one day less.
- *अन्तर्राष्ट्रीय तिथि रेखा क्या वास्तव में 180^0 देशांतर का अनुसरण करती है ?*

अन्तर्राष्ट्रीय तिथि रेखा सीधी नहीं है बल्कि टेढ़ी–मेंढ़ी खींची गई है, जिससे वह किसी भी स्थल खण्ड से होकर नहीं गुजरती है। यह रेखा 180^0 देशांतर रेखा से 3 बार विचलित होती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि इसे किसी स्थलीय भाग से गुजरते खींचा जाता तो उस एक ही स्थल खण्ड पर ही अन्तर्राष्ट्रीय तिथि रेखा के पूरब तथा पश्चिम अलग–अलग दिन होते जिससे विद्यालयों व सार्वजनिक प्रतिष्ठानों के संचालन में असुविधा होती।

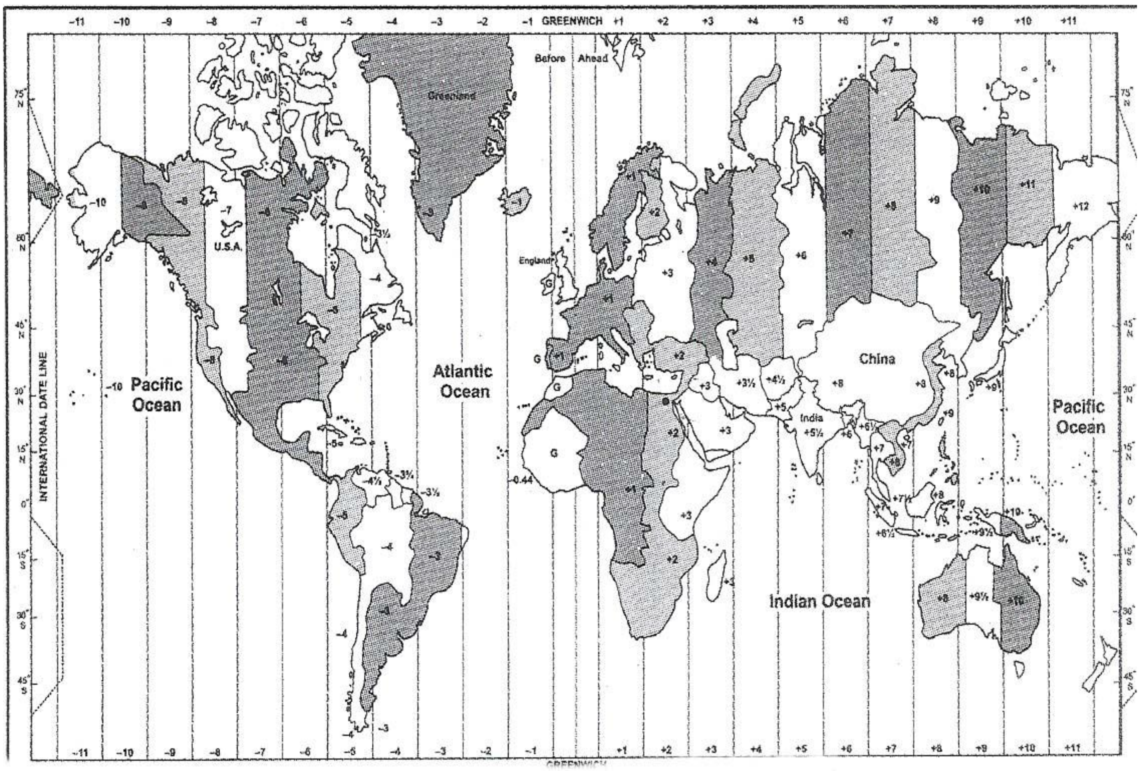

विश्व के प्रमुख टाइम जोन

मूल्यांकन

1. पृथ्वी का आकार है

   (क) अंडाकार (ख) गोलाकार (ग) इनमें से कोई नहीं (घ) जिऑयड

2. कर्क रेखा का अक्षांश है –

   (क) 0^0 अक्षांश (ख) 23½^0 द0 अक्षांश (ग) 23 ½^0 उ0 अक्षांश (घ) 66 ½^0 उ0 अक्षांश

3. भारतीय मानक समय रेखा गुजरती है –

   (क) अहमदाबाद (ख) लखनऊ (ग) इलाहाबाद (घ) कोलकाता

4. भारतीय मानक समय, ग्रीनविच से आगे है –

   (क) +4:30 घंटे (ख) +5:30घंटे (ग) –4:30 घंटे (घ) –5:30 घंटे

संक्षेप में उत्तर दीजिए –

(i) अक्षांश व देशांतर क्या है ?

(ii) स्थानीय समय क्या है ?

(iii) अन्तर्राष्ट्रीय तिथि रेखा किसे कहते हैं ?

सुमेलित कीजिए –

(i)	मकर रेखा	1. 0^0 अक्षांश
(ii)	अन्तर्राष्ट्रीय देखा	2. $23\frac{1}{2}^0$ दक्षिण
(iii)	ग्रीनविच	3. $82\frac{1}{2}^0$ पूर्वी
(iv)	भारतीय मानक समय	4. 180^0 देशांतर

4. किसी भी देश के लिए एक मानक समय की आवश्यकता क्यों पड़ती है ?

क्रियाकलाप / प्रोजेक्ट कार्य

1. संसार के प्रमुख नगरों की पहचान ग्लोब पर कराना तथा पुस्तिका पर उनके अक्षांश व देशान्तर अंकित कराना ।
2. चार्ट पर संसार के मानचित्र पर कर्क, मकर, भूमध्य रेखाओं का प्रदर्शन कराना ।
3. चार्ट पर ग्लोब बनाकर प्रधान मध्याह्न रेखा तथा अन्तर्राष्ट्रीय तिथि रेखा का प्रदर्शन कराना।

पृथ्वी के ताप कटिबन्ध

- सूर्यातप
- तापकटिबंध
  - उष्ण
  - शीतोष्ण
  - शीत
- भारत की अवस्थिति

सूर्य वायुमण्डल की आदि शक्ति का एकमात्र स्रोत है। प्राणिमात्र के जीवन का आधार ही सूर्य है। मनुष्य का जीवन भी सूर्य बिना सम्भव नहीं। पृथ्वी के धरातल पर सूर्य से प्राप्त ऊष्मा ऊर्जा 'सूर्यातप' (Insolation) कहलाती है। यह सूर्यातप पृथ्वी के धरातल पर सर्वत्र एक समान रूप से वितरित नहीं होती है। सर्वाधिक सूर्यातप भूमध्य रेखा के 10 डिग्री उत्तरी व दक्षिणी अक्षांश के मध्यवर्ती भाग को प्राप्त होता है क्योंकि इस भाग में सूर्य वर्ष भर लम्बवत् चमकता रहता है। ध्रुवों की ओर सूर्यातप की मात्रा कम होती जाती है, क्योंकि वर्ष के प्रत्येक महीनों में सूर्य की किरणें ध्रुवों की ओर तिरछी पड़ती हैं। ध्रुवों पर विषुवत रेखा का केवल 40% ही सूर्यातप प्राप्त होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि धरातल पर सूर्यातप का वितरण अक्षांशों के अनुसार अलग–अलग होता है। सूर्यातप के वितरण पर वायुमण्डल के परावर्तन (Reflection), प्रकीर्णन (Scattering) तथा अवशोषण (Absorption) आदि क्रियाओं का भी बड़ा प्रभाव रहता है। इसके पश्चात् जो सूर्यातप पृथ्वी तल पर पहुँचता है वह पृथ्वी की दैनिक गति एवं अक्षांशों के अनुसार वितरित होता है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें (गतिविधि के माध्यम से)

- किसी सीधी सतह पर टार्च का प्रकाश तेज तथा कम क्षेत्र में फैलता है।

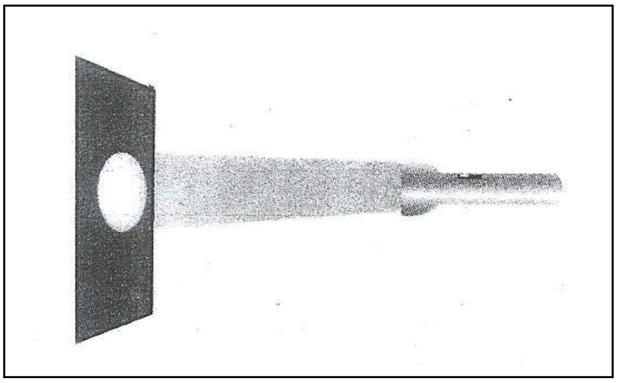

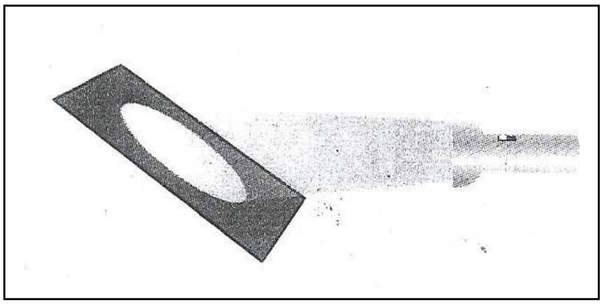

- किसी तिरछी सतह पर टार्च का प्रकाश कम तेज परन्तु अधिक क्षेत्र में फैलता है।

ग्लोब को तापमान की दृष्टि से कुछ ऐसे खास प्रदेशों या मण्डलों में विभक्त किया जाता है जिनमें तापमान का वितरण तथा उनकी विशेषताओं में लगभग समानता या औसत आन्तरिक समरूपता पाई जाती है। इन मण्डलों या

कटिबन्धों का सीमांकन अक्षांशों के आधार पर किया जाता है। इस दृष्टि से विद्वानों द्वारा तीन प्रमुख कटिबन्धों में विभाजित किया गया है –

1. उष्ण कटिबंध

भूमध्य रेखा ग्लोब को दो समान भागों उत्तरी गोलार्द्ध तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में विभाजित करती है। भूमध्य या विषुवत रेखा के दोनों ओर $23\frac{1}{2}^0$ अक्षों (कर्क रेखा तथा मकर रेखाओं के मध्य) तक विस्तृत भाग को उष्ण कटिबन्ध के नाम से संबोधन प्राप्त है। यहाँ भूमध्य रेखा पर सूर्य की किरणें लम्बवत् होती है तथा शेष भागों में सूर्य वर्ष भर में कम से कम एक बार लम्बवत् अवश्य होता है। भूमध्य रेखा के आस–पास वाले भाग में वर्ष भर तापमान उच्च रहने के कारण शीतऋतु का सर्वथा अभाव रहता है किन्तु कर्क और मकर रेखाओं के आस–पास ग्रीष्म व शीतऋतु प्रत्यक्षतः अनुभव की जाती है।

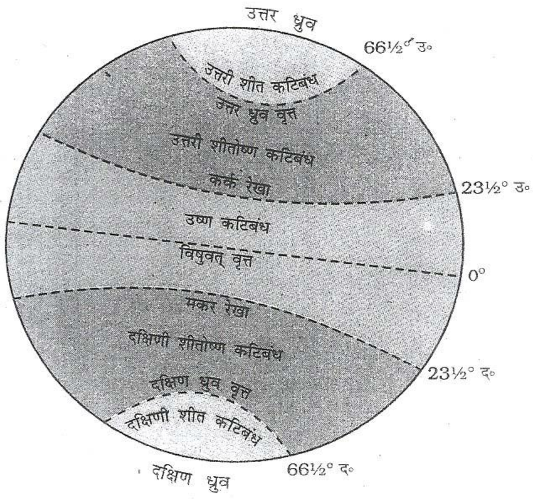

ताप कटिबंध

प्रशिक्षुओं के समक्ष ग्लोब के अवलोकन के आधार पर ताप कटिबन्धों की चर्चा करें तथा श्यामपट्ट पर अक्षांश रेखाओं के प्रदर्शन द्वारा अवधारणा स्पष्ट करें।

2. शीतोष्ण कटिबंध

ग्लोब पर इस कटिबंध का विस्तार उत्तरी तथा दक्षिणी दोनों ही गोलार्द्धों में $23\frac{1}{2}^0$ तथा $66\frac{1}{2}^0$ अक्षांशों के मध्य पाया जाता है। इस भाग में दिन तथा रात्रि की अवधि अधिक होती है किन्तु 24 घण्टे से कम ही होती है। सूर्य के उत्तरायण तथा दक्षिणायन की स्थितियों के कारण ऋतुओं में पर्याप्त अन्तर होता है। ग्रीष्म तथा शीत ऋतुओं के तापमान में अत्यधिक अन्तर होता है।

3. शीत कटिबन्ध

उत्तरी गोलार्द्ध तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में $66\frac{1}{2}^0$ तथा क्रमशः उत्तरी ध्रुव व दक्षिणी ध्रुव के मध्य शीत कटिबंध का विस्तार है। इस भाग में सूर्य की किरणें के अत्यधिक तिरछेपन के कारण तापमान बहुत कम अंकित किया जाता है। वर्ष के कुछ महीनों में सूर्य के अभाव के कारण यहाँ सूर्यातप शून्य रहता है। ध्रुवों के पास 6 महीने का दिन तथा 6 महीने की रात होती है। सूर्य की किरणें कभी भी लम्बवत् नहीं पड़ती है।

रोचक तथ्य–
वे कल्पित रेखाएं जो सभी स्थानों के समान औसत तापमान वाले स्थानों को मिलाती है, समताप रेखाएं **(Isotherms)** कहलाती हैं। समताप रेखाओं द्वारा भूमण्डल पर तापमान का वितरण दिखाया जाता है।

भारत के लगभग मध्य भाग से कर्क रेखा ($23\frac{1}{2}^0$ उत्तरी) पूरब–पश्चिम दिशा में गुजरती है। इस प्रकार भारत का उत्तरी भाग शीतोष्ण कटिबंध एवं दक्षिणी भाग उष्ण कटिबंध में स्थित है।

प्रशिक्षुओं से प्रश्नोत्तर माध्यम से चर्चा करें–

- *भारत कितने ताप कटिबंध में स्थित हैं, इसके कौन–कौन से प्रभाव भारत की जलवायु पर पड़ते हैं।*
- *मध्यरात्रि सूर्य का देश किसे कहते हैं और क्यों ?*
- *ध्रुवीय ज्योति (अरोरा बोरियालिस तथा अरोरा आस्ट्रियालिस) से आप क्या समझते हैं ?*

मूल्यांकन

1. पृथ्वी पर शक्ति का स्रोत क्या है

   (क) चन्द्रमा (ख) सूर्य (ग) तारे (घ) अन्य

2. ध्रुवों पर विषुवत रेखा का लगभग कितना भाग सूर्यातप मिलता है ?

   (क) *40 %* (ख) *25 %* (ग) *75 %* (घ) *30 %*

3. पृथ्वी के कितने ताप कटिबंध हैं

   (क) 6 (ख) 2 (ग) 5 (घ) 3

4. शीतकटिबंध किसके निकट पाया जाता है ?

   (क) ध्रुवों (ख) कर्क रेखा (ग) मकर रेखा (घ) विषुवत रेखा

   (i) ऊष्मा (सूर्यातप) की सर्वाधिक मात्रा किस कटिबंध में प्राप्त होती है ?

   (ii) दक्षिणी ध्रुव किस गोलार्द्ध में स्थित है ?

   (iii) भारत की अवस्थिति कितने ताप कटिबंधों में है?

1. ऊष्मा की सर्वाधिक मात्रा उष्ण कटिबंध में क्यों प्राप्त होती है?
2. भारत में कई ऋतुएं क्यों पाई जाती हैं ?
3. अंटार्कटिका अभियान हेतु शीत ऋतु में ही क्यों अन्वेषण दल भेजा जाता है ?

गतिविधियाँ / प्रोजेक्ट

1. एक चार्ट पेपर पर ग्लोब के रूप में पृथ्वी के ताप कटिबंधों का प्रदर्शन अलग–अलग रंगों को भरकर करना।
2. भारत के रिक्त मानचित्र पर विभिन्न तापकटिबंधों में स्थित राज्यों की पहचान करना।
3. विश्व के विभिन्न ताप कटिबंधों पर सामूहिक चर्चा करना।

पृथ्वी की गतियाँ

- भूमिका
- पृथ्वी की गतियाँ
  - परिभ्रमण, क्या, क्यों, कैसे।
  - परिक्रमण क्या, क्यों, कैसे
  - परिणाम
  - दिन–रात का होना
  - ऋतु परिवर्तन
  - उत्तरी अयनांत
  - दक्षिणी अयनांत
  - विषुव

पृथ्वी सौरमण्डल का एक अभिन्न अंग है। अतः सूर्य और चन्द्रमा से इसका विशेष सम्बन्ध है। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है और चन्द्रमा पृथ्वी के। इसके अतिरिक्त पृथ्वी अपनी धुरी पर भी घूमती है। सूर्य, चन्द्रमा और पृथ्वी का यह विशेष सम्बन्ध हमारे लिए बड़े महत्व का है, क्योंकि पृथ्वी के धरातल पर दिन–रात का होना, ऋतुओं का बदलना, ज्वार–भाटे का आना तथा सूर्य व चन्द्र–ग्रहण का होना आदि सभी बातें इन्हीं सम्बन्धों का प्रत्यक्ष परिणाम है। धरातल पर होने वाली जलवायु और मौसमी परिवर्तन भी इन्हीं सम्बन्धों का अप्रत्यक्ष प्रतिफल है। अतः पृथ्वी की गतियों का ज्ञान हमारे लिए नितान्त आवश्यक हो जाता है।

पृथ्वी स्थिर न होकर निरन्तर गतिशील है। पृथ्वी की निम्नलिखित दो गतियाँ हैं–

1. घूर्णन या दैनिक गति ***(Rotation)***
2. परिक्रमण या वार्षिक गति ***(Revolution)***

घूर्णन गति

पृथ्वी एक कल्पित धुरी ***(Axis)*** पर सदैव पश्चिम से पूरब दिशा में (उत्तरी ध्रुव के परिप्रेक्ष्य में घड़ी की सूई की विपरीत दिशा में ***(Anticlock wise)*** लट्टू का भाँति घूमती है। पृथ्वी की इसी गति को घूर्णन अथवा आवर्तन गति कहा जाता है। पृथ्वी जिस धुरी अथवा अक्ष पर घूमती है, वह एक काल्पनिक रेखा है जो पृथ्वी के केन्द्र से होकर उसके उत्तरी तथा ध्रुवों से मिलाती है। पृथ्वी का यह अक्ष अपने कक्ष–तल के साथ $66\frac{1}{2}^0$ का कोण बनाता है। यह अक्ष सदैव एक ही ओर झुका रहता है। पृथ्वी जब अपनी धुरी पर एक पूरा चक्कर लगा लेती है तो एक दिन होता है। इसी से इस गति को दैनिक गति कहते हैं।

बहुत समय तक लोगों को यह विश्वास था कि पृथ्वी स्थिर है और सूर्य, पृथ्वी का चक्कर लगाता है। आज भी जब हम प्रातः सूर्य को पूरब से उदय होकर संध्या को पश्चिम दिशा में अस्त होते देखते हैं तो यही प्रतीत होता है। किन्तु वस्तुतः सूर्य अपने स्थान पर स्थिर है और पृथ्वी ही अपने अक्ष पर पश्चिम से पूर्व की ओर चक्कर लगाती है।

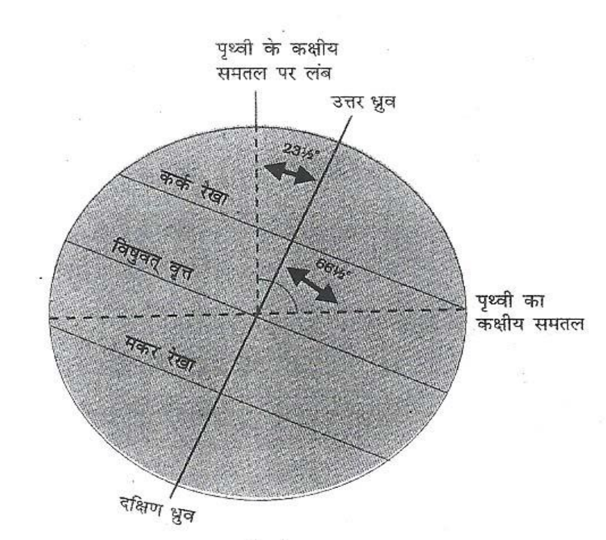

पृथ्वी के अक्ष का झुकाव

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें –

- जिस प्रकार चलती हुई रेलगाड़ी में यात्रियों को रेलगाड़ी के बदले भूमि ही विपरीत दिशा में दौड़ती हुई प्रतीत होती है। उसी प्रकार पृथ्वी के घूमते रहने पर भी यह प्रतीत होता है कि सूर्य घूमता है।
- कुम्हार के चाक पर गीली मिट्‌टी की गेंद रखकर चाक को घुमाया जाय तो मिट्‌टी की गेंद का मध्य भाग कुछ उभरता जायेगा और ऊपर तथा नीचे के सिरे भीतर धँसते जायेंगे। ठीक यही दशा पृथ्वी की भी है।

प्रभाव

पृथ्वी एक प्रकाश हीन पिंड है। पृथ्वी को सूर्य से प्रकाश प्राप्त होता है। यदि पृथ्वी स्थिर होती तो पृथ्वी का आधा भाग सदैव प्रकाश में तथा दूसरा आधा भाग सदैव ही अन्धकार में रहता। इस तरह एक भाग में हमेशा दिन तथा एक भाग में हमेशा रात्रि होती । परन्तु पृथ्वी के घूर्णन के कारण पृथ्वी का प्रत्येक भाग बारी–बारी से सूर्य के सम्मुख आता रहता है। अतः सूर्य के सम्मुख वाले भाग में दिन और सूर्य के विपरीत वाले भाग में रात्रि होती है। ग्लोब पर वह वृत्त जो दिन तथा रात्रि को विभाजित करता है उसे 'प्रदीप्ति वृत्त' कहते हैं। यह वृत्त अक्ष के साथ नहीं मिलता है। इस प्रकार पृथ्वी की घूर्णन गति का ही परिणाम दिन–रात का होना है। पृथ्वी एक दिन–रात (अर्थात 24 घण्टे) में अपने अक्ष पर घूम जाती है। इसी कारण से एक दिन 24 घण्टे का माना गया है।

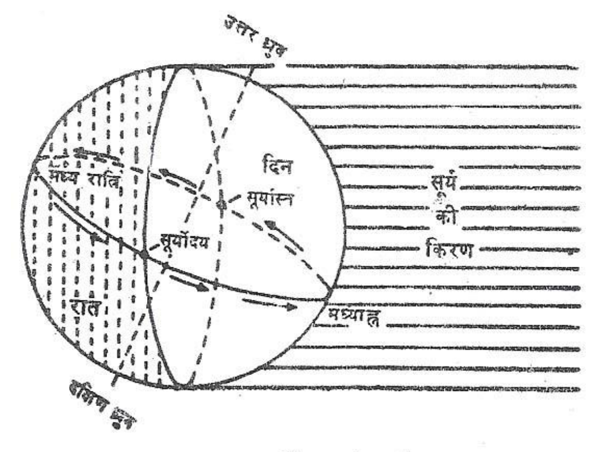

सूर्योदय एवं सूर्यास्त

दिन व रात की अवधारणा को समझाने के लिए प्रशिक्षुओं के समक्ष गतिविधि का संपादन किया जा सकता है –

पृथ्वी को दर्शाने के लिए एक गेंद लें तथा सूर्य को दर्शाने के लिए एक जलती हुई मोमबत्ती। गेंद पर ***x*** नामक शहर दिखाने के लिए निशान लगा लें। अब गेंद को इस प्रकार रखें कि शहर ***x*** में अंधेरा हो। गेंद को अब बायें से दांये घुमाएं। जैसे ही गेंद को थोड़ा घुमाते हैं, तो शहर ***x*** में सूर्योदय होगा। यदि गेंद को घुमाना जारी रखें तो विंदु ***x*** धीरे–धीरे सूर्य से दूर चला जाता है। यह सूर्यास्त होगा।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें–

पृथ्वी के घूर्णन गति के अभाव में जीवन कैसा होगा।

परिक्रमण गति

पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमने के साथ–साथ सूर्य के चारों ओर भी चक्कर लगाती है। पृथ्वी की इस परिक्रमा का मार्ग निश्चित है। यह मार्ग पूर्ण वृत्त न होकर अण्डाकार है, जिसके केन्द्र पर सूर्य स्थित है। गणितीय भाषा में इस परिक्रमण पक्ष को दीर्घवृत्त ***(Ellipse)*** का आकार कहा जाता है। पृथ्वी को सूर्य की एक परिक्रमा करने में 365¼ दिन लगते हैं। पृथ्वी की इसी गति को परिक्रमण गति ***(Revolution)*** अथवा वार्षिक गति कहते हैं। इस गति को हम लोग 365 दिन का मानते हैं तथा सुविधा के लिए 6 घंटे को इसमें नहीं जोड़ते हैं। चार वर्षों में प्रत्येक वर्ष के बचे हुए 6 घंटे मिलकर ***(6x4=24*** **घंटे***)*** एक दिन के बराबर हो जाते हैं। यही कारण है कि प्रत्येक चौथे वर्ष फरवरी माह 28 दिन के बदले 29 दिन का होता है। ऐसा वर्ष जिसमें 366 दिन होते हैं उसे 'लीप वर्ष' कहा जाता है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें –

- वृत्त और दीर्घवृत्त में क्या अन्तर है ?
- अगला लीप वर्ष कब होगा ?

जब वर्ष के किसी निश्चित अवधि में ताप और वायु की सामान्यतः स्थिर अवस्था होती है तो वह एक ऋतु कहलाती है। इस प्रकार ऋतु परिवर्तन और उसके वर्गीकरण का मूल आधार ताप है। पृथ्वी को ताप सूर्य से प्राप्त होता है किन्तु ताप की मात्रा प्रकाश प्राप्ति की अवधि पर निर्भर होती है। पृथ्वी की परिक्रमा और उसके अक्ष से झुके होने के कारण पृथ्वी की सूर्य से सापेक्षिक स्थितियाँ परिवर्तित होती रहती हैं। फलतः सूर्य की किरणें कभी तिरछी, कभी सीधी पड़ती हैं जिससे पृथ्वी के विभिन्न स्थानों पर प्रकाश की प्राप्ति अवधि अलग–अलग होती है। जब किसी स्थान पर सूर्य अधिक समय तक के लिए चमकता है तो उसे अधिक ताप प्राप्त होता है। रात्रि में वह ताप पुनः पृथ्वी से नहीं निकल पाता, जिसके परिणामस्वरूप वहाँ ग्रीष्म ऋतु होती है। इसके विपरीत यदि सूर्य कम समय के लिए चमकता है तो दिन छोटा और रातें लम्बी होती है और दिन को प्राप्त तापमान की मात्रा पृथ्वी से अधिक मात्रा में निकल जाने के परिणामस्वरूप जाड़े (शीत) की ऋतु होती है। सामान्यतः एक वर्ष को गर्मी, सर्दी, वसंत एवं शरद ऋतुओं में बाँटा जाता है। ऋतुओं में परिवर्तन सूर्य के चारों ओर पृथ्वी की स्थिति में परिवर्तन के कारण होता है। पृथ्वी के परिक्रमण में चार मुख्य अवस्थायें आती हैं। इन चारों ही अवस्थाओं में ऋतु परिवर्तन होता है।

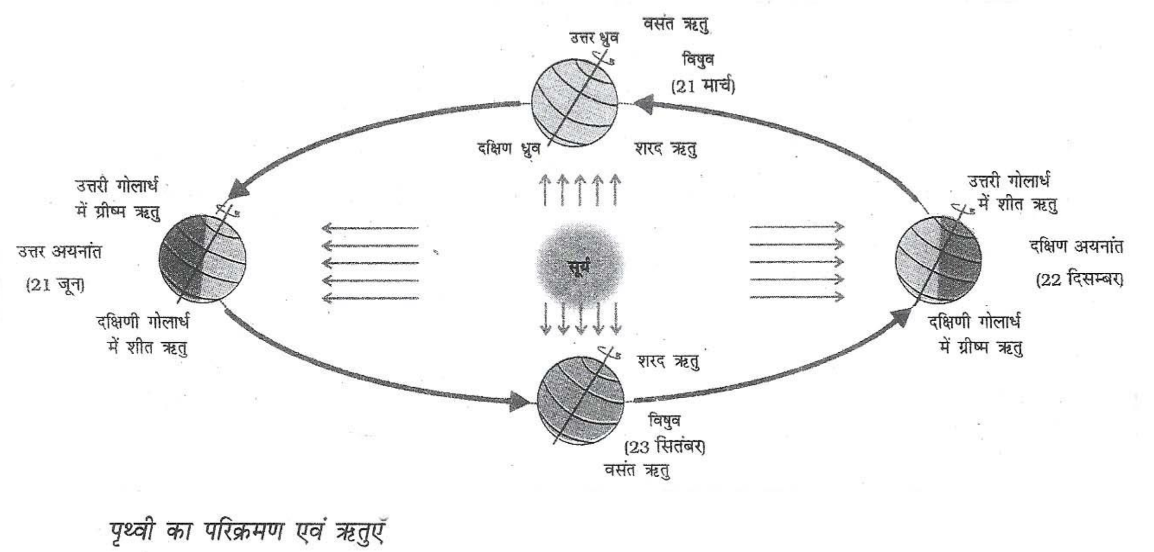

पृथ्वी का परिक्रमण एवं ऋतुएँ

चित्र के अनुसार 21 जून को उत्तरी गोलार्द्ध सूर्य की ओर झुका हुआ है। सूर्य की किरणें कर्क रेखा पर सीधी पड़ती हैं। इसके परिणामस्वरूप इन क्षेत्रों में ऊष्मा अधिक प्राप्त होती है। ध्रुवीय क्षेत्रों में ऊष्मा कम प्राप्त होती है क्योंकि वहाँ पर सूर्य की किरणें तिरछी पड़ती हैं। उत्तरी ध्रुव सूर्य की तरफ झुका हुआ है तथा उत्तरी ध्रुव रेखा के बाद वाले भागों पर लगभग 6 महीने तक लगातार दिन रहता है। चूंकि उत्तरी गोलार्द्ध के बहुत बड़े भाग में सूर्य का प्रकाश प्राप्त होता है, इसलिए विषुवत वृत्त के उत्तरी भाग में ग्रीष्म काल होता है। 21 जून को इन क्षेत्रों में सबसे लम्बा दिन तथा सबसे छोटी रात होती है। पृथ्वी की यह अवस्था 'उत्तर अयनांत' कहलाती है।

22 दिसम्बर को दक्षिणी ध्रुव सूर्य की ओर झुके होने के कारण मकर रेखा पर सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं। चूँकि सूर्य की किरणें मकर रेखा पर लंबवत् पडती हैं, इसलिए दक्षिणी गोलार्द्ध के बहुत बड़े भाग में प्रकाश प्राप्त होता है। इसलिए दक्षिणी गोलार्द्ध में लम्बे दिन तथा छोटी रातों वाली ग्रीष्म ऋतु होती है। इसके ठीक विपरीत स्थिति उत्तरी गोलार्द्ध में होती है। पृथ्वी की यह अवस्था 'दक्षिण अयनांत' कहलाती है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें
भारत में क्रिसमसडे शीतकाल में तथा आस्ट्रेलिया में ग्रीष्मकाल में मनाया जाता है, क्यों ?

21 मार्च तथा 23 सितम्बर को सूर्य की किरणें विषुवत वृत्त पर लम्बवत् या सीधी पड़ती हैं। इस अवस्था में कोई भी ध्रुव सूर्य की ओर नहीं झुका होता है। इसलिए पूरी पृथ्वी पर रात व दिन बराबर होते हैं। इसे विषुव ***(Equinox)*** कहा जाता है। 23 सितम्बर को उत्तरी गोलार्द्ध में शरद ऋतु होती है जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध में बसन्त ऋतु होती है। 21 मार्च को स्थिति इसके ठीक विपरीत होती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि पृथ्वी के घूर्णन अर्थात् परिभ्रमण एवं परिक्रमण के कारण क्रमशः दिन–रात तथा ऋतुओं में परिवर्तन होता है।

मूल्यांकन

(i) पृथ्वी की सूर्य के चारों ओर की गति है–
(क) परिभ्रमण (ख) परिक्रमण (ग) झुकाव (घ) अन्य

(ii) ग्रीष्म काल में क्रिसमस मनाया जाता है–
(क) भारत (ख) रूस (ग) आस्ट्रेलिया (घ) चीन

(iii) ऋतुओं में परिवर्तन पृथ्वी की किस गति का परिणाम है ?
(क) परिक्रमण (ख) गुरूत्वाकर्षण (ग) परिभ्रमण (घ) झुकाव

(iv) 21 जून को सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं ?
(क) मकर रेखा (ख) विषुवतवृत्त (ग) आर्कटिकवृत्त (घ) कर्करेखा

(i) पृथ्वी के अक्ष का झुकाव कितना है ?
(ii) विषुव क्या है ?
(iii) लीप वर्ष में कितने दिन होते हैं ?

(III) ध्रुवों पर 6 महीने का दिन व 6 महीने की रात होती है क्यों ?
(IV) परिभ्रमण तथा परिक्रमण को परिभाषित कीजिए ।

क्रियाकलाप/प्रोजेक्ट कार्य

1. पृथ्वी के अपने अक्ष पर झुकाव के लिए एक चित्र बनाइए।
2. अभ्यासपुस्तिका पर 21 मार्च, 21 जून, 23 सितम्बर, 22 दिसम्बर को पृथ्वी की स्थिति का दीर्घवृत्ताकार (अण्डाकार) पथ पर चित्र बनाइये।

महाद्वीप व महासागर

महाद्वीप व महासागर ग्लोब के दो प्रमुख अंग माने जाते हैं। इन्हें पृथ्वी के प्रथम श्रेणी के उच्चावच के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है। पृथ्वी के धरातल का लगभग *70.8%* भाग जल और *29.2%* भाग स्थल से घिरा हुआ है किन्तु जल व स्थल का यह वितरण भी असमान है।

- महाद्वीप व महासागर का वितरण
- महासागरीय गोलार्द्ध
- महाद्वीपीय गोलार्द्ध
- आकार
- महाद्वीपों की संख्या व नाम
- महासागरों की संख्या व नाम
- महाद्वीपों पर स्थलाकृतियाँ
- महासागरों की स्थलाकृतियाँ

उत्तरी गोलार्द्ध में स्थल की प्रधानता है। समस्त स्थलीय भाग का लगभग *75%* भाग विषुवत रेखा के उत्तर में स्थित है। इसलिए उत्तरी गोलार्द्ध को 'महाद्वीपीय गोलार्द्ध' भी कहा जाता है। इसके विपरीत दक्षिणी गोलार्द्ध में जल की अधिकता है, इसलिए इस गोलार्द्ध को महासागरीय गोलार्द्ध' भी कहा जाता है।

महाद्वीपीय भाग लगभग त्रिभुज के आकार में विस्तृत हैं। इनके आधार उत्तर में आर्कटिक सागर के सहारे हैं तथा इनका शीर्ष दक्षिण की ओर है। पश्चिमी गोलार्द्ध में उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका समद्विबाहु त्रिभुज के रूप में है, जिनका आधार आर्कटिक सागर व शीर्ष दक्षिण में केपहार्न में स्थित है। इसी तरह यूरोप व एशिया भी त्रिभुजों का रूप धारण करते हैं।

प्रशिक्षुओं से ग्लोब के माध्यम से चर्चा करें
- महाद्वीपों की आकृति त्रिभुजाकार है, कैसे ?
- दीवाल मानचित्रों का अवलोकन कराकर त्रिभुजाकार महाद्वीपों से अवगत कराना।

मोटे तौर पर महासागरों की आकृति भी त्रिभुजाकार है। स्थलीय भागों के विपरीत महासागरों का आधार दक्षिण में और शीर्ष उत्तर में पाये जाते हैं। उत्तरी ध्रुव के चारों ओर जलीय भाग विस्तृत है जबकि दक्षिणी ध्रुव के पास स्थलीय भाग का विस्तार है। धरातल पर जलीय तथा स्थलीय भाग एक–दूसरे के विपरीत स्थित है। धरातल पर *44.6%* भाग में सागर के विपरीत सागर है तथा केवल *1.4%* में स्थल के विपरीत स्थल मिलते हैं। स्थलीय भागों का लगभग *95%* भाग सागर के विपरीत मिलता है।

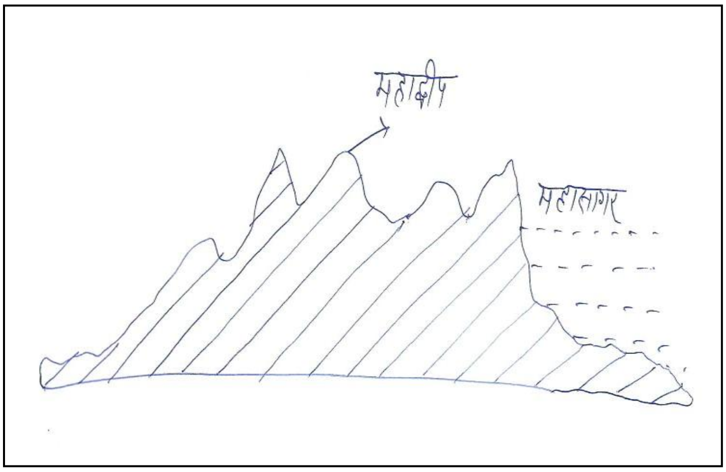

महाद्वीप –वर्तमान में पृथ्वी पर कुल सात (7) महाद्वीप है–एशिया, अफ्रीका, उत्तरी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका, यूरोप, आस्ट्रेलिया, अण्टार्कटिका। महाद्वीपों की औसत ऊँचाई लगभग 840 मीटर है।

पारिभाषिक शब्द

महाद्वीप–समुद्र तल से ऊपर उठा हुआ विशालतम भूखण्ड ।

महासागर–पृथ्वी के धरातल पर अवस्थित विशालतम बेसिननुमा जलराशि।

महाद्वीप	क्षेत्रफल (किरोड़ वर्ग कि0मी0)
1. एशिया	4.26
2. अफ्रीका	3.04
3. उत्तरी अमेरिका	2.53
4. दक्षिणी अमेरिका	1.75
5. अण्टार्कटिका	1.33
6. यूरोप	1.05
7. आस्ट्रेलिया	0.86

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें –

- भूमध्य रेखा किन–किन महाद्वीपों से होकर गुजरती है ?
- मकर रेखा किन–किन महाद्वीपों से होकर गुजरती है ?
- कर्क रेखा किन–किन महाद्वीपों से होकर गुजरती है ?

एशिया

एशिया महाद्वीप विश्व का सबसे बड़ा महाद्वीप है। यह पृथ्वी के कुल क्षेत्रफल के एक तिहाई भाग में विस्तृत है। यह महाद्वीप पूर्वी गोलार्द्ध में स्थित है। कर्क रेखा ($23\frac{1}{2}^0$ उत्तरी) इस महाद्वीप से होकर गुजरती है। एशिया महाद्वीप के पश्चिमी भाग में स्थित यूराल पर्वत यूरोप महाद्वीप के साथ प्राकृतिक सीमा बनाती है। यूरोप व एशिया के संयुक्त भूभाग

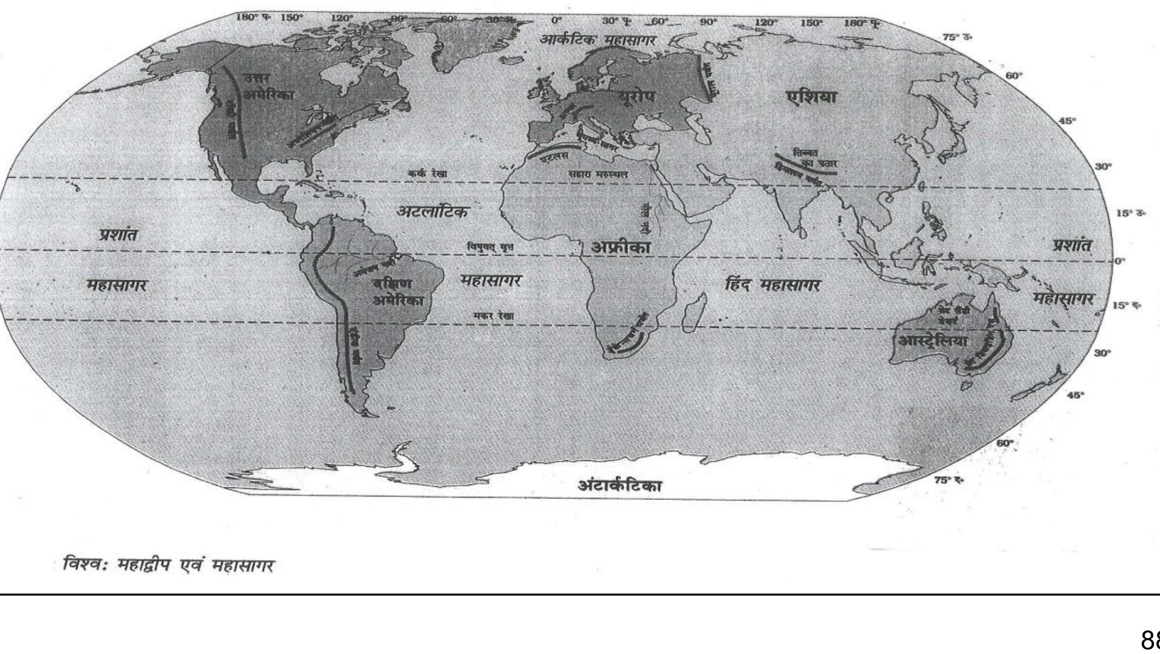

विश्व: महाद्वीप एवं महासागर

को यूरशिया (यूरोप+एशिया) कहा जाता है। एशिया महाद्वीप के दक्षिणी भाग में हिन्द महासागर अवस्थित है। एशिया व अफ्रीका महाद्वीप के बीच स्वेजनहर व लालसागर सीमा बनाते हैं। एशिया व आस्ट्रेलिया महाद्वीप के बीच न्यूगिनी द्वीप सीमा समझा जाता है। एशिया महाद्वीप को अध्ययन की सुविधा के लिए 5 प्रदेशों में विभाजित किया जाता है –

1. दक्षिण पश्चिम एशिया
2. दक्षिण एशिया
3. दक्षिण पूर्वी एशिया
4. पूर्वी एशिया
5. मध्य एशिया

दक्षिण एशिया प्रदेश में भारत की अवस्थिति है। भारत के साथ इस प्रदेश में सम्मिलित देश बांग्लादेश, भूटान, पाकिस्तान, नेपाल, श्रीलंका इत्यादि हैं।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें –

- एशिया के विभिन्न प्रदेशों में कौन–कौन से देश शामिल है, एटलस पर खोजें।

एशिया में संसार की सबसे ऊँची पर्वत चोटी माउंट एवरेस्ट (8850 मी0) नेपाल व तिब्बत (चीन) की सीमा पर हिमालय में स्थित है। 'संसार की छत' कहा जाने वाला 'तिब्बत का पठार, दक्कन पठार, इसी महाद्वीप में स्थित है। इस महाद्वीप की प्रमुख नदियाँ गंगा, सतलज, सिन्धु, दजला–फरात, ह्वांगहो, इरावदी, ब्रहमपुत्र है।

एशिया महाद्वीप का क्षेत्रफल सर्वाधिक है। अतः इस महाद्वीप पर जलवायु की विविधता होना स्वाभाविक है। इसका विस्तार ध्रुवीय प्रदेश से लेकर विषुवत रेखा तक है। अतः इस महाद्वीप में मानसूनी जलवायु, शुष्क जलवायु व शीत जलवायु पाई जाती है। विश्व का न्यूनतम तापमान इसी महाद्वीप में बर्खोयांस्क में तथा उच्चतम तापमान जैकोबाबाद में अंकित किया जाता है। सर्वाधिक वर्षा वाला स्थल मासिनराम एवं न्यूनतम वर्षा वाला स्थल 'अदन' इसी महाद्वीप पर अवस्थित है।

अफ्रीका

क्षेत्रफल की दृष्टि से अफ्रीका विश्व का दूसरा बड़ा महाद्वीप है। स्वेज नहर, स्वेज की खाड़ी तथा लाल सागर अफ्रीका तथा एशिया के मध्य सीमा बनाते हैं। जिब्राल्टर जलसन्धि इसे यूरोप से अलग करती है। इसके पश्चिम में अन्ध या अटलांटिक महासागर और पूरब में हिन्द महासागर स्थित है।

यह एक अनोखा महाद्वीप है। इसके उत्तरी भाग में संसार का सबसे बड़ा मरूस्थल 'सहारा' फैला हुआ है। अफ्रीका महाद्वीप की सबसे ऊँची पर्वत चोटी माउंट किलिमंजारो (5895मी0) है। विश्व की सबसे लम्बी नदी नील नदी इसी

महाद्वीप में प्रवाहित होती है। कांगो, नाइजर, जैम्बजी, लिम्पोपो अन्य नदियाँ हैं। कांगों नदी विषुवत रेखा को दो बार काटती हैं वहीं लिम्पोपो नदी मकर रेखा को दो बार काटती है।

अफ्रीका महाद्वीप के उत्तर–पश्चिमी भाग में एटलस पर्वत, सुदूर दक्षिण में ड्रेकेंसबर्ग पर्वत की अवस्थिति है। अफ्रीका महाद्वीप में विश्व के, आश्चर्यजनक स्थलाकृतिक लक्षणों में से एक 'महान भ्रंश घाटी'***(Great Rift Vally)*** है, जो पृथ्वी की परिधि के एक छठांश (1/6) में फैली है। यह पूर्वी अफ्रीका में स्थित है जो जार्डन नदी की घाटी, लाल सागर के बेसिन होती हुई जेन्बजी नदी तक लगभग 4800 कि0मी0 की लम्बाई में विस्तृत है। अफ्रीका महाद्वीप में आर्थिक और सौन्दर्य महत्व की बहुत सारी झीलें हैं। इनमें प्रमुख रूप से विक्टोरिया, न्यासा, टंगानिका, चाड उल्लेखनीय हैं। अफ्रीका की सबसे बड़ी झील विक्टोरिया है जो यूगाण्डा, कीनिया व तनजानिया देश से सीमा बनाती है। अफ्रीका महाद्वीप में अपनी सुन्दर प्राकृतिक छटा के लिए प्रसिद्ध विक्टोरिया जलप्रपात है। विश्वप्रसिद्ध हीरे और सोने की यहाँ बहुत सी खानें हैं।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें

- अफ्रीका महाद्वीप में भूमध्य रेखा, कर्क व मकर रेखा किन–किन देशों से गुजरती है।
- अफ्रीका के पर्वत, पठार, नदियों झीलों का मानचित्र पर अवलोकन ।

उत्तरी अमेरिका

क्षेत्रफल की दृष्टि से यह विश्व का तीसरा सबसे बड़ा महाद्वीप है। इस महाद्वीप के पश्चिम में प्रशान्त महासागर, पूरब में अटलांटिक महासागर, उत्तर में आर्कटिक महासागर स्थित है। कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, मैक्सिको इस महाद्वीप के प्रमुख देश हैं। पनामा स्थलसंधि द्वारा यह दक्षिणी अमेरिका महाद्वीप से अलग होता है। एशिया से यह बेरिंग जलसन्धि से अलग होता है। सर्वप्रथम 1492 ई0 मे कोलम्बस भारत की खोज करते हुए यहाँ पहुँचा। कालान्तर में अमेरिगो वेस्पुक्की पहुँचा, जिसके नाम पर इसका नाम अमेरिका पड़ा। 100^0 प0 देशांतर इसके लगभग मध्य से होकर गुजरती है। इसके पश्चिमी भाग में राकी पर्वतमाला तथा पूर्वी भाग में अप्लेशियन पर्वत स्थित है। इस महाद्वीप से होकर आर्कटिक वृत्त तथा कर्क रेखा गुजरती है। इस कारण से जलवायुविक वानस्पतिक विविधता व्यापक रूप से पाई जाती है। महाद्वीप के उत्तर पूर्वी भाग में ग्रीनलैण्ड द्वीप है जिस पर डेनमार्क का अधिकार है। महाद्वीप की प्रमुख नदियाँ हडसन, सेन्ट लारेंस, मिसीसिपी, मिसौरी, कोलोरैडो, रियोग्रान्डे उल्लेखनीय है। महाद्वीप में यत्र–तत्र बड़ी–बड़ी झीलों का भी विस्तार है। इनमें अमेरिका की पाँच महान झीलें ***(Great Lakes)*** विश्व प्रसिद्ध हैं–सुपीरियर, मिशिगन, ह्यूरन, इरी, ओन्टेरियो के नाम से संबोधित की जाती हैं। ईरी व ओन्टेरियो के मध्य नियाग्रा जलप्रपात विश्वप्रसिद्ध पर्यटन स्थल है। विश्वप्रसिद्ध 'सिलिकान घाटी', इसी महाद्वीप में कैलीफोर्निया में स्थित है जो इलेक्ट्रानिक्स उद्योग के लिए जानी जाती है। महान झीले तथा सेंट लारेंस नदी क्रम विश्व का विशालम तथा व्यवस्तम आन्तरिक जलामार्ग है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें कि

- कर्क व आर्कटिक रेखा इस महाद्वीप से गुजरती है, तो महाद्वीप में कैसी जलवायु पाई जायेगी ?
- मानचित्र (एटलस) पर विभिन्न नदियों, झीलों को दर्शा कर चर्चा करें।

दक्षिणी अमेरिका –दक्षिणी गोंलार्द्ध में इसकी अवस्थिति के कारण इसे दक्षिणी अमेरिका कहा जाता है। इसका लगभग दो तिहाई भाग विषुवत रेखा के दक्षिण में उष्ण कटिबंध में अवस्थित है। दक्षिणी अमेरिका, मध्य अमेरिका, मैक्सिको और वेस्टइंडीज को मिलाकर लैटिन अमेरिका कहा जाता है। 'लैटिन' प्राचीन रोमवासियों की भाषा थी। जिस प्रकार अनेक भारतीय भाषाओं का विकास संस्कृत से हुआ। उसी प्रकार यूरोपीय भाषाओं, स्पेनी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, इटालवी का विकास लैटिन भाषा से हुआ है। इन भाषाओं को बोलने वाले लोगों को 'लैटिन' कहते हैं। इस महाद्वीप से भूमध्य रेखा तथा मकर रेखा होकर गुजरती है महाद्वीप के पश्चिमी भाग में संसार की सबसे लम्बी पर्वतमाला 'एंडीज' का विस्तार उत्तर से दक्षिण दिशा में है।

प्रशिक्षुओं से एटलस के माध्यम से चर्चा करें – • दक्षिणी अमेरिका के किन–किन देशों से होकर भूमध्य रेखा गुजरती है ? • दक्षिणी अमेरिका के किन–किन देशों से होकर मकर रेखा गुजरती है ?

'एकांकागुआ' एण्डीज पर्वत की सर्वोच्च चोटी है जो दक्षिणी भाग में स्थित है। उत्तरी भाग में चिम्बोरेजो एवं कोटोपैक्सी अन्य चोटियाँ हैं। बोलिविया तथा पेरू देश की सीमा पर स्थित टिटिकाका झील विश्व में सर्वाधिक ऊँचाई पर स्थित विशाल मीठे पानी की झील है। दक्षिणी अमेरिका में तीन प्रमुख नदी बेसिन है –

1. अमेजन बेसिन 2. ओरिनिको बेसिन 3. पराना–पराग्वे बेसिन

जल की मात्रा की दृष्टि से अमेजन बेसिन विश्व की सबसे बड़ी नदी है। यह अटलांटिक महासागर में गिरती है। अमेजन क्षेत्र विषुवत रेखा के पास है यही कारण है कि अधिक वर्षा के कारण यहाँ लम्बे–लम्बे वृक्षों के सघन वन मिलते हैं। दक्षिणी अमेरिका के इन सघन वनों को 'सेल्वास' कहते हैं, जिन्हें विश्व का फेफड़ा (Lungs of The world) भी कहा जाता है। वही दूसरी ओर महाद्वीप के सुदूर दक्षिणी भागों में व एण्डीज पर्वतीय भागों में कोणधारी वन भी पाये जाते हैं। जबकि सवाना घासभूमियों को वेनेजुएला में 'लानोस' तथा ब्राजील में कैम्पोज नाम से भी जाना जाता है। महाद्वीप की टेरारोसा मिट्टी काफी उत्पादन के लिए विश्व प्रसिद्ध है। इसे 'काफी मृदा' भी कहा जाता है। महाद्वीप में अटाकामा एवं पैटागोनिया नामक दो मरूस्थल भी हैं जो शुष्क जलवायु को प्रदर्शित करते हैं। संसार का सबसे ऊँचा जलप्रपात 'एंजिल' जलप्रपात मनोरम दृश्य को प्रस्तुत करता है।

यूरोप–यूरोप एक सघन जनसंख्या वाला औद्योगिक एवं विकसित महाद्वीप है। क्षेत्रफल में केवल आस्ट्रेलिया ही यूरोप से छोटा है। यूरोप महाद्वीप के उत्तर में बैरेन्ट सागर, पश्चिम में अटलांटिक महासागर तथा पूर्व में यूराल पर्वत इसकी सीमायें बनाते हैं। यूरोप तीन तरफ से पानी से घिरा हुआ है इसीलिए इसको एक 'प्रायद्वीप' ***(Peninsula)*** कहा जाता है। इसकी तट रेखा बहुत कटी–छटी है।

इस महाद्वीप की प्रमुख पर्वत श्रेणियाँ पिरेनीज, पेनाइन्स, ब्लैक फारेस्ट, आल्प्स, काकेशस, वास्जेस, कार्पोथियन उल्लेखनीय हैं। यूरोप की सर्वोच्च चोटी माउंट एल्ब्रुश है जो काकेशस पर्वत माला में है। महाद्वीप में राइन, वोल्गा, डान, सीन, पो, डेन्यूब आदि नदियाँ प्रवाहित होती हैं।

महत्वपूर्ण तथ्य– स्केण्डिनेवियाई देश–नार्वे, स्वीडेन, डेनमार्क, आइसलैण्ड बाल्टिक देश–लाटविया, लिथुआनिया, एस्टोनिया निचले देश–बेल्जियम, नीदरलैण्ड, लक्जेमबर्ग ***(Bene-Lux)*** आइबेरियाई प्रायद्वीप– पुर्तगाल, स्पेन, फ्रांस एवं भूमध्य सागर तटवर्तीदेश

यूरोप की सबसे लम्बी नदी वोल्गा है, जबकि राइन नदी प्रमुख व्यापारिक नदी है। यूरोप की अधिकांश नदियाँ आन्तरिक जलमार्ग के रूप में प्रसिद्ध हैं। विश्व प्रसिद्ध पर्यटन व वास्थ्यवर्द्धक केन्द्र स्विटजरलैण्ड इसी महाद्वीप में है। विश्व का आधा से अधिक जैतून इसी महाद्वीप से प्राप्त होता है। 1789 की औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् यहाँ के लोगों ने बहुत उन्नति की।

प्रशिक्षुओं से एटलस की सहायता से यूरोप महाद्वीप पर चर्चा करें तथा यूरोप के मानचित्र पर प्रमुख नगरों को दर्शाने को कहें।

आस्ट्रेलिया–यह विश्व का सबसे छोटा महाद्वीप है। विश्व में आस्ट्रेलिया ही एकमात्र ऐसा देश है जो पूरे महाद्वीप पर फैला हआ है। इसीलिए इसे 'द्वीपीय महाद्वीप' भी कहते हैं। यह पूर्णतः दक्षिणी गोलार्द्ध में अवस्थित है। मकर रेखा (23 1/2 डिग्री द0) इसके लगभग बीच से होकर गुजरती है। आस्ट्रेलिया की खोज जेम्स कुक ने 1770 में की थी।

- संसार के मानचित्र के माध्यम से प्रशिक्षुओं से चर्चा करें कि आस्ट्रेलिया के पूरब, दक्षिण व पश्चिम में कौन–कौन से महासागर विस्तृत हैं ?
- आस्ट्रेलिया के दक्षिण–पूर्व में कौन सा बड़ा द्वीप है ?

आस्ट्रेलिया का मरूस्थल विश्व का दूसरा सबसे बड़ा मरूस्थल है जो पश्चिमी भाग में अवस्थित है। पूर्वी भाग में ग्रेट डिवाइडिंग रेंज नामक पर्वतमाला है। माउंट कोशिश्को' इसकी सर्वोच्च चोटी है। कंगारू नामक जानवर इस महाद्वीप में पाया जाता है। महाद्वीप में मरे व डार्लिंग नामक नदियाँ बहती हैं। इस महाद्वीप के उत्तरपूर्वी भाग में महासागर में मूंगे की चट्टाने मिलती हैं जिन्हें 'ग्रेट बैरियर रीफ' कहा जाता है। शुष्क होने के कारण ही इस महाद्वीप को 'प्यासी भूमि का महादेश' भी कहा जाता है। यही कारण है कि भेड़ पालन इस महादेश की प्रमुख आर्थिक क्रिया है। विश्व की सर्वाधिक भेड़ें यही मिलती हैं। इस महाद्वीप में उत्सुत पानी के चश्मे एवं कुएं अवस्थित है, जो ग्रेट आर्टीजियन बेसिन में देखे जा सकते हैं।

अण्टार्कटिका

यह महाद्वीप दक्षिणी गोलार्द्ध में ध्रुवों के आस–पास स्थित है। यह अन्टार्कटिक वृत्त के दक्षिण में है। यह भाग वर्ष भर वर्फ की मोटी–मोटी चादरों से ढका रहता है। यही कारण है कि यह महाद्वीप निर्जन है। इस महाद्वीप पर विभिन्न देशों द्वारा शोधकेन्द्र स्थापित किए गये हैं। भारत के शोधकेन्द्र दक्षिण गंगोत्री, मैत्री तथा भारती स्थापित किये गये हैं। इस महाद्वीप पर एक ज्वालामुखी पर्वत शिखर है। जिसे माउंट इरेबस के नाम से संबोधन प्राप्त है। इस बर्फीले महाद्वीप को चारों ओर से घेरे है– दक्षिणी महासागर। अन्टार्कटिका का अधिकांश भूभाग बंजर

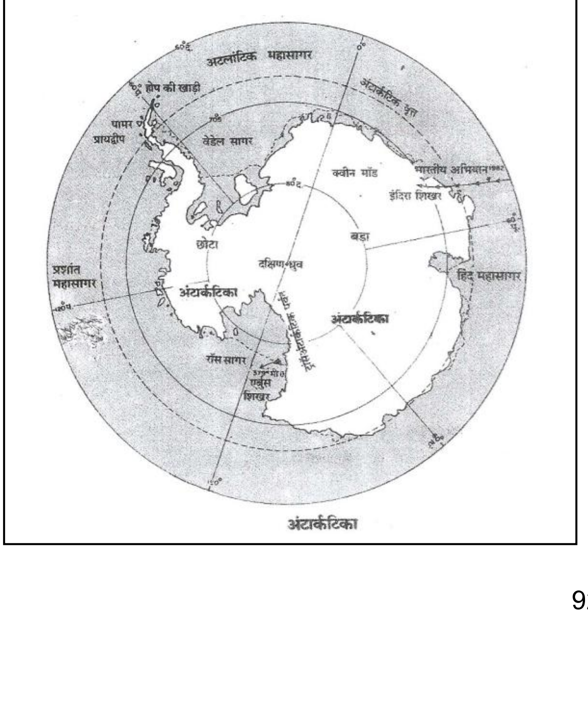

अंटार्कटिका

तथा ठंडा मरूस्थल है। पेंग्विन, समुद्री पक्षी तथा झील यहां बड़ी संख्या में है। सागरों में ह्वेल भी पाई जाती है। 'क्रिल' नाम छोटी मछली यहाँ बहुतायत मिलती है।

महासागर

महासागर विशाल जलराशि के भंडार हैं जो पृथ्वी के अधिकतर भाग को घेरे हुए हैं। पृथ्वी पर पाये जाने वाले समस्त जल का *97 %* भाग महासागरों में पाया जाता है। सागरों व महासागरों का जल खारा है। शेष *3%* मीठा जल है जो धरातल पर हिम और वर्फ कें रूप में झीलों, नदियों और अन्य जलाशयों में विद्यमान है। महासागरीय जल के खारेपन का मापन प्रति हजार में किया जाता है। महासागरीय जल की औसत लवणता *35%* है। इसका तात्पर्य यह है कि 1000 ग्राम महासागरीय जल में घुले लवण की मात्रा 35 ग्राम है। धरातल पर महासागरों की संख्या पाँच है–

1. प्रशान्त महासागर
2. अटलांटिक महासागर
3. हिन्द महासागर
4. आर्कटिक महासागर
5. दक्षिणी महासागर

प्रशान्त महासागर

समस्त महासागरों में यह महासागर सर्वाधिक क्षेत्रफल धारण करता है। यह पृथ्वी के धरातल का लगभग एक तिहाई भाग ढँकता है इसका क्षेत्रफल सभी स्थलों के संयुक्त क्षेत्रफलों से भी अधिक है। आकृति के दृष्टिकोण से यह लगभग त्रिभुजाकार प्रतीत होता है। इसका शीर्ष उत्तर में बेंरिंग जलसंधि पर है। महासागर के पूर्वीभाग में उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका महाद्वीप, पश्चिम में एशिया महाद्वीप तथा आस्ट्रेलिया महाद्वीप व द्वीपों की श्रृंखला, दक्षिणी में अंटार्कटिका महाद्वीप स्थित है।

- प्रशिक्षुओं को संसार के मानचित्र व ग्लोब के माध्यम से प्रशांत महासागर की सीमाओं का अवलोकन कराना व चर्चा कराना।
- समस्त महासागरों के क्षेत्रफल पर तुलनात्मक चर्चा करना।

प्रशान्त महासागर की गहराई अन्य सभी महासागरों की तुलना में सर्वाधिक है। इस महासागर का सबसे गहरा गर्त 'मैरियाना गर्त' है, जिसकी गहराई लगभग 11 कि0मी0 है। यदि एवरेस्ट पर्वत को इस गर्त में डुबो दिया जाय तो यह पूरे तरह से डूब जायेगा।

महासागर	क्षेत्रफल (करोड़ वर्ग कि0मी0)
प्रशान्त महासागर	16.5
अटलांटिक महासागर	8.2
हिन्द महासागर	7.3
आर्कटिक महासागर	1.4
दक्षिणी महासागर	0.20

2. अटलांटिक महासागर

इसे अन्ध महासागर के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। यह आकार में प्रशांत महासागर का लगभग आधा क्षेत्रफल धारण करता है। यह समस्त संसार के लगभग छठे भाग में विस्तृत है। आकृति की दृष्टि से इस महासागर की मुख्य विशेषता इसके अंग्रेजी के अक्षर 'एस' ***(S)*** से मिलती जुलती है।

मानचित्र पर अटलांटिक महासागर की आकृति (S) *के आकार का प्रदर्शन प्रशिक्षुओं के सामने करें और चर्चा करें कि ऐसा क्यों है ?*

म्हासागर के पश्चिमी भाग में उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका, पूर्व में यूरोप व अफ्रीका महाद्वीप इसकी प्राकृतिक सीमायें बनाते हैं। दक्षिणी में यह खुला है और अंटार्कटिका तक विस्तृत है। उत्तर में ग्रीनलैण्ड, आइसलैण्ड तथा अन्य छोटे–छोटे द्वीपों से घिरा हुआ है। महासागर के लगभग बीचों बीच बहुत लम्बा कटक पाया जाता है जिसे 'मध्य अटलांटिक कटक' कहा जाता है। महासागर के आन्तरिक भाग में टेलीग्राफ पठार, बरमुडा, डाल्फिन कटक, चैलेंजर कटक प्रमुख रूप से विस्तृत हैं। इस महासागर में मछलियाँ पकड़ने के बड़े–बड़ें स्थल ग्राण्ड बैंक, जार्ज बैंक भी स्थित हैं।समुद्र के छिछले जल के क्षेत्र का 'बैंक' कहते हैं।

हिन्द महासागर

संसार का एकमात्र महासागर है जिसका नामकरण किसी देश के नाम पर है। इस महासागर का कुल क्षेत्रफल 7.3 करोड़ वर्ग किमी0 है। यह महासागर अन्य महासागरों की भाँति उत्तर में खुला नहीं है। यही कारण है कि इसे अर्द्धमहासागर माना जा सकता है। यह महासागर उत्तर में अधिक कटा–छंटा प्रतीत होता है। इसके पश्चिमी भाग में अफ्रीका तथा पूरब में इंडोनेशिया की द्वीपीय श्रंखलाएं विस्तृत हैं। दक्षिण में यह अंटार्कटिका महाद्वीप तक विस्तृत है। इसकी औसत गहराई लगभग 4000 मी0 है। इस महासागर का सबसे गहरा गर्त 'सुंडा गर्त' है जो इण्डोनेशिया के जावा द्वीप के दक्षिण में अवस्थित है। महासागर के नितल पर चागोस कटक, सेंटपाल कटक, शेसेल्स कटक, सोकोत्रा कटक प्रमुख रूप से विस्तृत हैं।

आर्कटिक महासागर

सम्पूर्ण रूप से उत्तरी गोलार्द्ध में ध्रुवीय क्षेत्र के आसपास लगभग 1.4 करोड़ वर्ग कि0मी0 क्षेत्रफल में विस्तृत है। उत्तरी गोलार्द्ध में शीतकाल के समय यह महासागर वर्फ के रूप में जम जाता है। आर्कटिक महासागर में विश्व का सबसे चौड़ा महाद्वीपीय मग्नतट पाया जाता है।

मूल्यांकन

1. प्रथम श्रेणी के उच्चावच में सम्मिलित है–

   (क) पठार (ख) महाद्वीप (ग) पर्वत (घ) मैदान

2. पृथ्वी के धरातल पर कितने प्रतिशत भाग पर जल है ?

   (क) *75%* (ख) *50%* (ग) *71%* (घ) *90%*

3. संसार का सबसे बड़ा महाद्वीप है ?

   (क) एशिया (ख) यूरोप (ग) अफ्रीका (घ) अस्ट्रेलिया

4. ग्रेट रिफ्ट घाटी किस महाद्वीप में अवस्थित है ?

   (क) अफ्रीका (ख) उत्तरी अमेरिका (ग) यूरोप (घ) आस्ट्रेलिया

(i) विषुवत रेखा को कौन सी नदी दो बार काटती है ?

(ii) सिलिकान घाटी किस देश में स्थित है ?

(iii) अमेरिका की पाँच महान झीलों का पश्चिम से पूरब में क्या क्रम है ?

- सुमेलित कीजिए

(i)	न्याग्रा जलप्रपात	(क) वेनेजुएला
(ii)	एंडीज पवर्तमाला	(ख) उत्तरी अमेरिका
(iii)	लानोस	(ग) दक्षिणी अमेरिका
(iv)	राइन नदी	(घ) यूरोप

- किसी एक महाद्वीप का वर्णन कीजिए ।

क्रियाकलाप/प्रोजेक्ट कार्य

1. अभ्यास पुस्तिका तथा संसार के मानचित्र पर विभिन्न महाद्वीपों के पर्वतों तथा नदियों का प्रदर्शन कराना
2. हिन्द महासागर के तट पर भारत की अवस्थिति पर चर्चा–परिचर्चा।

एशिया महाद्वीप में भारत

एशिया महाद्वीप के दक्षिणी भाग में हिन्द महासागर के शीर्ष पर स्थित भारत विश्व का प्राचीनतम सभ्यता केन्द्र रहा है। इस प्रकार पश्चिम एशिया तथा पूर्वी एशिया के बीच हिन्द महासागर के तट पर भारत की स्थिति बहुत ही महत्वूपर्ण है। भारतीय प्रायद्वीप हिन्द महासागर में लगभग 6100 कि0मी0 तक लम्बा है। यदि अण्डमान–निकोबार तथा लक्षद्वीप, द्वीप समूहों की तटरेखा को भी सम्मिलित किया जाय तो भारत की तटीय सीमा 7517 कि0मी0 हो जाती है। भारत के पश्चिम में अरब सागर तथा पूरब में बंगाल की खाड़ी अवस्थित है। इतनी लम्बी तट रेखा के कारण यह कहना उचित रहेगा कि –''हिन्द महासागर सचमुच में ''हिन्द'' का महासागर है।

भारत के भौगोलिक विस्तार को देखते हुए इसे ''उपमहाद्वीप'' की संज्ञा दी जाती है। भारत 8^0 $4^{\prime}$ उत्तरी अक्षांश से 37^0 $6^{\prime}$ उत्तरी अक्षांश तथा 68^0 $7^{\prime}$ पूर्वी देशांतर से 97^0 $25^{\prime}$ पूर्वी देशांतर तक विस्तृत है। इस प्रकार इसका अक्षांशीय एवं देशांतरीय विस्तार लगभग 30^0 है। भारत की मुख्य भूमि से दूर अण्डमान तथा निकोबार द्वीप समूह का दक्षिणतम विन्दु 'इन्दिरा प्वाइंट' 6^0 $45^{\prime}$ उ0 अक्षांश पर स्थित है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक उत्तर–दक्षिण दिशा में इसकी लम्बाई 3214 कि0मी0 है। जबकि कच्छ की रण से अरूणांचल प्रदेश तक पूर्व–पश्चिम दिशा में इसकी चौड़ाई 2933 कि0मी0 है।

- भारत की अवस्थिति
- अक्षांशीय व देशांतरीय विस्तार
- क्षेत्रफल, लंबाई व चौड़ाई
- तुलनात्मक अध्ययन
- भारत के पड़ोसी देश व सीमायें
- भारत का प्रशासनिक वर्गीकरण–
  - राज्य
  - केन्द्रशासित प्रदेश
- भारत का धरातल/भौतिक विभाग
  - दक्षिणी पठारी भाग
  - उत्तरी पर्वतीय भाग
  - मध्यवर्ती विशाल मैदान
  - तटवर्ती मैदान व द्वीप समूह

- संसार /एशिया के मानचित्र पर भारत की भौगो0 स्थिति पर प्रशिक्षुओं से चर्चा करें ।
- भारत के अक्षांशीय व देशांतरीय विस्तार पर प्रश्नोत्तर करें।

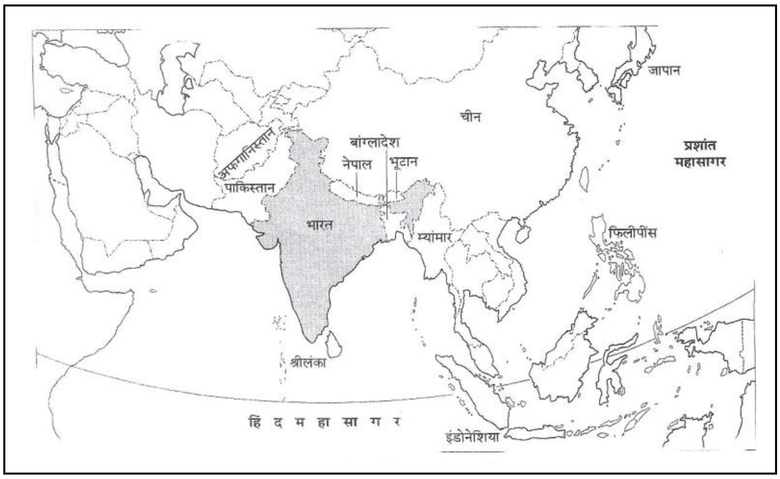

देश	सीमा की लं0 (किमी0)
बांग्लादेश	4096
चीन	3917
पाकिस्तान	3310
नेपाल	1752
म्यांमार	1458
भूटान	587
अफगानिस्तान	80
कुल	15200

इस प्रकार भारत का कुल क्षेत्रफल 3287263 वर्ग किमी0 है। विश्व के कुल क्षेत्रफल का यह लगभग ***2.4%*** है। यह क्षेत्रफल के आधार पर विश्व का सातवां बड़ा देश है। भारत से बड़े अन्य छः देश क्रमशः अवरोही क्रम में है–रूस, कनाड़ा, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील, आस्ट्रेलिया। कर्क रेखा भारत के लगभग मध्य से होकर पूरब–पश्चिम दिशा में जाती है।

भारत की स्थल सीमा की कुल लम्बाई 15200 कि0मी0 है जो बांग्लादेश, चीन, पाकिस्तान, नेपाल, म्यांमार, भूटान तथा अफगानिस्तान को स्पर्श करती है। इस प्रकार भारत की स्थलीय सीमा 7 देशों को छूती है। स्पष्ट है कि ये हमारे पड़ोसी देश हैं। श्रीलंका व मालद्वीप हिन्द महासागर में स्थित दो द्वीपीय देश हैं। श्रीलंका भारत से मन्नार की खाड़ी और पाक जलसंधि द्वारा अलग हुआ है।

प्रशिक्षुओं से भारत के पड़ोसी देशों की पहचान हेतु चर्चा करें

- भारत के पड़ोसी देशों से सीमाओं पर चर्चा करें।
- भारत के राज्यों व केन्द्रशासित प्रदेशों की राजधानियों पर चर्चा करें।

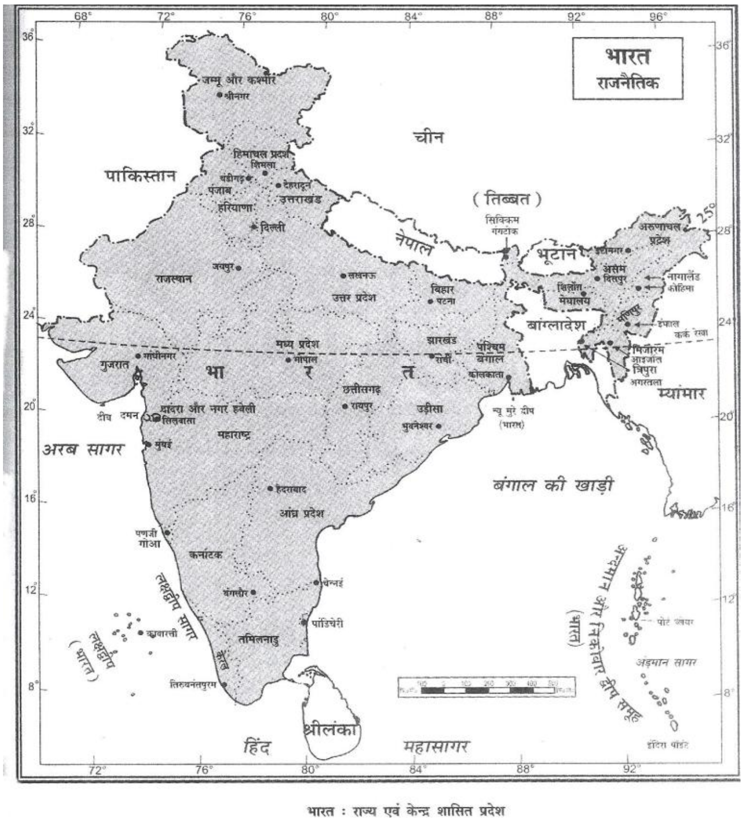

भारत : राज्य एवं केन्द्र शासित प्रदेश

प्रशासनिक रूप से भारत को 28राज्यों व 7 केन्द्रशासित प्रदेशों में विभाजित किया गया है। भारत के 29वें राज्य के रूप में तेलंगाना राज्य का नाम भी प्रस्तावित है। क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान सबसे बड़ा तथा गोवा राज्य सबसे छोटा है।

भारत का धरातल –भारतीय उपमहाद्वीप का वर्तमान भौतिक रूप विशाल चट्टान समूहों का परिणाम है। भारत के विभिन्न विभागों का निर्माण एक लम्बे भू वैज्ञानिक इतिहास में हुआ है। किन्तु भूगर्भिक संरचना की दृष्टि से भारत के मुख्य रूप से चार भूवैज्ञानिक इकाइयाँ हैं –

1. दक्षिण का प्रायद्वीपीय पठार
2. उत्तर का पर्वतीय भाग
3. मध्यवर्ती विशाल मैदान
4. तटवर्ती मैदान व द्वीपीय समूह

1. दक्षिण का प्रायद्वीपीय पठार

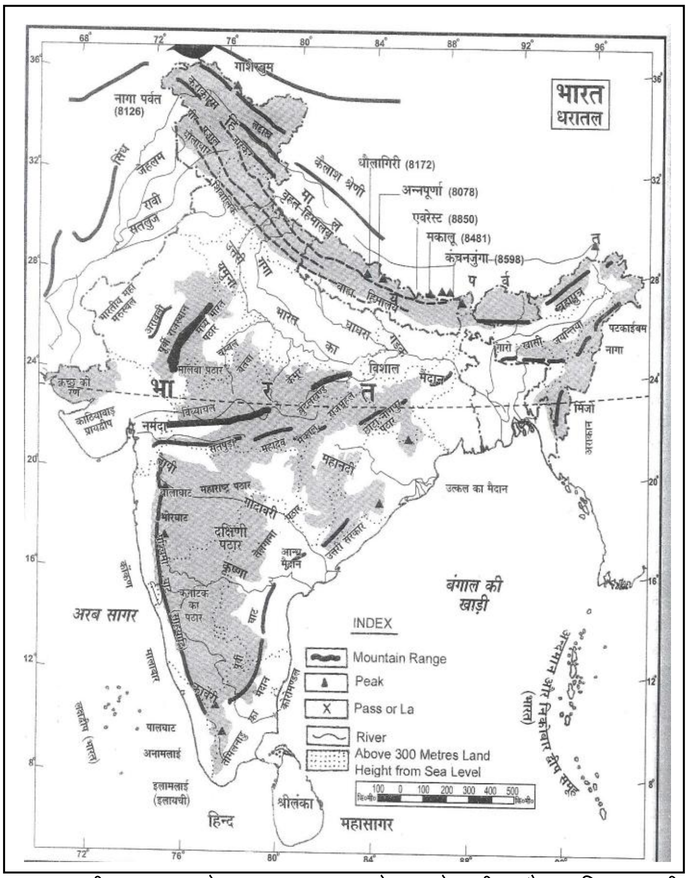

यह भारत का ही नहीं अपितु विश्व का प्राचीनतम भू–भाग है जो अत्यन्त कठोर चट्टानों से निर्मित हैं। भारत के दक्षिणी भाग में इस विभाग के अवस्थित होने के कारण इसे दक्षिणी पठार कहा जाता है। वहीं दूसरी ओर तीन तरफ से समुद्र से घिरा होने के कारण इसे प्रायद्वीपीय पठार भी कहते हैं। इसकी आकृति लगभग त्रिभुजाकार है। इसके पश्चिम में पश्चिमी घाट पर्वत तथा पूर्व में पूर्वी घाट पर्वतों की अवस्थिति है। पूर्वी तथा पश्चिमी घाट पर्वत सुदूर दक्षिण में एक दूसरे से मिलते हुए प्रतीत होते हैं। यह मिलन स्थल नीलगिरि पर स्थित है। उत्तरी सीमा विन्ध्यन तथा सतपुड़ा पर्वत की श्रेणियाँ तथा नर्मदा व ताप्ती नदियाँ (भ्रंश में प्रवाहित) बनाती है। नर्मदा तथा ताप्ती नदियां भ्रंश घाटी में पश्चिम दिशा की ओर प्रवाहित होती हुए अरब सागर में अपना जल मिलाती हैं। प्रायद्वीप पर अन्य पर्वत श्रेणियाँ नल्लामल्ला, जवादी, अजन्ता रेन्ज प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। प्रसिद्ध ऊटी (उदगमंडलम) नामक पर्यटन स्थल इसी पठार पर अवस्थित है। प्रायद्वीपीय पठार पर अनेक नदियाँ भी प्रवाहित होती हैं। कृष्णा, गोदावरी, कावेरी, दामोदर इत्यादि। पठारी भू भूभाग पर क्रिटैशियस युग में दरारी उद्भेदन से निकले लावा के परत दर परत जमाव से कालांतर में निर्मित काली मृदा के क्षेत्र में कपास की खेती की जाती है। अधिकांश पठारी भाग में लाल–पीली मिट्टी पाई जाती है। केरल के पश्चिमी तटीय क्षेत्र, जिसे मालावार तट भी कहा जाता है, अधिक वर्षा प्राप्त होने के कारण लैटराइट मृदा का जमाव होता है। पठारी भाग में बहुमूल्य खनिज पाये जाते हैं।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें –

नीलगिरि की सर्वोच्च चोटी –दोदाबेटा

दक्षिण भारत की सर्वोच्च चोटी– अनईमुदी

2. उत्तर का पर्वतीय भाग

भारत के सुदूर उत्तरी भाग की उत्तरी सीमा के साथ–साथ अनेक पर्वत श्रेणियाँ विस्तृत है। पश्चिम में पामीर पठार से लेकर पूर्व में भारत–म्यांमार की सीमा तक चापाकार रूप में पर्वतों की श्रृंखला है। ये पर्वत बिना किसी अवरोध के लगभग 2400 कि0मी0 की लम्बाई में विस्तृत है। इनकी चौड़ाई 150 से 400 कि0मी0 तक है। पामीर पठार और कश्मीर में सिंधु नदी, के मध्य भाग की पर्वत श्रेणियाँ कराकोरम नाम से जानी जाती है। सिन्धु नदी तथा ब्रहमपुत्र नदी के मध्य की पर्वत

श्रेणियाँ हिमालय कहलाती है। जिसका तात्पर्य है–हिम+आलय अर्थात वर्फ का घर। म्यांमार की सीमा के साथ इन पर्वतों का दक्षिणवर्ती विस्तार ''पूर्वांचल'' के नाम से संबोधन प्राप्त है।

संसार की सबसे बड़ी पर्वतीय हिमानियों ***(Glaciers)*** में से कुछ कराकोरम पर्वत श्रेणियों में हैं। बाल्तोरो तथा सियाचिन ऐसी ही हिमानियाँ है। संसार का दूसरा सर्वोच्च शिखर ***K**.2* (गाडविन आस्टिन) इसी पर्वत श्रेणी में स्थित है।

हिमालय तीन समान्तर चापाकार श्रेणियों में विस्तारित है। इनकी ऊँचाई दक्षिण से उत्तर की ओर बढ़ती जाती है। दक्षिणतम श्रेणी शिवालिक श्रेणी के नाम से जानी जाती है। सभी श्रेणियों में शिवालिक हिमालय की ऊँचाई सबसे कम है। इसकी औसत ऊँचाई समुद्र तल से 1000 से 1200 मी0 के मध्य है। यह श्रेणी मुलायम चट्टानों से निर्मित है। यह अविच्छिन्न श्रेणी नहीं है तथा यह पूरब में अन्य श्रेणियों से मिल जाती हैं। इसकी चौड़ाई 10 से 50 कि0मी0 के मध्य है। इस श्रेणी में कुछ सकरी घाटियाँ मिलती हैं, इन्हें 'दून' कहते हैं। जैसे –देहरादून, पोटलीदून ऐसी ही संकीर्ण घाटियाँ हैं।

शिवालिक हिमालय के उत्तरी भाग में स्थित श्रृंखलाओं को मध्य हिमालय या हिमांचल कहा जाता है। इनकी औसत ऊँचाई 4000 से 4500 मी0 है । ये 80 किमी0 की चौड़ाई में विस्तृत है। इनके ढाल वनों व चारागाहों से आच्छादित हैं। इसी श्रेणियों में प्रसिद्ध पर्वतीय स्थल मसूरी, शिमला, नैनीताल, डलहौजी, धर्मशाला, दार्जिलिंग अपनी मनोरम छटा बिखेरते हैं।

प्रशिक्षुओं को भारत के मानचित्र से पर्वतीय पर्यटन केन्द्रों को विभिन्न राज्यों में स्थिति के अनुसार अवलोकित करायें।

हिमालय की उत्तरतम श्रेणियाँ हिमाद्रि या महान हिमालय के नाम से सम्बोधित की जाती हैं। ये सबसे अधिक ऊँचाई वाली श्रेणियाँ हैं। इनकी औसत ऊँचाई लगभग 6000 मी0 से अधिक है। इन्ही श्रेणियों में संसार की सर्वोच्च चोटियाँ स्थित हैं। इनमें से कुछ की ऊँचाई तो 8000 मी0 से भी अधिक है। इनमें प्रमुख रूप से माउंट एवरेस्ट (नेपाल), जिसकी ऊँचाई 8850 मी0 है, विश्व की सर्वोच्च चोटी है। भारत में हिमालय का उच्चतम शिखर सिक्किम राज्य में स्थित 'कंचनजंगा' है। अन्य महत्वपूर्ण पर्वत शिखर है– नंगा पर्वत, धौलागिरि, नंदादेवी। इनमें से अधिकांश शिखर सदैव वर्फ से आच्छादित रहते हैं।

उत्तर पूर्वी भाग में पूर्वाचल पर्वत उत्तर से दक्षिण दिशा की ओर हेयरपिन मोड़ की भाँति विस्तृत हैं जो कई श्रेणियों से मिलकर बने हैं इनमें गारो, खासी, जयंतिया, पटकाइबुम, लुशाई पहाड़ियाँ हैं। इनके ढाल बहुत अधिक तीव्र हैं तथा इनकी घाटियाँ अधिक गहराई वाली हैं। इन पर्वतों का निर्माण महासागरों के नीचे के अवसाद या मलवा में संपीडन के कारण मोड़ पड़ने से ऊपर उठ जाने से हुआ है। यही कारण है कि यह पर्वत श्रंखलाएं नवीन वलित पर्वत के रूप में जाने जाते हैं। इन पर्वतों की ऊँचाई में अभी भी वृद्धि हो रही है। यही कारण है कि इन क्षेत्रों में भूकम्प की घटना होती रहती है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें कि उत्तर के पर्वतीय भाग आज भी क्यों ऊपर उठ रहे हैं ? भारतीय प्लेट, यूरोशियाई प्लेट के नीचे जा रही है क्यों ?

3. मध्यवर्ती विशल मैदान

उत्तर के विशाल पर्वतीय भाग के ठीक दक्षिण और दक्षिणी प्रायद्वीपीय पठार के ठीक उत्तर के मध्य भाग में मध्यवर्ती विशाल मैदान है, जिसे ''महान मैदान'' कहा जाता है। यह पश्चिम में सतलज से पूरब में ब्रहमपुत्र नदी तक लगभग 2500 कि0मी0 से अधिक लम्बाई में विस्तृत है। यह महान मैदान सिंधु, गंगा, ब्रहमपुत्र और उनकी सहायक नदियों द्वारा लाये गये जलोढ़ के परत दर परत जमाव से निर्मित है। हिमालय के उस पार मानसरोवर झील के निकट सिंधु तथा ब्रहमपुत्र नदियों के उद्गम स्थल एक–दूसरे के सन्निकट हैं। किन्तु ये दोनों ही नदियाँ एक–दूसरे के विपरीत दिशाओं में प्रवाहित होती हैं। सिंधु नदी जहां एक ओर पश्चिम दिशा की ओर प्रवाहित होते हुए जम्मू और कश्मीर राज्य में प्रवेश करती है और पाकिस्तान में प्रवेश कर दक्षिण दिशा की ओर गमन करती है। यह अरब सागर में मिलती है। सिन्धु की सहायक नदियाँ झेलम, रावी, चिनाव, व्यास तथा सतलज हैं। सिंधु द्रोणी का केवल एक भाग ही भारत में है।

वहीं दूसरी ओर ब्रहमपुत्र नदी पूर्व दिशा की ओर बहकर अरूणांचल प्रदेश के उत्तर में तीव्र मोड़ (हेयर पिनमोड़) बनाते हुए भारतीय सीमा में प्रवेश करती हैं। अरूणांचल प्रदेश और असोम में प्रवाहित होने के पश्चात् यह बांग्लादेश में प्रवेश करती हैं। कालांतर में गंगा से मिलकर यह संसार का सबसे बड़ा डेल्टा का निर्माण करती है। ब्रहमपुत्र नदी पर विश्व का सबसे बड़ा नदी द्वीप है, जिसे 'माजुली' कहा जाता है, स्थित है।

द्रोणी
वह क्षेत्र जो किसी प्रमुख नदी तथा उसकी सहायक नदियों द्वारा अपवाहित है।

उत्तरी मैदान का मध्यवर्ती भाग गंगा तथा उसकी सहायक नदियों द्वारा लाये गये उपजाऊ जलोढ़ से निर्मित है। अलकनंदा और भागीरथी गंगा की दो स्रोत नदियाँ हैं। ये दोनों जब देव प्रयाग में आकर मिलती हैं तो इसका नाम ''गंगा'' हो जाता है। यह भारत की सबसे लम्बी नदी है। यमुना तथा सोन इसमें मिलने वाली मुख्य सहायक नदियाँ है जो दक्षिण से आकर मिलती हैं। उत्तर से आकर गंगा में मिलने वाली सहायक नदियाँ गोमती, घाघरा, गंडक, कोसी हैं। कोसी नदी बाढ़ के लिए कुख्यात है। इसे ''बिहार का शोक'' कहा जाता है।

संरचना एवं ढाल में अन्तर के आधार पर मैदानी भाग में इसकी विशेषताओं के रूप में भाबर, तराई बांगर व खादर भूमियाँ उल्लेखनीय है। शिवालिक हिमालय प्रदेश के पर्वतपदीय भाग में पतली पट्टी के रूप में बड़े–बड़े कंकड़–पत्थर जो नदियों द्वारा बहाकर लाये गये जलोढ़ के रूप में एकत्रित हो जाते हैं, भाबर प्रदेश कहलाता है। इस भाग में नदियाँ इन पत्थरों के नीचे बहती हुई प्रतीत होती हैं। भाबर प्रदेश की पट्टी के ठीक दक्षिण में नदियाँ पुनः सतह पर दिखती हैं। यह प्रदेश चूंकि समतल होता है इसलिए पानी फैलकर दलदली क्षेत्र का निर्माण करता है। यह 'तराई पट्टी' कहलाती है। इस पट्टी में महीन रेत, बजरी के कण विद्यमान होते हैं।

बाढ़ की वर्तमान सीमाओं के ऊपर का भूभाग 'बांगर' कहलाता है। यह प्राचीन जलोढ़ से निर्मित उपजाऊ मैदान है। इस भाग में बाढ़ का पानी नहीं पहुँचता है। ऐसे प्रदेशों का विस्तार सामान्यतः दो नदियों के मध्यवर्ती भाग (दोआब) में पाया जाता है। वहीं दूसरी ओर मैदान का वह भू–भाग जहाँ बाढ़ का पानी वर्ष दर वर्ष आता है तथा बाढ़ के उपरान्त जल पुनः लौट जाता है वहाँ नदियों का जल अपने साथ उपजाऊ जलोढ़ मृदा जमा कर देता है, खादर भूमि कहलाती है। गंगा–ब्रहमपुत्र का डेल्टा खादर प्रदेश का उत्कृष्ट उदाहरण है। उक्त के अतिरिक्त सिंध का मैदान, पंजाब का मैदान, राजस्थान का मैदान, महान मैदान के ही अभिन्न अंग है।

4. ## तटीय मैदान व द्वीप समूह

दक्षिणी पठारी भाग दोनों ओर से तटीय मैदानों से घिरा हुआ है। पश्चिमी तटीय मैदान, पश्चिमी घाट के पश्चिमी भाग में अवस्थित है जो उत्तर की ओर अधिक चौड़ा है (इसमें गुजरात का मैदान भी सम्मिलित है) तथा दक्षिण की ओर बढ़ने पर यह सकरा हो जाता है। इसका विस्तार सूरत से कन्याकुमारी तक है। इसे गुजरात के तटवर्ती क्षेत्र में गुजरात का मैदान, दमन से गोवा के बीच कोंकण का मैदान, गोवा से मंगलौर तक कन्नड़ का मैदान तथा मंगलौर से कन्याकुमारी तक मालावार का मैदान कहा जाता है। मालावार तट पर नदियो पर बालू के जमाव के परिणामस्वरूप लैगून का निर्माण होता है जिसे 'कयाल' कहा जाता है, जैसे –बेम्बानाड झील।

वहीं दूसरी ओर पूर्वी घाट पर्वत व समुद्र तट के बीच स्वर्ण रेखा नदी से कन्याकुमारी तक पूर्वी तटीय मैदान उत्तर–दक्षिण विस्तृत है। यह तटीय मैदान, पश्चिमी तटीय मैदान की तुलना में अधिक चौड़ा है। इसका मुख्य कारण प्रायद्वीपीय पठार पर प्रवाहित बड़ी–बड़ी नदियों कृष्णा, गोदावरी, कावेरी नदियों द्वारा एकत्रित जलोढ़ है। इसी मैदानी भाग में कोलेरू झील, चिल्का झील, पुलीकट झील अवस्थित है जो लैगून झील का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। चिल्का झील भारत की सबसे बड़ी खारे पानी की झील है। उड़ीसा का तटवर्ती मैदान ''उत्कल कलिंग'' का मैदान, तमिलनाडु का तटीय मैदान ''कोरोमण्डल'' तट तथा गोदावरी व महानदी क मध्य का पूर्वी तटवर्ती मैदान ''उत्तरी सरकार'' के नाम से जाना जाता है।

द्वीप समूह

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से द्वीप समूह को बंगाल की खाड़ी के द्वीपसमूह तथा अरब सागर के द्वीप वर्गों में विभाजित करते हैं। बंगाल की खाड़ी के द्वीप में न्यूमूर द्वीप जो भारत व बांग्लादेश की सीमा पर स्थित एक डेल्टाई द्वीप है। गंगा सागर द्वीप भी एक डेल्टाई द्वीप है जो न्यूमूर से भी पुराना द्वीप है। फुल्टा द्वीप जो ऐतिहासिक महत्व का है, यह अपेक्षाकृत छोटा द्वीप है। ह्वीलर द्वीप, उड़ीसा राज्य में महानदी के मुहाने पर स्थित है जहाँ भारत का प्रक्षेपास्त्र परीक्षण परिसर स्थित है। श्री हरिकोटा द्वीप, आन्ध्रप्रदेश के पुलीकट झील में अवस्थित है। वर्तमान में पुल द्वारा इसे भारत की मुख्य भूमि से जोड़ा जा चुका है। अण्डमान निकोबार द्वीप समूह भारत का सबसे बड़ा द्वीपीय समूह है। यह एक 'आर्किपेलेगो' का उदाहरण है। इसमें छोटे बड़े कुल मिलाकर 223 द्वीप हैं जिनमें 219 अंडमान में तथा 4 निकोबार में हैं। पूरा का पूरा अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह नवीन मोड़दार पर्वत हिमालय का दक्षिणी विस्तार है। इस भाग में ज्वालामुखी के भी प्रमाण हैं जैसे– बैरन द्वीप, नारकोंडम द्वीप, टाड द्वीप। इस समूह का सर्वोच्च शिखर ''माउंट शैडल'' है जो अण्डमान में है।

वहीं दूसरी ओर अरब सागर के द्वीपों में गान्धार द्वीप (खम्भात की खाड़ी क्षेत्र में), दीव (कठियावाड़ प्रायद्वीप के दक्षिण), एलीफैन्टा (मुम्बई के अपतटीय क्षेत्र में), वेलिंगटन द्वीप (कोच्चि के निकट) कुछ अपतटीय द्वीपों के उदाहरण मिलते है। जबकि अगाध सागरीय द्वीपों में लक्षद्वीप जिसका शाब्दिक अर्थ है– ''एक लाख द्वीप समूह'' प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। ये द्वीव प्रवाल (मूंगा) के अवशेषों से निर्मित हैं।

भारत के दीवाल मानचित्र की सहायता से प्रशिक्षुओं से चर्चा करें–

- भारत का दक्षिणतम विन्दु इन्दिरा प्वांइट ग्रेट निकोबार में है।
- 10^0 चैनल अण्डमान को निकोबार से अलग करता है।
- 8^0 चैनल लक्ष्यद्वीप को मालद्वीप से अलग करता है।
- 9^0 चैनल मिनीकाय द्वीप को कवरत्ती से अलग करता है।
- मुम्बई, सालसैट द्वीप पर अवस्थित है।

मूल्यांकन

1. पाक जलसंधि किन दो देशों को अलग करती है

   (क) भारत व पाकिस्तान (ख) भारत व श्रीलंका (ग) भारत व म्यामार (घ) इनमें से कोई नहीं

2. भारत का क्षेत्रफल विश्व का कितना प्रतिशत है

   (क) *2.4%* (ख) *3.5%* (ग) *10%* (घ) *5%*

3. भारत की स्थलीय सीमा की लम्बाई किस देश के साथ सर्वाधिक है ?

   (क) चीन (ख) पाकिस्तान (ग) बांग्लादेश (घ) नेपाल

4. पूर्वीघाट तथा पश्चिमी घाट किस स्थान पर मिलते हैं ?

   (क) नीलगिरिं (ख) अन्नामलाई (ग) सतपुड़ा (घ) महेन्द्रगिरि

5. भारत में हिमालय की सर्वोच्च चोटी कौन है ?

   (क) नंदादेवी (ख) कंचनजंगा (ग) धौलगिरि (घ) मकालू

(i) माजुली नामक नदी द्वीप किस नदी पर है ?

(ii) बिहार का शोक किस नदी को कहा जाता है ?

(iii) लैगून किसे कहते हैं ?

(iv) ह्वीलर द्वीप का क्या महत्व है ?

(v) एलीफैंटा द्वीप का ऐतिहासिक महत्व बताइये।

क्रियाकलाप/प्रोजेक्ट

1. भारत का एक रिक्त मानचित्र लेकर भारत के सभी राज्यों व केन्द्रशासित प्रदेशों के नाम पहचानना व राजधानी अंकित कराना तथा पुस्तिका पर सूची बनाना।
2. एक चार्ट पर भारत का मानचित्र बनाकर पड़ोसी देशों को अंकित कराना।
3. भारत के विभिन्न पर्वत तथा नदियों पर सामूहिक चर्चा कराना।

भारत की जलवायु एवं वनस्पतियाँ

भूमिका

- मानसून का अर्थ
- जलवायु को प्रभावित करने वाले कारक
- ऋतुएं व उस दौरान वायुदाब, तापमान एवं मौसमी दशायें
- स्थानीय चक्रवात
- मानसून का आगमन व पीछे हटना
- अलनिनो, ला निना
- वनस्पतियों के प्रकार
- उनका वितरण, उपयोग
- वनों का महत्व, समस्यायें
- राष्ट्रीय वननीति
- सामाजिक वानिकी
- वन्यजीव
- बायोस्फियर रिजर्व
- राष्ट्रीय उद्यान, पक्षी विहार
- महत्वपूर्ण योजना/परियोजना/अधिनियम
- खगोलीय संगठन
    - ISRO
    - NASA

भारत की जलवायु मानसूनी है। मानसून शब्द अरबी भाषा के शब्द "मौसिम" से लिया गया है, जिसका शाब्दिक अर्थ है –"हवाओं का मौसमी उलट–फेर"। इसका तात्पर्य यह है कि ऋतु परिवर्तन के साथ–साथ मानसूनी पवनों की दिशा तथा वर्षा करने की क्षमता में परिवर्तन आ जाता है। भारत की जलवायु में मानसून की प्रधानता देखी जा सकती है जो अखिल भारतीय स्तर पर राष्ट्र को एकता का स्वरूप प्रदान करती है, किन्तु व्यापक जलवायविक एकता होने के बावजूद प्रादेशिक विविधताओं के कारण जलवायु में भी विविधता आ जाती है। भारत की जलवायु को मोटे तौर पर प्रभावित करने वाले कारक निम्नवत है–

- अक्षांशीय अवस्थिति
- कर्क रेखा का भारत से गुजरना
- उत्तरी भाग में हिमालय पर्वतों का विस्तार
- समुद्र से दूरी
- समुद्र तल से ऊँचाई
- उच्चावच्च
- वायुदाब व पवन प्रभाव

प्रशिक्षुओं से भारतीय जलवायु को प्रभावित करने वाले कारकों पर सविस्तार चर्चा करें

- *भारत में सर्वाधिक वर्षा वाला क्षेत्र मासिनराम तथा न्यूनतम वर्षा वाला क्षेत्र लेह है ? कारणों पर चर्चा करें*

भारतीय मौसम विभाग द्वारा भारत की जलवायु को चार ऋतुओं में विभक्त किया गया है–

1. शीत ऋतु 2. ग्रीष्म ऋतु 3. वर्षा ऋतु 4. शरद ऋतु

1. शीत ऋतु

इस ऋतु का समय मध्य दिसम्बर से फरवरी माह तक रहता है। इसमें सूर्य की स्थिति दक्षिणी गोलार्द्ध में होने से उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित भारत पर तिरछी सूर्य की किरणें पड़ती है। फलतः भारत का तापमान कम होने के कारण उत्तर पश्चिमी भारत में एक क्षीण उच्च वायुदाब बनता है। उच्च दाब से निम्नवायुदाब की ओर पवन प्रवाह शुरू हो जाता

है। इसे ही शीतकालीन मानसून या उत्तर–पूर्वी मानसून या लौटता मानसून भी कहा जाता है। लौटता मानसून बंगाल की खाड़ी से नमी लेकर भारतीय राज्य तमिलनाडु के तटीय भागों में वर्षा करता है।

इस ऋतु में भूमध्य सागर से उठने वाला शीतोष्ण चक्रवात जिसे 'पश्चिमी विक्षोभ' कहा जाता है, पछुवा जेट के सहारे भारतीय भूभाग में प्रवेश करता है। इसके प्रभाव से उत्तरी व उत्तरी पश्चिमी भारत में वर्षा होती है। यह वर्षा पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हिमांचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर में विशेष रूप से होती है। पर्वतीय भाग में तो हिमपात भी होता है। यह वर्षा रबी की फसलों के लिए जीवनदायिनी होती है।

ग्रीष्म ऋतु

यह ऋतु मार्च से मध्य जून तक होती है। इस माह में सूर्य धीरे–धीरे उत्तरायण होकर लगभग भूमध्य रेखा के ऊपर लम्बवत् चमकने लगता है। फलतः समस्त भारत का तापमान बढ़ जाने से उत्तर तथा उत्तर पश्चिमी भारत में गर्म तेज हवाएं (लगभग 40 डिग्री सेन्सियस) चलने लगती है जिन्हें 'लू' कहते हैं। तापमान के अधिक हो जाने के कारण वायुदाब घट जाता है। इस निम्नवायुदाब को पूरा करने के लिए आस–पास के उच्च वायुदाब वाले क्षेत्रों से तीव्र गति से पवनें झपटती हैं जिसे स्थानीय रूप से धूल भरी आंधी और गरज के साथ तूफान ''तड़ित झंझा'' कहते हैं। यदा–कदा इनसे थोडी बहुत वर्षा हो जाती है। फलतः थोड़े समय के लिए मौसम ठण्डा व सुहावना हो जाता है। इस प्रकार के चक्रवात/तूफान को भारत के विभिन्न भागों में अलग–अलग नामों से भी जाना जाता है –

चेरी ब्लासस	–	कर्नाटक में (काफी की फसल में लाभदायक)
आम्रवृष्टि	–	दक्षिण भारत (आम की फसल जल्दी पकने में सहायक)
काल बैसाखी	–	पश्चिम बंगाल
नार्वेस्टर	–	पूर्वी भारत (चाय, जूट, चावल हेतु लाभदायक)

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें

- *सामान्यतः तापमान और वायुदाब में विपरीत सम्बन्ध होता है। जब तापमान बढ़ता है, तो वायुदाब कम हो जाता है। तापमान घटेगा तो वायुदाब बढ़ता है।*
- *'लू' दक्षिण भारत में नही चलती क्यों ? (सागरीय प्रभाव के कारण)*

वर्षा ऋतु

इस ऋतु का समय जून से सितम्बर तक होता है। जून के समय सूर्य कर्क रेखा के आस–पास लम्बवत् चमकता है। फलतः उत्तर पश्चिमी भारत में निम्न वायुदाब का केन्द्र अधिक तापमान के कारण बन जाता है। ज्यों ही निम्न वायुदाब की तीव्रता बढ़ती है, दक्षिण पूर्वी व्यापारिक पवनें (उष्ण व आर्द्र) जो विषुवतीय निम्न वायु दाब की ओर चलती हैं, भारत के इस निम्न वायुदाब की ओर आकर्षित हो जाती है। विषुवत रेखा पार करने पर इन व्यापारिक पवनों की दिशा दक्षिण–पश्चिम हो जाती हैं और फिर इन्हें दक्षिण पश्चिम मानसून कहा जाता है। यही आगे बढ़ते हुए मानसून की ऋतु भी कही जाती है।

भारतीय प्रायद्वीप मानसूनी पवनों को अवरोधक के रूप में दो भागों में विभक्त कर देता है– अरब सागर की शाखा, बंगाल की खाड़ी शाखा। अरब सागर की शाखा भारत के पश्चिमी तट पर आकर पश्चिमी घाट पर्वत के सहारे उत्तर की ओर बढ़ती है। वहीं दूसरी ओर बंगाल की खाड़ी की शाखा बंगाल तट और शिलांग पठार के दक्षिणी सिरे पर पहुँचती है। धीरे–धीरे यह पश्चिम दिशा में गंगा घाटी में चलने लगती है। मानसून की ये दोनों ही शाखाएं जून के प्रारम्भ में पहुँचती हैं, जिसे मानसून का प्रारम्भ' कहा जाता है। भारत में वर्षा का लगभग 80% भाग दक्षिण पश्चिम मानसून से ही प्राप्त होता है। भारत के पश्चिमी तट और उत्तर–पूर्वी भारत में सर्वाधिक वर्षा प्राप्त होती है। वर्षा की मात्रा पश्चिम की ओर पूरब की तुलना में कम होती है। ध्यान रहे इस ऋतु में तमिलनाडु तट शुष्क रहता है। इसका मुख्य कारण यह है कि अरब सागर की मानसून शाखा के यह वृष्टि छाया क्षेत्र में आ जाता है तथा बंगाल की खाड़ी की शाखा के यह तट समांतर है।

शरद ऋतु

दक्षिण–पश्चिम मानसून उत्तरी भारत से सितम्बर के द्वितीय सप्ताह तक पीछे हटने लगता है। यह प्रक्रिया मानसून आने के विपरीत धीरे–धीरे होती है। मानसून के पीछे हटने का तात्पर्य है कि मानसून प्रवाह का कमजोर पड़ जाना। यह प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग से नवंबर के प्रारम्भ तक लौट जाता है। दक्षिण पश्चिम मानसून के कमजोर पड़ने से पवनों की दिशा भी धीरे–धीरे विपरीत होकर उत्तर–पूर्वी हो जाती है। इन उत्तर–पूर्वी व्यापारिक पवनों को सामान्य रूप से उत्तर–पूर्वी मानसूनी पवनें कहते हैं। तमिलनाडु के तट पर अधिकांश वर्षा अक्टूबर से दिसम्बर के मध्य इसी मानसून से होती है।

इस प्रकार अक्टूबर और नवम्बर के माह उष्ण वर्षा ऋतु तथा शुष्क शीत ऋतु के मध्य का संक्रमण काल बनाते हैं। इस काल तक निम्न वायुदाब का क्षेत्र बंगाल की खाड़ी में स्थानान्तरित हो जाता है। बंगाल की खाड़ी में यही कारण है कि इस काल में अधिक चक्रवात आते रहते हैं। ये चक्रवात बहुत विनाशकारी होते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत में उष्ण कटिबंधीय मानसूनी जलवायु पाई जाती है।

> अलनिनो–
>
> यह एक जटिल मौसम तन्त्र है जो हर 5 या 1 साल बाद प्रकट होता रहता है। इसके प्रभाव के कारण संसार के विभिन्न भागों में सूखा, बाढ़ और मौसम की चरम अवस्थाएं आती है।

भारत की वनस्पतियाँ

प्राकृतिक वनस्पतियों में वे पौधे सम्मिलित किए जाते हैं जो मानव की प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष सहायता के बिना उगते हैं और अपने आकार संरचना तथा अपनी आवश्यकताओं को प्राकृतिक पर्यावरण के अनुसार ढाल लेते हैं। प्राकृतिक वनस्पति पर्यावरण का प्रत्यक्ष सूचक होती है। प्राकृतिक वनस्पतियों का सीधा सम्बन्ध धरातलीय संरचना व जलवायु से है।

भारत को विविधताओं का देश माना जाता है और प्राकृतिक वनस्पतियों के वितरण की दृष्टि से भी यह कथन सर्वथा सत्य है। यहाँ न तो धरातलीय समानता है और न ही जलवायविक दशाओं में। इसीलिए प्राकृतिक वनस्पति में भी पर्याप्त विविधता देखी जाती है। भारतीय वनस्पति शीतोष्ण कटिबंधीय तथा उष्ण कटिबंधीय दोनों प्रकार की है। शीत कटिबंधीय वनस्पति हिमालय की ऊँचाइयों पर मिलती है। यहाँ वनस्पति वितरण को प्रभावित करने वाला कारक ऊँचाई

है। इस कारण निचले भागों में उष्ण कटिबंधीय वनस्पति से लेकर उच्च भाग में टुण्ड्रा जैसी वनस्पति तक पाई जाती है। देश के अन्यत्र भागों में उष्णकटिबंधीय वनस्पति मिलती है इनका वितरण वर्षा की मात्रा पर पूर्णतया निर्भर है।

भारत में प्राकृतिक वनस्पतियों को पाँच वर्गों में वर्गीकृत किया गया है –

1. उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वर्षा वन
2. उष्ण कटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती वन
3. उष्ण कटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वन
4. कंटीले वन
5. पर्वतीय वन

उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वर्षा वन

यह वनस्पति पश्चिमी घाट के सहयाद्रि अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों (200 से0मी0 से अधिक) में, मेघालय क्षेत्र, अण्डमान व निकोबार द्वीपसमूह व लक्षद्वीप में पायी जाती है। इन वनों की मुख्य विशेषता इनकी अधिक ऊँचाई तथा वृक्षों की सघनता है। पेड़ों के ऊपरी सिरों पर इतनी शाखाएं होती है कि ये छाता का आकार ले लेती हैं। इन वनों की लकड़ियाँ कठोर प्रकृति की होती हैं। इनमें प्रमुख रूप से महोगनी, आबनूस, बांस, बेंत, सिनकोना, रबर उल्लेखनीय हैं। घासें यहाँ पूर्णतया अनुपस्थित होती हैं। ये वृक्ष शुष्क काल में भी अपनी पत्तियों को नहीं गिराते तथा सदा हरे–भरे होते हैं। इसी कारण से इन्हें सदाबहार ***(Evergreen)*** वन कहा जाता है।

प्रशिक्षुओं से वर्षा तथा वनस्पतियों के मध्य संबंध पर चर्चा करें।

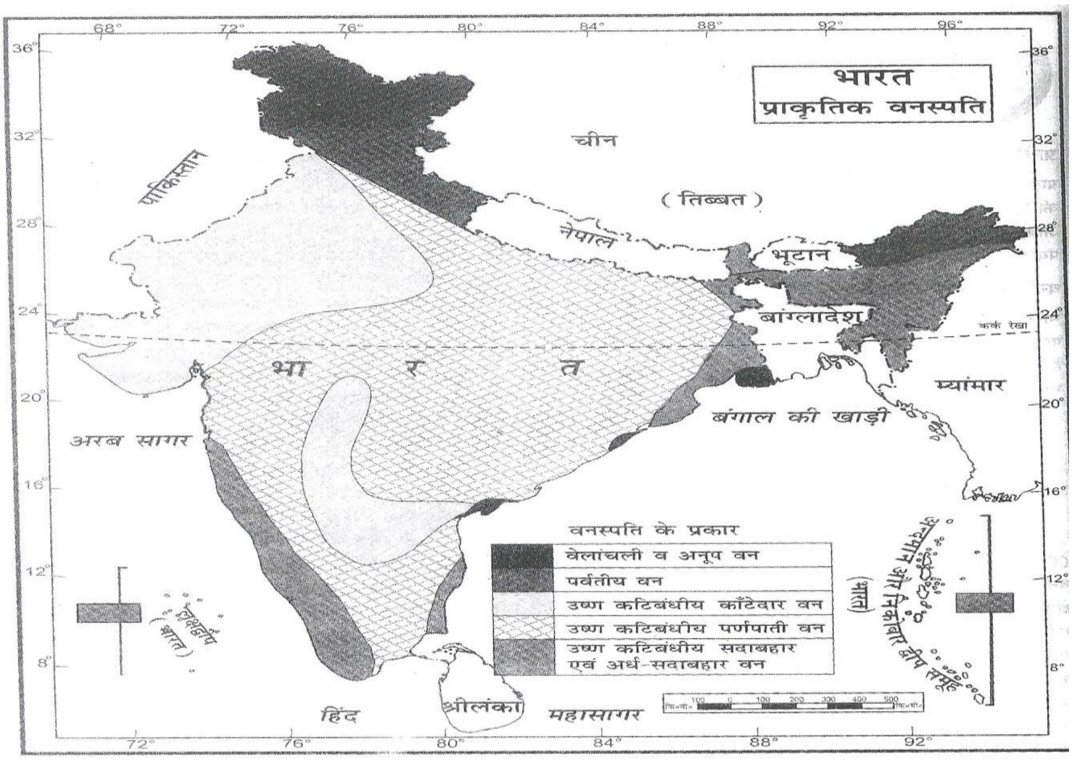

भारत : प्राकृतिक वनस्पति

उष्ण कटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती वन

ऐसे वनों को मानसूनी वन भी कहते हैं। भारत में जिन भागों में वर्षा की मात्रा 100 से 200 से0मी0 तक होती है वहाँ इनकी उपस्थिति देखी जा सकती है। पश्चिमी घाट के पूर्वी ढाल, शिवालिक श्रेणी के सहारे भाबर तथा तराई क्षेत्र में ये विस्तृत हैं। इनमें सागौन ***(Teak)*** मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। उत्तरी क्षेत्र में साल (सखुआ) ***(Sal)*** आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इन वृक्षों के साथ चन्दन (कर्नाटक), शीशम (उत्तरी भागों में), आम, महुआ, त्रिफला (आँवला, हर्रे, बहेड़ा) तथा खैर प्रमुख रूप से मिलते हैं। ये वन न तो अधिक ऊँचाई वाले वृक्षों की तरह और न ही सघनता वाले होते हैं बल्कि ग्रीष्म ऋतु के आरम्भ में अपनी पत्तियाँ वाष्पोत्सर्जन से बचने के लिए गिरा देते हैं। यही कारण है कि इन्हें पर्णपाती वन कहा जाता है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें–
• सदाबहार वृक्ष व पर्णपाती में क्या अन्तर है ?
• उक्त वर्ग की लकड़ियाँ किन–किन दृष्टियों से उपयोगी है ?

उष्ण कटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वन

ऐसे वृक्ष उन भागों में बहुतायत मिलते हैं जहाँ वर्षा की मात्रा 70 से0मी0 से 100 से0मी0 तक होती है। वर्षा की कमी तथा जलवायु की विषमता के कारण इनमें ऊँचे वृक्षों का अभाव है। ये वृक्ष उत्तर प्रदेश के अधिकतर भागों, पश्चिमी बिहार, उत्तरी व पश्चिमी मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र के अधिकांश भागों, उत्तरी आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु के पूर्वी भाग, कर्नाटक की मध्यवर्ती संकीर्ण पट्टी में विस्तृत हैं। इनके बीच–बीच में छोटी–छोटी झाड़ियाँ भी उग आती हैं।

कँटीले वन

ये वन उन क्षेत्रों तक सीमित हैं जहाँ वार्षिक वर्षा की मात्रा 80 से0मी0 से भी कम होती है। इनमें कांटेदार, बौने वृक्ष और झाड़ियाँ पाई जाती हैं। बबूल, कीकर, खजूर, सामान्य वर्षा वाले क्षेत्रों में पाये जाते हैं। जबकि कम वर्षा वाले क्षेत्रों में झाड़ियाँ पाई जाती हैं। इन वृक्षों व झाड़ियों की जड़े गहरी होती हैं, छाल मोटी होती हैं तथा इनमें लम्बे काँटे होते हैं। इनकों क्रमशः पृथ्वी के अन्दर काफी गहराई से नमी प्राप्त करने और नमी की हानि से बचाने में सहायक हैं। इस प्रकार वनस्पति राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, गुजरात, मध्य प्रदेश और दक्कन प्रदेश के शुष्क क्षेत्रों में मिलती हैं।

पर्वतीय वन

हिमालय प्रदेश के वन ऊँचाई के साथ बदल जाते हैं। हिमालय के पदीय भाग उष्णकटिबंधीय पर्णपाती वनों से आच्छादित हैं। इस पेटी का सबसे महत्वपूर्ण वृक्ष साल है। इससे अधिक ऊँचाई पर उपोष्ण कटिबंधीय पर्वतीय वनस्पति पायी जाती है जहाँ सदाबहार ओक, चेस्टनट और चीड़ के वृक्ष पाये जाते हैं। 1600 मी0 से 3300 मी0 की ऊँचाई पर शंकुधारी वनों की पेटी पाई जाती है जिसके चीड़, सीडर, सिल्वर फर और देवदार के वृक्ष मिलते हैं। इससे अधिक ऊँचाई पर स्थायी हिमरेखा तक अल्पाइन वनस्पति मिलती है, जिसमें केवल झाड़ियाँ और घासें मिलती हैं।

उपर्युक्त पाँच वनस्पति विभागों के अतिरिक्त समुद्रतटीय भाग में एक विशेष प्रकार की वनस्पति भी मिलती है। जिसे ज्वारीय वनस्पति या 'ज्वार वन' कहते हैं। ये वन भारत के मुख्यतः पूर्वी तट पर पाये जाते हैं, जहाँ समुद्री ज्वार का पानी पहुँचकर भूमि दलदली बना देता है। गंगा, गोदावरी, कृष्णा इत्यादि के डेल्टाई भाग उच्च ज्वार आने पर जलमग्न हो जाता है, वहाँ मैंग्रोव तथा सुन्दरी के वृक्ष अधिक मिलते हैं।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें और

- भारतीय वनों के आर्थिक महत्व पर सामूहिक चर्चा करायें
- भारतीय वनों की समस्यायें पुस्तिका पर चर्चा करके लिखवायें
- वनों का पर्यावरण के क्षेत्र में योगदान पर निबंध लिखवाएं

राष्ट्रीय वन नीति

भारत में सबसे पहले ब्रिटिश सरकार ने 1894 में वन नीति धोषित की थी। स्वतंत्रता के बाद जनसंख्या व पशुओं की संख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई जिससे वनस्पतियों पर दबाव बनने से उन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा । हमारे वनों का बड़े पैमाने पर हास होने से पारिस्थितिक तन्त्र को इतनी अधिक क्षति पहुँची की उसकी क्षतिपूर्ति कर पाना दुरूह कार्य हो गया। वनों के अविवेकपूर्ण विदोहन से मृदा अपरदन व बाढ़ की समस्यायें गम्भीर रूप धारण कर गई। 1952 में स्वतंत्र भारत की पहली वन नीति लागू की गई। इस नीति में लोगों की स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए और जनजातियों के विकास के लिए एक टिकाऊ वन प्रबन्धन पर बल दिया गया। जनजातियों की आजीविका वनों के सहारे ही चलती है।

सन् 1988 में नई राष्ट्रीय वन नीति वनों के क्षेत्रफल में हो रही कमी को रोकने के लिए बनाई गई। इस नीति विशेष के प्रमुख उद्‌देश्य थे–

- देश में *33%* भाग पर वन लगाना जो वर्तमान राष्ट्रीय स्तर से *6%* अधिक है।
- पर्यावरण सन्तुलन बनाए रखना तथा परिस्थितिक रूप से असंतुलित क्षेत्रों में वनीकरण करना।
- देश की प्राकृतिक धरोहर, जैव विविधता तथा आनुवंशिक पूल का संरक्षण।
- मृदा अपरदन और मरूथलीकरण रोकना तथा बाढ़ व सूखा नियन्त्रण।
- निम्नीकृत भूमि पर सामाजिक वानिकी एवं वनरोपण द्वारा वनीय आवरण का विस्तार ।
- पेड़ लगाने को बढ़ावा देने के लिए, पेड़ों की कटाई रोकने के लिए जनांदोलन चलाना, जिसमें महिलाएं शामिल हों, ताकि वनों पर दबाव कम हो सके।

इस वन संरक्षण नीति के अन्तर्गत् निम्न कदम उठाये गये।

सामाजिक वानिकी

(Social Foresty) सामाजिक वानिकी शब्द का प्रयोग 1976 में राष्ट्रीय कृषि आयोग ने किया था। इसका उद्‌देश्य ग्रामीण जनसंख्या के लिए जलावन, छोटी इमारती लकड़ी तथा छोटे–छोटे वन उत्पादों की आपूर्ति करना है। इसके तीन प्रमुख अंग हैं–

1. शहर वानिकी
2. ग्रामीण वानिकी
3. फार्म वानिकी

शहर वानिकी के अन्तर्गत् शहरों और उनके इर्द–गिर्द निजी व सार्वजनिक भूमि– जैसे हरित पट्टी, पार्क, सड़कों के साथ जगह, औद्योगिक व व्यापारिक स्थलों पर वृक्ष लगाना और उनका प्रबंधन आता है।

ग्रामीण वानिकी में कृषि वानिकी और समुदाय कृषि वानिकी को बढ़ावा दिया जाता है। कृषि वानिकी का अर्थ है कृषि योग्य तथा बंजर भूमि पर पेड़ व फसलें एक साथ लगाना। इसका अभिप्राय है कि वानिकी व खेती एक साथ करना, जिससे खाद्यान्न, चारा, ईंधन, इमारती लकड़ी और फलों का उत्पादन एक साथ किया जाय। सामुदायिक वानिकी में सार्वजनिक भूमि,–गाँव, चारागाह, मंदिर भूमि, सड़के के दोनों ओर, नहर किनारे, रेल पट्री के साथ पटरी और विद्यालयों मं पेड़ लगाना शामिल है। इसका उद्देश्य पूरे के पूरे समुदाय को लाभान्वित करना है।

फार्म वानिकी के अन्तर्गत किसान अपने खेतों में व्यापारिक महत्व वाले या दूसरे पेड़ लगाते हैं। वन विभाग इसके लिए छोटे व मध्यम किसानों को निःशुल्क पौधे उपलब्ध कराता है।

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें–

- राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार भारत में ***33.3%*** वन क्षेत्र प्राप्ति का लक्ष्य रखा गया है। इसके अनुसार मैदानी भागों में *25%* तथा पर्वतीय भागों में *60%* क्षेत्र को वनाच्छादित करने की आवश्यकता है।
- तत्कालीन कृषि मंत्री के एम0मुशी द्वारा 1950 में अधिक 'वृक्ष लगाओ आंदोलन' शुरू किया गया जिसका नाम "वन महोत्सव" रखा गया। प्रतिवर्ष आज भी 1 जुलाई से 7 जुलाई तक वनमहोत्सव मनाया जाता है।

वन्य जीव–भारत में वनस्पतियों की विविधता की भाँति वन्य जीवों की भी विविधता पाई जाती है। यहाँ 89000 जातियों के वन्य प्राणी हैं। इनमें हाथी आकार में सबसे बड़ा है। जल–स्थलचर जीव घड़ियाल केवल भारत में ही पाये जाते हैं। यहाँ एक सींग वाले गैंडे भी मिलते हैं। पशु–पक्षियों के शिकार और वनों की अंधाधुंध कटाई से वन्य जीवों की संख्या घट रही है। कुछ प्रजातियाँ तो लुप्त होने के कगार पर आ गई हैं। इनके संरक्षण के लिए सरकार द्वारा अभयारण्यों और राष्ट्रीय उद्योनों की स्थापना की गई। इनके अतिरिक्त बायोस्फेयर रिजर्व भी बनाये गये हैं–

1. नीलगिरि (प्रथम)
2. नंदादेवी (उत्तराखंड)
3. सुंदरवन (पं0बंगाल)
4. मन्नार की खाड़ी (तमि0)
5. कंचनजंगा (सिक्किम)
6. डिबू–साइकोवा (असम)
7. मानस (असम)
8. दिहांग–दिवांग (अरूणांचल प्रदेश)
9. नोकरेक (मेघालय)
10. ग्रेट निकोबार

11. सिमलीपाल (उड़ीसा)
12. अगरत्यमलाई (केरल)
13. पचमढ़ी (म0प्र0)
14. अचानकमार –अमरकंटक (म0प्र0)
15. पन्ना (मध्य प्रदेश)
16. शीतमरूभूमि –हिमांचल
17. कच्छ की रण–गुजरात
18. शेषांचलम–आंध्रप्रदेश

1973 में यूनेस्को ***(Unesco)*** ने कुछ देशों के मानव एवं जीवमंडल पर एक कार्यक्रम ***(MAB)*** शुरू किया गया। इसी आधार पर उक्त 18 भारतीय जैवमंडलीय आरक्षित क्षेत्र स्थापित किये गये। इनके अतिरिक्त 41 टाइगर रिजर्व भी स्थापित है।

प्रशिक्षुओं से राष्ट्रीय उद्यान तथा पक्षी विहारों पर चर्चा करें तथा भारत के मानचित्र पर उनकी स्थिति पता लगवायें।

महत्वपूर्ण परियोजनायें –

गिरिशेर परियोजना –	1972
प्रोजेक्ट क्राकोडायल –	1975
गैंडा परियोजना –	1987
हाथी परियोजना–	1992

महत्वपूर्ण अधिनियम –

वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम –	1972
वन संरक्षण अधिनियम –	1980
पर्यावरण संरक्षण अधिनियम–	1986
जैव विविधता अधिनियम –	2002

रेड डाटा बुक

इसमें संकटग्रस्त जीवों को सूचीबद्ध किया जाता है। भारत के संकटग्रस्त एवं विलुप्तप्राय जीवों की सूची में लाल पांडा, भालू, ऊदबिलाव, उड़न गिलहरी, एक सींग वाला गैंडा, जंगली गधे आदि सम्मिलित हैं।

खगोलीय संगठन

अन्तरिक्ष सम्बन्धी अनुसंधान करने वाली संस्थायें खगोलीय संगठन कहलाती हैं। इनमें भारत की इसरो तथा संयुक्त राज्य अमेरिका की नासा ***(NASA)*** प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन **(ISRO)**

यह भारत का राष्ट्रीय अन्तरिक्ष संस्थान है जिसका मुख्यालय कर्नाटक की राजधानी बंगलौर में स्थापित है। संस्थान में 15 हजार से अधिक वैज्ञानिक कार्यरत हैं। संस्थान का मुख्य कार्य भारत के लिए अन्तरिक्ष सम्बन्धी तकनीकी

उपलब्ध करवाना है। अन्तरिक्ष कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्यों में उपग्रहों, प्रमोचक यानों, परिज्ञापी राकेटों और भूप्रणालियों का विकास शामिल है।

वर्तमान में इसके निदेशक के राधाकृष्णन हैं। वर्तमान में भारत न सिर्फ अपने अन्तरिक्ष सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम है बल्कि दुनिया के बहुत से देशों को अपनी अन्तरिक्ष क्षमता से व्यापारिक और अन्य स्तरों पर सुविधायें उपलब्ध कराकर सहयोग कर रहा है। इसको आज ध्रुवीय कृत्रिम उपग्रह प्रक्षेपण यान ***(PSLV)*** एवं जी0एस0 एल0वी0 की सहायता से क्रमशः ध्रुवीय एवं भूस्थैतिक कृत्रिम उपग्रह प्रक्षेपित करता है। भारतीय अन्तरिक्ष कार्यक्रम के जनक के रूप में डा0 विक्रम साराभाई को जाना जाता है। 1969 में ***ISRO*** का गठन किया गया।

NASA-

राष्ट्रीय वैमानिकी और अंतरिक्ष प्रबन्धन ***(National Aeronautics and space Administration)*** को संक्षेप में नासा कहते हैं। यह संयुक्त राज्य अमेरिका की संस्था है जो देश के सार्वजनिक अन्तरिक्ष कार्यक्रमों व वैमानिकी तथा एअरोस्पेस संशोधन के लिए उत्तरदायी है। फरवरी 2006 में नासा का लक्ष्य वाक्य "भविष्य में अंतरिक्ष अन्वेषण, वैज्ञानिक खोज और एयरोनाटिक्स संशोधन को बढ़ाना" था। नासा का गठन 19 जुलाई 1958 में किया गया। इसके कार्यक्रमों में अपोलो चन्द्रमा अभियान, स्कायलैब, अन्तरिक्ष स्टेशन, अन्तरिक्ष शटल प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

प्रशिक्षुओं से **ISRO** *तथा* **NASA** *के समसामयिक कार्यक्रमों पर चर्चा करें।*

मूल्यांकन

(i) मौसिम' शब्द किस भाषा का शब्द है–

(क) फारसी (ख) अरबी (ग) संस्कृत (घ) लैटिन

(ii) भारतीय मौसम विभाग द्वारा भारत में कितनी ऋतुएं होती हैं –

(क) 4 (ख) 6 (ग) 8 (घ) 12

(iii) 'पश्चिमी विक्षोभ' चक्रवात का उत्पत्ति स्थल है–

(क) अरब सागर (ख) बंगाल की खाड़ी (ग) लाल सागर (घ) भूमध्यसागर

(iv) 'कालबैसाखी' नामक ग्रीष्मकालीन तूफान किस राज्य में आता है ?

(क) केरल (ख) पं0बंगाल (ग) कर्नाटक (घ) उत्तर प्रदेश

(i) भारत में कितने प्रकार की प्राकृतिक वनस्पतियाँ पाई जाती हैं? नाम लिखें

(ii) सदाबहार वन तथा पर्णपाती वनों में क्या अन्तर है ?

(iii) भारत में कितने प्रतिशत वन क्षेत्र होना आवश्यक है ?

क्रियाकलाप / प्रोजेक्ट

1. 'भारतीय कृषि के लिए मानसून एक जुआ हैं, "विषय पर लेखन प्रतियोगिता।
2. भारत के रिक्त मानचित्र पर भारत की प्राकृतिक वनस्पतियों का अंकन कराना।
3. ***ISRO*** तथा ***NASA*** के बारे में जानकारियाँ एकत्रित करना।

सन्दर्भ साहित्य सूची

- खगोलिकी : डॉ0 शिव सागर ओझा
- भूगोल : सुरेश प्रसाद
- भारत का भूगोल : आर0सी0 तिवारी

ग्रामीण एवं नगरीय जीवन शैली (I)

ग्रामीण जीवन

- ग्रामीण जीवन
- पंचायती राजव्यवस्था
- ग्रामपंचायत
- क्षेत्र पंचायत
- जिला पंचायत का गठन एवं मुख्य कार्य

भारत प्रमुखतः गांवो का देश है। यहाँ की 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवो में निवास करती है। इनकी आजीविका का प्रमुख आधार कृषि है। इसके अतिरिक्त ये पशुपालन तथा कुटीर उद्योग का कार्य भी करते हैं। हमारे यहाँ की कृषि मुख्यतः वर्षा ऋतु पर निर्भर होती है। गाँव शब्द आते ही हमारे दिमाग में एक ऐसा चित्र आधारित होता है। जहाँ की आबादी सड़क, बिजली, पानी, शिक्षा स्वास्थ्य इत्यादि मूलभूत सुविधाओं से वंचित है। यह सही भी है क्योंकि अभी भी बहुत सारे गाँव ऐसे ही हैं जहाँ इस तरह की बुनियादी सुविधाओं का घोर अभाव है। यही कारण है कि ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर पलायन की प्रवृत्ति लगातार बढ़ती जा रही है।

अब गाँव की स्थिति में तेजी से बदलाव आ रहा है क्योंकि गाँवों के विकास के बिना देश के विकास की कल्पना अधूरी है। महात्मा गाँधी की मान्यता थी कि भारतीय ग्रामीण जीवन का पुनर्निर्माण ग्राम पंचायतों की पुनः स्थापना से ही संभव है।

चर्चा करिए
- यदि वर्षा मौसम अनुसार न हो तो उसका किसानों पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?
- अगर लगातार गाँवो से शहरों की तरफ पलायन होता रहा तो इसका परिणाम क्या होगा ?

पंचायती राजव्यवस्था

समाज एवं देश के विकास में पंचायत की महत्वपूर्ण भूमिका है चूँकि पंचायत लोकतंत्र एवं विकास की पहली सीढ़ी है। यह जितनी उन्नत एवं संवैधानिक होगी, देश की व्यवस्था में उतना ही अधिक निखार आयेगा। इसकी महत्ता देखते हुए ही संविधान निर्माताओं ने संविधान के अनुच्छेद 40 में ग्राम पंचायत के गठन की प्रावधान किया तथा आशा की गयी कि आने वाली सरकारों द्वारा इसे मजबूत स्थिति प्रदान की जायेगी।

पंचायती राजव्यवस्था को व्यावहारिक धारातल पर लाने का प्रथम प्रयास देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं0 जवाहर लाल नेहरु द्वारा 1952 में शुरू किया गया। पंचायती राज के वर्तमान स्वरूप को प्राप्त कराने में महत्वपूर्ण भूमिका बलवन्त राय मेहता समिति का है, जिसने पंचायत को त्रिस्तरीय बनाने का सुझाव दिया। इस व्यवस्था में ऐतिहासिक परिवर्तन 1993 में 73 वें संवैधानिक संशोधन के रूप में हुआ, जो आज भारत की तस्वीर बदलने तथा उसे प्रत्येक दृष्टि से आगे बढ़ाने की कहानी रच रहा है। 73 वें संविधान संशोधन द्वारा संविधानमें नया भाग–9 जोड़ा गया जिसमें पंचायती राजव्यवस्था को त्रिस्तरीय बनाया गया है–

(1) ग्राम पंचायत

(2) क्षेत्र पंचायत

(3) जिला पंचायत

ग्राम पंचायत

ग्राम पंचायत पंचायती राजव्यवस्था की निम्नतर संस्था है। एक गाँव अथवा कुछ छोटे–छोटे गाँवो को मिलाकर पंचायत बनायी जाती है। ग्राम सभा सम्पूर्ण वयस्क नागरिकों को मिलाकर बनायी जाती है। यह ग्राम सभा ग्राम पंचायत का चुनाव करती है।

इन्हें भी जानें–

- कम से कम 1000 की आबादी पर एक ग्राम पंचायत होती है। जिन गाँवों की आबादी 1000 से कम है वहाँ पास के अन्य छोटे–छोटे गाँवों को मिलाकर एक ग्राम पंचायत बनाई जाती है।

ग्राम प्रधान

गाँव का मुखिया ग्राम प्रधान होता है ग्राम प्रधान का चुनाव उसी गाँव के नागरिको द्वारा होता है ग्राम प्रधान गाँव की जनता की मूलभूत सुख–सुविधाओं के लिए कार्य करते है। इन्हें जनता का प्रतिनिधि भी कहा जाता है, इनका कार्यकाल पाँच वर्ष का होता है लेकिन अगर कोई प्रधान ठीक से काम नहीं करता है तो उसे पंचायत समिति से हटाया भी जा सकता है।

इन्हें भी जानें–

- ग्राम प्रधान ग्राम शिक्षा समिति का अध्यक्ष होता है। विद्यालय के रख–रखाव निःशुल्क बालिका ड्रेस वितरण, छात्रवृत्ति वितरण, निःशुल्क पाठ्यपुस्तक वितरण तथा विद्यालय में दोपहर के भोजन (मिड–डे–मील) की व्यवस्था उसकी देख–रेख में होती है।

ग्राम पंचायत समिति

इस समिति का सदस्य वही व्यक्ति होता है जो उस गाँव का निवासी तथा भारत का नागरिक हो। उसकी उम्र कम से कम 21 वर्ष की होनी चाहिए। 18 वर्ष के सभी नागरिक मतदान के द्वारा ग्राम पंचायत समिति के सदस्यों का चुनाव करते हैं। इसकी सदस्य संख्या गाँव की जनसंख्या के आधार पर निर्धारित होती है।

जैसे 1000 ग्राम सभा की जनसंख्या पर ग्राम पंचायत समिति की सदस्यों की संख्या 9 होती है, 2000 की जनसंख्या पर पर 11, 3000 की जनसंख्या पर पर 13 तथा 3000 की जनसंख्या से अधिक की जनसंख्या पर 15 सदस्य होते हैं।

ग्राम पंचायत के मुख्य कार्य

- नागरिक सुविधाएँ
- समाजकल्याण के कार्य
- विकास कार्य

नागरिक सुविधाएँ

ग्राम पंचायत नागरिकों के उत्तम स्वास्थ्य एवं जीवन के लिए सफाई गन्दे पानी के विकास, पीने के स्वच्छ जल सड़क तथा प्रकाश की व्यवस्था करती है। बच्चों की शिक्षा के लिए स्कूलों की समुचित व्यवस्था करना भी ग्राम पंचायत का कार्य है।

समाज कल्याण के कार्य

ग्राम पंचायत जन्म तथा मृत्यु के आँकड़े रखती हैं। परिवार नियोजन एवं कल्याण के कार्यों को प्रभावी बनाने के लिए उपाय करती है। कृषि विकास तथा पशुपालन एवं कल्याण के लिए समुचित कार्य करती है।

विकास कार्य

सड़क, खड़ंजा तथा नाली, तालाब, स्कूल का निर्माण करना गाँव में पंचायत घर का निर्माण करवाना तथा पुस्तकालय आदि की व्यवस्था करना जैसे कार्य ग्राम पंचायत करती है।

क्षेत्र पंचायत

कई गाँवों को मिलाकर एक विकासखण्ड बनता है। इसे विकास क्षेत्र (ब्लॉक) भी कहते हैं। विकास खण्ड के स्तर पर क्षेत्र पंचायत होती है जिस प्रकार हर गाँव के प्रधान का चुनाव होता है। उसी प्रकार गाँव की जनता क्षेत्र पंचायत के लिए सदस्य का चुनाव भी करती है, क्षेत्र पंचायत सदस्यों को बी0डी0सी0 मेम्बर भी कहते हैं।

क्षेत्र पंचायत के सभी सदस्य अपने बीच में से एक पंचायत प्रमुख चुनती है, जो पंचायत की बैठकों में सभा का संचालन करती है। इन्हें ब्लॉक प्रमुख भी कहते हैं।

चर्चा करें–
- आपके गाँव का कौन व्यक्ति क्षेत्र पंचायत सदस्य है ?
- ब्लॉक प्रमुख का कार्य क्या होता है ?

क्षेत्र पंचायत के कार्य

- यह क्षेत्रीय विकास के लिए योजना तथा कार्यक्रम तैयार करती है।
- समुदायिक विकास कार्यक्रमों को प्रभावी रूप से कार्यन्वित करती है।
- अपने क्षेत्र में स्वास्थ्य, प्राथमिक शिक्षा, स्वच्छता तथा संचार एवं सम्पर्क के विकास के लिए कार्य करती है।
- यह क्षेत्र की ग्राम पंचायतों के कार्यों का निरीक्षण करती है।

जिला पंचायत

विकेन्द्रीकृत पंचायती राजव्यवस्था के अन्तर्गत जिस तरह हर गाँव में ग्राम पंचायत, प्रत्येक विकासखण्ड में एक क्षेत्र पंचायत काम करती है, उसी प्रकार हर प्रदेश के प्रत्येक जिले में जिलापंचायत काम करती है। जिले के सभी क्षेत्र पंचायतों को मिलाकर जिला पंचायत बनती है। क्षेत्र पंचायत के सभी

प्रमुख, जिले के सांसद व विधायक इसके सदस्य होते हैं। जिला पंचायत के सदस्य अपने बीच में से एक अध्यक्ष और एक उपाध्यक्ष चुनते हैं। जिले के प्रमुख को जिलाअध्यक्ष कहा जाता है।

जिला पंचायत के कार्य

विकास खण्ड का काम काज देखने के लिए जिला पंचायत अपने सदस्यों की छोटी–छोटी समितियाँ बनाती है जैसे–शिक्षा समिति, सिंचाई व्यवस्था समिति, पशुपालन समिति, भूमि विकास समिति आदि। ये समितियाँ जिले के पशु–पालन, सिंचाई, खेती व जमीनों की देख–भाल का काम करती हैं। क्षेत्र पंचायत के कार्यों की प्रगति की राज्य सरकार को सूचना देती है। जिले से सम्बन्धित कृषि तथा उत्पादन के कार्यों को योजनाबद्ध ढंग से पूरा करवाती है। इस प्रकार हमने देखा कि त्रीस्तरीय पंचायती राजव्यवस्था में ग्राम विकासखण्ड व जिला स्तर पर पंचायत व्यवस्था कायम है। तीनों स्तरों पर प्रतिनिधियों की चुनाव प्रक्रिया तथा प्रमुख कार्य लगभग एक जैसे ही हैं।

मूल्यांकन

(1) दिए गए कथनों में जो सही हो उनके आगे सही (✓) और जो कथन गलत हो उनके आगे गलत (**X**) का चिह्न लगाइए–

- 73वाँ संविधान संशोधन सन् 1993 में हुआ था ( )
- पंचायती राजव्यवस्था को द्विस्तरीय बनाया गया है। ( )
- ग्राम पंचायत का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है। ( )
- ग्राम प्रधान का चुनाव लड़ने के लिए 22 वर्ष का होना आवश्यक है। ( )
- पंचायत समिति के सदस्यों की संख्या निश्चित होती है। ( )

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

- ग्राम पंचायत को चुनने वाले मतदाताओं की आयु कम से कम .... वर्ष होनी चाहिए।
- क्षेत्र पंचायत के प्रमुख को ....कहते हैं।
- पंचायती राजव्यवस्था के निम्नतर संस्था .... है।
- क्षेत्र पंचायत के कामों का जिला पंचायत .... करती है।
- जिला पंचायत के अध्यक्ष का चुनाव.. करते हैं।

प्रॉजेक्ट कार्य

- अपने गाँव के सुधार के लिए आप अपने ग्राम प्रधान से क्या–क्या कार्य करवाना चाहते है इसकी सूची बनाकर ग्राम प्रधान से सम्पर्क कीजिए।
- यदि आपके गाँव में जिला पंचायत ने कोई कार्य कराया है तो उसका पता लगाइए और उस काम के बारे में कुछ बातें लिखिए।

ग्रामीण एवं नगरीय जीवन शैली (II)

नगरीय जीवन

- नगरीय जीवन
- नगर पंचायत
- नगर पालिका परिषद्,
- नगर निगम का गठन एवं मुख्य कार्य।

नगर का नाम सुनते ही हमारे दिमाग में गाँव से हटकर एक अलग प्रकार का चित्र उभरता है। यहाँ की आजीविका का साधन अलग होता है, मुख्यतः लोग कल–कारखाना, कम्पनी, फैक्ट्री इत्यादि में कार्य करते है। यहाँ का रहन–सहन विविध रंगों से रंगा होता है। सड़को पर चहल–पहल रहती है मूलभूत आवश्यकताएँ तथा सुविधाएँ आसानी से प्राप्त होती है यही कारण है कि– हमारे देश में नगरीय जनसंख्या का दिन प्रतिदिन विस्तार हो रहा है। नगरीकरण को बढ़ावा मिल रहा है, अर्थात जनता ग्रामीण वातावरण को छोड़कर नगरों में जाकर बस जाती है जिससे कि उन्हें उनकी बुनियादी सुविधाएँ और सेवाएँ उपलब्ध हों। इनकी समस्याओं के समाधान करके इनको इनकी सुविधाएँ मुहैया करायी जाए इसके लिए नगरीय स्थानीय स्वशासन पर बल दिया गया। जिस प्रकार गाँवों की भलाई के लिये ग्राम–पंचायते, क्षेत्र पंचायते तथा जिला पंचायते होती हैं उसी प्रकार शहरों की भलाई के कार्यों के लिए नगर पंचायत, नगरपालिका परिषद् तथा नगर निगम होते हैं।

चर्चा करें
- ग्रामीण और नगरीय रहन–सहन में क्या क्या अन्तर होता हैं।
- किसी एक नगर की आजीविका के बारे में चर्चा करें।

नगर पंचायत

नगरीय स्थानीय स्वशासन में नगर पंचायत सबसे निचले स्तर पर कार्य करती है, नगर पंचायत ऐसे क्षेत्र को बनाया जाता है जो संक्रमणशील क्षेत्र हो अर्थात ऐसा गाँव अथवा क्षेत्र जो नगरीय क्षेत्र में परिवर्तित हो रहा हो, जिनकी आबादी लगभग पाँच हजार से एक लाख के बीच होती है। नगर पंचायत में बहुत अधिक संख्या में लोग रहते है इसलिए इनके सदस्य भी अधिक होते है, एक नगर पंचायत में सदस्यों की संख्या लगभग दस से चौबीस तक होती है। इनके सदस्यों का निर्वाचन नगर पंचायत के नागरिकों द्वारा पाँच वर्ष के लिए किया जाता है।

पता करिए–
- क्या आप के आस–पास ऐसा कोई गाँव अथवा कस्बा है, जो बाद में नगर पंचायत के रूप में कार्य कर रहा है ?

नगर पालिका परिषद्

नगरीय स्थानीय स्वशासन का बीच की कड़ी नगर पालिका परिषद् होती है, नगरपालिका परिषद् में एक लाख से पाँच लाख की जनसंख्या निवास करती है। नगरपालिका परिषद् कई वार्डों अथवा खण्डों में विभाजित होती है, सम्पूर्ण नगर के प्रत्येक वार्ड से कितने सदस्य लिये जायेंगे इसका निर्णय राज्य सरकार द्वारा होता है। वार्ड के सदस्यों का निर्वाचन 18 वर्ष के वयस्क नागरिको द्वारा पाँच वर्ष के लिए किया जाता है। वार्ड के सदस्य बनने के लिए किसी भी व्यक्ति की उम्र 21 वर्ष से अधिक होनी चाहिए वह पागल व दिवालिया न हो तथा किसी सरकारी नौकरी या किसी लाभ के पद पर कार्यरत न हो। नगरपालिका परिषद् में विभिन्न वार्ड के सदस्यों की संख्या सामान्यतया 25 से 55 तक होती है। नगरपालिका का एक सभापति एक उपसभापति होता है। उप सभापति, सभापति की अनुपतिस्थति में उसका पदभार सम्भालता है। इन सभी पदाधिकारियों का पद अवैतनिक होता है। नगरपालिका अध्यक्ष का पद काफी प्रतिष्ठा का होता है। नगरपालिका अध्यक्ष परिषद् की बैठकों की अध्यक्षता करता है तथा विचार विमर्श में मार्गदर्शन करता है। यह नगरपालिका के वित्तीय तथा कार्यपालिका प्रशासन पर निगरानी रखता है। नगरपालिका के कार्यों को व्यावहारिक रूप देने के लिए राज्य सरकार द्वारा नियुक्त एक नगरपालिका आयुक्त होता है, जिसका पद वैतनिक होता है। नगरपालिका आयुक्त नगरपालिका के कार्यवाही विभाग का प्रमुख होता है।

चर्चा करें–

- नगरपालिका परिषद् के प्रमुख का नाम क्या है ?
- आपके प्रदेश में कुल कितनी नगरपालिका परिषद् है ?

नगरपालिका परिषद् के प्रमुख कार्य

- प्राथमिक शिक्षा के प्रबन्ध के साथ ही साथ प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना का भी कार्य करती है।
- सार्वजनिक स्थानों और सड़कों की स्थापना के साथ इनकी स्वच्छता का कार्य भी नगरपालिका के द्वारा कराया जाता है।
- नागरिकों के स्वास्थ्य की रक्षा के लिये चिकित्सालयों की व्यवस्था करती है तथा शुद्ध पेयजल की व्यवस्था करती है।
- नगरपालिका सार्वजनिक शौचालयों को बनवाती है।
- जन्म–मरण का लेखा–जोखा रखती है। इसके अतिरिक्त नगरपालिका अन्य बहुत से कार्यों को सम्पादित करती है।

नगर निगम

नगर निगम सर्वोच्च शहरी स्थानीय व्यवस्था है। नगर निगमों की स्थापना राज्य विधानमण्डल द्वारा निर्मित अधिनियम द्वारा होती है। इनका अस्तित्व एवं शक्तियाँ राज्य सरकार पर निर्भर करती है। प्रायः पाँच लाख से अधिक जनसंख्या वाले शहर में नगर निगम बनता है। नगर निगमों की स्थापना का प्रमुख आधार जनसंख्या क्षेत्र एवं साधन स्रोतों की उपलब्धता आदि है। नगर निगम मे सदस्यों की संख्या 60 से 110 तक होती है।

नगर निगम में परिषद, महापौर समितियाँ एवं निगम आयुक्त मुख्य घटक होते है। परिषद, नगर निगम की शक्तिशाली संस्था है और एक प्रकार से स्थानीय विधानसभा है। यह स्वशासन के सम्बन्ध में जनता की इच्छा प्रकट करती है। परिषद के लिए चुने गये सदस्य पार्षद कहलाते है जो वयस्क मताधिकार के आधार पर पाँच वर्ष की अवधि के लिए चुने जाते हैं। परिषद में निर्वाचित सदस्यों के अतिरिक्त कुछ चयनित सदस्य भी होते हैं जिन्हें 'एल्डरमैन' कहा जाता है।

नगर निगम में महापौर का पद सम्मानजनक एवं महत्वपूर्ण होता है। महापौर का चुनाव निगम के सदस्यों में से होता है और वह नगर का प्रथम नागरिक होता है। महापौर निगम की सभाओं की अध्यक्षता करता है। यह आयुक्त तथा राज्य सरकार के बीच संचार के उचित माध्यम का कार्य करता है। महापौर के साथ उप महापौर का भी चुनाव किया जाता है। नगर निगम की प्रशासनिक शक्ति परिषद में निहित होती है और उन शक्तियों का उपयोग सामान्य परिषद, समितियों तथा मुख्य कार्यपालिका अधिकारी द्वारा किया जाता है।

परिषद की बैठक महीने में प्रायः एक या दो बार से अधिक नहीं हो पाती। अतः कार्यों को उचित रूप से सम्पन्न करने के लिए परिषद कुछ समितियों का गठन करती है। ये समितियों दो प्रकार की होती है– संवैधानिक समितियाँ एवं गैर संवैधानिक समितियाँ।

निगम आयुक्त निगम का प्रमुख कार्यकारी अधिकारी होता है जिसकी नियुक्त राज्य शासन द्वारा की जाती है। इसका पद वैतनिक होता है। आयुक्त परिषद की बैठकों में भाग लेता है। वह सभी नगर विवरणों का अभिरक्षक हैं वह बजट तैयार कर निगम के समक्ष रखता है तथा प्रशासनिक तंत्र का प्रमुख होने के नाते सभी सरकारी कार्यों को विभिन्न विभागों के बीच बाँटता है।

नगर निगम के प्रमुख कार्य

नगर निगम दो प्रकार के कार्यों को सम्पन्न करता है। ऐच्छिक एवं अनिवार्य। अनिवार्य कार्यों में वे कार्य आते हैं जो नगर निगम को अवश्य करने पड़ते है, जैसे– विद्युत प्रबन्ध, जल की व्यवस्था, यातायात सेवाओं का प्रबन्ध, गन्दगी तथा कूड़े–कचरे की सफाई, गलियों, शौचायलयों आदि की सफाई इत्यादि। ऐच्छिक कार्य वे है जो आवश्यक नहीं किन्तु वित्तीय स्रोतों के आधार पर इन्हें किया जाता है जैसे पार्कों का निर्माण आदि।

इस प्रकार नगर पंचायत, नगरपालिका परिषद तथा नगर निगम तीनों संस्थाएँ नगरीय स्थानीय स्वशासन को सफल एवं सुगम बनाते हैं।

मूल्यांकन

(1) प्रश्न के माध्यम से मूल्यांकन।

- नगर पंचायत के गठन को बताइये ?
- नगर पलिका परिषद् बनने के लिए कितनी जनसंख्या होनी आवश्यक है ?
- महापौर का चुनाव कौन करता है ?
- नगर पालिका के कार्यों को बताइये ?
- आपके प्रदेश में कुल कितने नगर निगम है ?

(2) दिए गए कथनों में जो सही हो उनके आगे सही (✓) और जो कथन गलत हो उनके आगे गलत (**X**) का चिह्न लगाइए–

- सबसे बड़े नगर क्षेत्र को नगर पंचायत कहते हैं। (   )
- नगर पालिका परिषद् का कार्यकाल वर्ष होता है। (   )
- नगर पंचायत का चुनाव लड़ने वाले व्यक्ति की आयु कम से कम 21 वर्ष होनी चाहिए। (   )
- नगर निगम 5 वर्ष के लिए बनाई जाती है। (   )
- नगर निगम का कार्यपालिका अधिकारी नगर आयुक्त होता है। (   )

प्रॉजेक्ट कार्य

नगर निगम के प्रमुख कार्यों को पता करके उसकी एक सूची तैयार करिए।

जनपद स्तरीय प्रशासन

जनपद स्तरीय प्रशासन

- कानून व्यवस्था
- भूमि व्यवस्था
- नागरिक सुविधाओं का विकास–
  - शिक्षा व्यवस्था
  - स्वास्थ्य व्यवस्था
  - सुरक्षा व्यवस्था

जनपद स्तरीय प्रशासन राज्य प्रशासन की मूल इकाई है। हमारा प्रदेश एक बहुत बड़ा राज्य है जिसमें पूरे राज्य का शासन एक जगह से चलाने में कई कठिनाईयाँ आती है, इस कठिनाई से बचने के लिए प्रदेश के प्रशासन को कई जिला प्रशासन में विभाजित किया गया है। इस प्रकार की व्यवस्था करके हमने लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को महत्व दिया है। इस प्रक्रिया से केन्द्रीयकरण से बचा जाता है। अतः जनमानस की सुविधाओं को देखते हुए जनपद स्तरीय प्रशासन को महत्व दिया गया। जिला प्रशासन का महत्व स्वतंत्रता से पहले भी था। हमारे देश में दो प्रकार से प्रशासनिक क्रियाकलाप सम्पन्न होता है प्रथम शासन द्वारा द्वितीय प्रशासन द्वारा। संविधान के अनुसार चुनी हुई सरकारें पाँच वर्ष के लिए होती है एवं विभिन्न स्तरों पर उनके द्वारा नीतियों का निर्माण किया जाता है, शासन के सदस्य स्थायी होते हैं। इनकी नीतियों को व्यावहारिक धरातल पर सम्पन्न करने का कार्य प्रशासन द्वारा किया जाता है। अर्थात् विभिन्न स्तरों (विभागों) पर उनकी सहायता के लिए सरकारी विभाग के अधिकारी व कर्मचारी होते हैं। यह जनप्रतिनिधियों की तरह जनता द्वारा निश्चित समय के लिए नहीं चुने जाते हैं बल्कि ये विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं एवं चयन प्रक्रिया द्वारा चयनित किए जाते हैं। इनका एक निश्चित समय होता है तथा इनका पद वैतनिक होता है। जनपद स्तरीय प्रशासन में विभिन्न अधिकारियों द्वारा कानून व्यवस्था, भूमि व्यवस्था, नागरिक सुविधाओं का विकास जिसमें शिक्षा व्यवस्था, स्वास्थ्य व्यवस्था एवं सुरक्षा व्यवस्था इत्यादि को सम्पन्न किया जाता है इन सभी कार्यों को सम्पन्न कराने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका जिलाधिकारी का होती है। जो सम्पूर्ण जिला प्रशासन की धुरी माना जाता है।

जिलाधिकारी

जिलाधिकारी या तो भारतीय प्रशासनिक सेवा में सीधी भर्ती द्वारा नियुक्त होता है अथवा राज्य प्रशासनिक सेवा में पदोन्नत पदाधिकारी होता है। संविधान के अनुच्छेद 311 के तहत उसे सुरक्षा प्रदान की गयी है।

जिलाधिकारी अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह निम्न रूपों में करता है–

- राजस्व अधिकारी के रूप में
- जिला प्रशासक के रूप में
- जिला मजिस्ट्रेट (दण्डाधिकारी) के रूप में
- जिला विकास अधिकारी के रूप में
- सरकार के एजेंट के रूप में।

चर्चा करें–

- अपने जिले के जिलाधिकारी के प्रमुख कार्यों पर चर्चा करें?

उपरोक्त कार्यों को सम्पन्न करने में जिलाधिकारी जिले के समस्त अधिकारियों की सहायता लेता है। जनता के हित के सभी कार्यों को जिलाधिकारी ही करता है। वह दौरों तथा बैठक के द्वारा जनता से सम्पर्क करता है। जिलाधिकारी समय–समय पर तहसील दिवस व अन्य बैठकों के द्वारा जनप्रतिनिधियों से विचार विमर्श व विभिन्न विभागों के अधिकारियों के कार्यों की समीक्षा भी करता है।

जनपद स्तरीय प्रशासन के महत्वपूर्ण कार्य

- कानून व्यवस्था
- भूमि व्यवस्था
- नागरिक सुविधाओं का विकास
- शिक्षा व्यवस्था
- स्वास्थ्य व्यवस्था
- सुरक्षा व्यवस्था

कानून व्यवस्था

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जो समाज के बिना नहीं रह सकता है। इसी समाज में कई तरह के व्यक्ति रहते हैं, जिनके अलग–अलग हित व लाभ होते हैं। वे हमेशा इसको प्राप्त करने का प्रयत्न करते है जिससे उनके हित आपस में टकराते है इससे आपस में वैमनस्यता की भावना बढ़ती जाती है, जो बाद में हिंसा व अत्याचार का स्वरूप ग्रहण कर लेती है। इससे सामाजिक व्यवस्था प्रभावित होती है। इन सब समस्याओं से बचने के लिए कानून व्यवस्था बनाया गया है। इसके अन्तर्गत ऊपर से नीचे कई अधिकारी कार्य करते हैं। इनका उत्तरदायित्व होता है कि समाज में कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति का शोषण ना करें, इसके लिए संवैधानिक व कानूनी प्रावधान किये गये हैं।

जिला प्रशासन में (कानून व्यवस्था से सम्बन्धित) अधिकारी

कानून व्यवस्था की स्थापना

↓

पुलिस अधीक्षक

↓

उप पुलिस अधीक्षक

↓

इस्पेक्टर

↓

सब इस्पेक्टर

↓

अन्य अधिकारी / कर्मचारी

इस प्रकार कानून व्यवस्थाकी स्थापना के लिए पुलिस प्रशासन की जिम्मेदारी होती है। पुलिस, लोगों की जान–माल व अधिकारों की सुरक्षा करती है। कानून तोड़ने वालों पर पुलिस मुकदमा चलाती है तथा न्यायालय द्वारा उसे सजा मिलती है। सजा मिलने पर अपराधियों को जेल जाना पड़ता है।

इन्हें भी जाने

- अगर आपके साथ कहीं भी कोई घटना (चोरी, छिनैती) घटती है तो 100 नम्बर पर फोन लगाइए पुलिस आपके पास पहुँच जायेगी।

भूमिव्यवस्था

जिला प्रशासन के महत्वपूर्ण कार्यों में भूमि व्यवस्था भी एक आवश्यक कार्य है। इसके अन्तर्गत जमीन का माप, भूमि किसके नाम है, इसका रख रखाव कौन करता है, भूमि जिसकी है व्यवहार में वही व्यक्ति उसका प्रयोग कर रहा है, इत्यादि की जानकारी भूमि व्यवस्था करने वाले अधिकारी करते हैं।

जिला प्रशासन के (भूमि व्यवस्था व लगान वसूली) अधिकारी

↓

तहसीलदार

↓

नायब तहसीलदार

↓

कानूनगो

↓

पटवारी / लेखपाल

इन अधिकारयों द्वारा भूमि की माप, खतौनी का रख–रखाव तथा राहत कार्य किए जाते है। जिलाधिकारी के नेतृत्व में विभिन्न अधिकारियों द्वारा लगान वसूल किया जाता है।

चर्चा करिए

- अपने तहसील के अन्तर्गत तहसीलदार के कार्यों पर चर्चा करें।

नागरिक सुविधा और विकास

जिला प्रशासन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य जिले में नागरिकों सुविधाओं को उपलब्ध कराना तथा निरन्तर इन सुविधाओं का विकास करना है। शासन से लेकर प्रशासन दिन–प्रतिदिन नागरिकों की सुविधाओं और सुरक्षा से सम्बन्धित कार्यों के निवर्हन में लगे रहते हैं। हमारे प्रशासन का उद्देश्य होता है कि सभी नागरिकों तक इन सुविधाओं (सड़क स्वास्थ्य, सुरक्षा, पानी, शिक्षा बिजली) को पहुचाया जाये, ताकि एक विकसित समाज की स्थापना किया जा सके।

हमारे संविधान के भाग–चार में नीति निर्देशक तत्व के अन्तर्गत समाहित किया गया है कि सरकार नागरिकों के कल्याण हेतु विभिन्न प्रकार की योजनाओं व नीतियों का क्रियान्वयन करेगी। स्वतंत्रता के बाद केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा नागरिक सुविधा और विकास से सम्बन्धित (शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, आवास, भोजन ग्रामीण व शहरी विकास, गरीबी) तरह तरह की योजनाओं व कानूनों को बनाया है, जिसे प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा अमल में लाया जाता है। नागरिक सुविधा और विकास से सम्बन्धित कार्यों में मुख्य रूप से हम शिक्षा व्यवस्था, स्वास्थ्य व्यवस्था तथा सुरक्षा व्यवस्था के बारे में जानेंगे, जो इस प्रकार हैं–

शिक्षा व्यवस्था

यह निर्विवाद सत्य है कि शिक्षा किसी भी व्यक्ति और समाज के लिए विकास की धुरी है और यह किसी भी राष्ट्र की प्राणवायु है बिना इसके विकास की सभी बाते अधूरी साबित होती हैं। शिक्षा का सम्बन्ध सिर्फ साक्षरता से नहीं है बल्कि शिक्षा चेतना और उत्तरदायित्वों की भावना को जागृत करने वाला औजार भी है किसी राष्ट्र का भविष्य उसके द्वारा हासिल किए गए शैक्षिक स्तर पर निर्भर करता है। इस तरह से शिक्षा प्रत्येक समाज व राष्ट्र के लिए प्रथम सीढ़ी है जिस पर सफलतापूर्वक पार करके ही हम अपने अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि किसी व्यक्ति समाज व राष्ट्र के विकास में शिक्षा की अहम भूमिका होती है। शिक्षा की इसी महत्ता को स्वीकराते हुए इसे जनपद स्तरीय प्रशासन में महत्वपूर्ण माना गया है। जनपद स्तर पर प्राथमिक उच्च प्राथमिक तथा माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना की गयी हैं इसके लिए अलग–अलग अधिकारियों की नियुक्त की जाती है। जो इस प्रकार हैं– प्राथमिक विद्यालयों की देखरेख तथा उसके निरीक्षण का कार्य बेसिक शिक्षा अधिकारी अन्य अधिकारियों तथा कर्मचारियों की सहायता से करता है। इनके निर्देशन में विद्यालय की मरम्मत अर्थात भवन निर्माण पाठ्यपुस्तकों का सभी बच्चों तक पहुँचना मिड–डे मिल कार्यक्रम को सही प्रकार से क्रियान्वयन, विद्यालयों में अध्यापन व अध्यापक से सम्बन्धित सभी समस्याओं का समाधान किया जाता है।

जिला विद्यालय निरीक्षक अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के सहायता से माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों की व्यवस्था एवं निरीक्षण का कार्य करता है।

चर्चा करिए

- प्राथमिक व उच्च प्राथमिक विद्यालयों में चलने वाली योजना मिड–डे मिल की महत्ता पर चर्चा करें।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जनपद स्तर पर शिक्षा व्यवस्था का कार्य इसके प्रमुख अधिकारियों द्वारा सम्पन्न किया जाता है।

स्वास्थ्य व्यवस्था

देश के ग्रामीण इलाकों तक स्वास्थ्य सुविधाएँ पहुचाना स्वस्थ भारत के स्वप्न को साकार करने में सबसे बड़ी चुनौती है। इस चुनौती को पूरा करने तथा सभी नागरिकों तथा स्वास्थ्य सुविधाओं को प्राप्त कराने में जनपद स्तरीय प्रशासन महत्वपूर्ण घटक होते है। यह सच है कि सभी सुख–सुविधाओं के होते हुए भी अगर हम अस्वास्थ्य है तो एक स्वस्थ्य समाज एवं राष्ट्र का निर्माण कैसे सम्भव होगा ?

अतः एक स्वस्थ समाज के स्थापना हेतु हमारे देश में विभिन्न विमारियों को खत्म करने तथा बहुत हद तक उसे कम करने के लिए कई चरणों में प्रयास किये गये हैं, जिनके क्रियान्वयन के लिए जनपद स्तर पर एक व्यवस्थित चिकित्सा प्रशासन का निर्माण किया गया है।

जिला प्रशासन में (स्वास्थ्य व्यवस्था से सम्बन्धित) अधिकारी

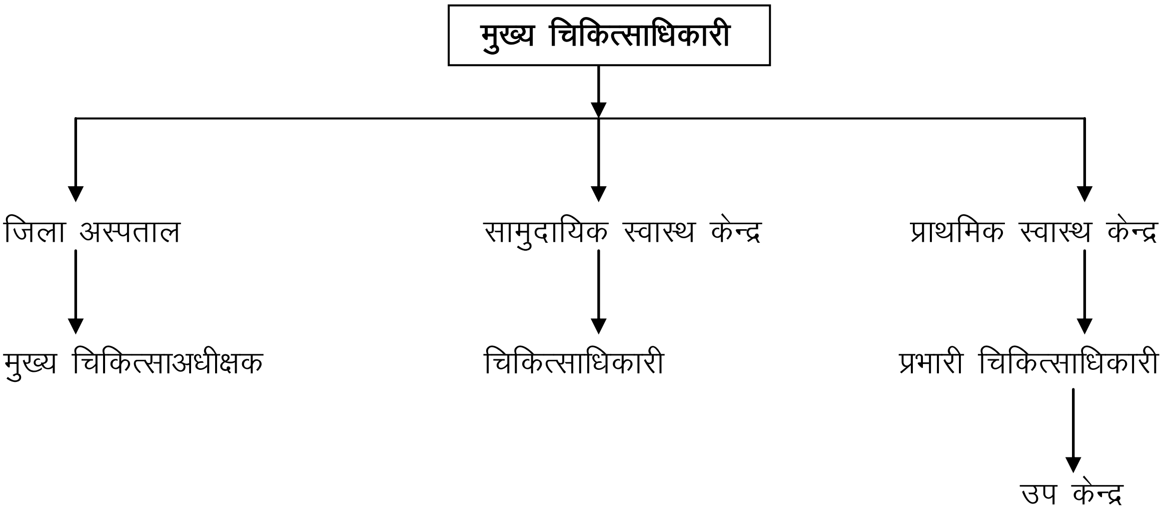

इनके द्वारा जिले में परिवार कल्याण से सम्बन्धित कार्य, रोगों के इलाज तथा बीमारी से रोकथाम का कार्य किया जाता है।

भारत में केन्द्र और राज्य स्तर पर सरकारों ने स्वास्थ्य और वित्तीय सक्षमता में सुधार के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। प्रमुख उपायों में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन जो 2005 में शुरू किया गया था और जिसका उद्देश्य प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर सेवा गुणवत्ता में सुधार लाना था तथा राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना शामिल है जो निर्धनों के लिए 2007 में शुरू की गई बीमा योजना है इसमें सरकारी खर्च पर अस्पताल में उपचार (माध्यमिक स्तर) की सुविधा प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त इसी प्रकार की गई योजनाएं प्रदेश स्तर पर लागू की गयी हैं।

अभी हाल ही में प्रदेश सरकार द्वारा सरकारी एम्बुलेंस की व्यवस्था की गयी है। जो प्रत्येक प्राथमिक स्तर के अस्पताल पर उपलब्ध रहती है। कहीं किसी दुर्घटना घटित होने पर नम्बर 108 पर बात करने पर एम्बुलेंस सेवा वहाँ पहुँच जाती है।

इस प्रकार देखा जाता है कि हमारे देश में राज्य व जिला स्तर पर जन स्वास्थ्य सुविधाओं को मुहैया कराने का निरन्तर प्रयास किया जाता है। जिससे हमारा समाज एक स्वस्थ समाज बनने में सक्षम हो सके।

सुरक्षा व्यवस्था

नागरिक सुविधाओं से सम्बन्धित सुरक्षा व्यवस्था भी महत्वपूर्ण घटक है। हमारे नागरिक एक सुरक्षित वातावरण में जीवन निर्वाह करें, इसके लिए जिला प्रशासन महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व का निर्वहन करता है। सुरक्षा व्यवस्था में कई प्रकार की व्यवस्था आती है जैसे आग लगने पर अग्निशामक को कार्य करना पड़ता है, यातायात की सुरक्षा हेतु सैनिक पुलिस होती है। जान–माल की सुरक्षा हेतु पुलिस प्रशासन जिम्मेदार होता है। जनपद स्तर पर सुरक्षा व्यवस्था की मुख्य उत्तरदायित्व जिलाधिकारी का होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जनपद स्तरीय प्रशासन प्रशासन की एक महत्वपूर्ण इकाई है। जो नागरिकों से सम्बन्धित सम्पूर्ण सेवाओं को उन तक पहुँचाने का निरन्तर प्रयास करती है। जिससे एक कल्याणकारी समय की स्थापना करने सक्षम हो सके।

मूल्यांकन

क. प्रश्न द्वारा

- जनपद स्तरीय प्रशासन से क्या आशय है ?
- जिलाधिकारी के प्रमुख कार्यों के बारे एक टिप्पणी लिखों ?
- कानून व्यवस्था से आप क्या समझते हैं ?
- जिले में प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था कौन करता है ?
- स्वास्थ्य व्यवस्था से आप क्या समझते हैं ?

ख. पता करके लिखिए

- अपने जिलाधिकारी का नाम ....।
- प्रमुख पुलिस अधीक्षक का नाम ....।
- बेसिक शिक्षा अधिकारी का नाम ....।
- मुख्य चिकित्साधिकारी का नाम ....।
- जिला विद्यालय निरीक्षक का नाम ....।

प्रॉजेक्ट कार्य

- अपने जिले में अच्छी शिक्षा व्यवस्था के लिए आप क्या–क्या करना चाहते हैं ? सोचकर एक सूची तैयार करिए।

यातायात एवं सुरक्षा

यातायात एवं सुरक्षा

- सड़क यातायात के नियमों एवं संकेतों की जानकारी
- सड़क दुर्घटना के बचाव हेतु सावधानियाँ
- रेलयातायात– रेलवे क्रासिंग के संकेतो की जानकारी
- रेलयात्रा करते समय सावधानियाँ

आधुनिक वैज्ञानिक समय में नित नये यातायात के साधनों में वृद्धि होती जा रही है, जिसका प्रयोग हमारे द्वारा किया जा रहा है। आज जहाँ सड़को पर लगातार मोटर साइकिल, रिक्शा, विभिन्न प्रकार की कारों तथा स्कूली वाहनों का ताँता लगा रहता है तथा सभी को अपने–अपने गनतव्य पर पहुँचने की जल्दी रहती है। वहीं जनसंख्या वृद्धि के कारण सड़कों पर लोगों की भीड़ में भी इजाफा हो रहा है, जिससे आये दिन हम अखबार व रेडियों तथा टीवी चैनलों के माध्यम से पढ़ते–सुनते तथा देखते है कि कहीं उस जगह दुर्घटना हो गयी जिससे कई लोग घायल तथा कई मारे जाते हैं। यह दुर्घटना कभी गाड़ियों की आपसी टक्कर से होती है तो कभी रेल क्रासिंग के फाटक पर होती है, इस तरह से यातायात करते समय हममें असुरक्षा की भावना बनी रहती है, जिसके कारण हम असुरक्षित महसूस करते हैं। इसलिए यातायात के साथ–साथ हमें इसकी सुरक्षा पर ध्यान देना अति आवश्यक हो जाता है, इसके लिए हमे इसके लिए सर्वप्रथम यातायात के नियमों एवं संकेतों को समझना आवश्यक है।

सड़क यातायात के नियमों एवं संकेतों की जानकारी

आज हम अपनी भागम भाग जिन्दगी में सड़क पर चलते जाते है हमारे दिमाग में कई बातें चलती रहती है हमें सर्वप्रथम जिस बात पर ध्याान देना चाहिए उसे हम भूल जाते हैं और हम यातायात के नियमों व संकेतों को अनदेखी कर देते है जिसका परिणाम दुर्घटना में बदल सकता है। अतः हमें सड़क यातायात के नियमों एवं संकेतों को भली–भाँति जानकारी होनी चाहिए जो हमारे स्वयं के लिए तथा समाज व देश के हित में होता है।

आइए यातायात के कुछ नियमों एवं संकेतों को जानें–

- सड़क पर सदैव अपनी वायी ओर से चलें।
- सड़क पार करने के लिए सुरक्षित स्थान चुनें।
- सड़क पार करते समय ट्रैफिक की ओर देंखे और उसकी आवाज पर ध्यान दें।
- यदि फुटपाथ हो तो उसका प्रयोग करें और यदि न हो तो अपनी बांयी तरफ सड़क के किनारे से चलें।
- सड़क पार करते समय पहले अपनी दायीं ओर देखें फिर बायीं ओर देखों और पुनः दायीं और देखों ट्रैफिक नहीं आ रहा हो तो जल्दी से सड़क पार करें।
- महानगरों के चौराहों पर ट्रैफिक सिग्नल (संकेत) (लाल/हरा) देखकर चौराहा पार करें।

- यदि सामने लाल बत्ती जल रही है तो चौराहा कदापि न पार करें।
- यदि सामने पीली बत्ती जल रही है तो तैयार हो जाइए।
- यदि चौराहे पर हरी बत्ती जल रही है तो चौराहा पार करिए।
- रात में वाहन चलाते समय संकेतक का प्रयोग अवश्य करें।
- साइकिल या मोटर साइकिल सवार व्यक्ति को मोड़ पर हाथ से इशारा करके मुड़ना चाहिए।

चर्चा करें–

- आपस में यातायात के संकेतों पर चर्चा करें।
- सड़क दुर्घटना के बचाव पर आपस में चर्चा करें।

सड़क दुर्घटना के बचाव हेतु सावधानियाँ

सड़क दुर्घटना से बचने के लिए हमें निम्नलिखित सावधानियाँ अपनानी चाहिए जो निम्नलिखित है–

- सर्वप्रथम अपने वाहन के ब्रेक लाइट इत्यादि चेक कर लें फिर चलें।
- रात में वाहन चालते समय उसकी बत्ती अवश्य जला दें।
- मोटर साइकिल/स्कूटर चलाते समय हेलमेट अवश्य पहनें।
- कार चालक एवं इसमें बैठने वाले लोग सीट बेल्ट अवश्य बांधे।
- एम्बुलेंस दमकल और पुलिस जैसे आपात ड्यूटी पर तैनात वाहनों को रास्ता दें।
- सड़क पर खतरे के संकेतों एवं सड़क सुरक्षा के नियमों का पालन अवश्यक करें।
- आपको जिस ओर (बायी या दायीं) मुड़ना है उधर संकेत देकर मुड़ें।
- सड़क पार करते समय झुण्ड में न चलें।
- चलती वाहन पर न चड़ें न ही उतरें।
- चलती हुयी वाहन पर पीछे की ओर न लटकें।
- दुपहिया वाहनों पर दो से अधिक व्यक्ति न बैठें।
- वाहन तेज गति से न चलाएँ।
- नशीले दवाओं का सेवन करके या शराब (अल्कोहल) पीकर वाहन न चालएं।
- वाहन चलाते समय मोबाइल फोन से बातें न करें।
- असावधानी, थकान, गुस्सा, मानसिक तनाव में वाहन न चलाएं।

चर्चा करें–

- सड़क पर चलने वाले वाहनों के ध्वनि प्रदूषण एवं वायु प्रदूषण पर चर्चा करें।

रेल यातायात रेलवे क्रासिंग के संकेतों की जानकारी

हमारे दैनिक यातायात के साधनों में रेल यातायात एक महत्वपूर्ण साधन है। रेल यातायात अन्य यातायात के साधनों से सस्ता एवं सुगम भी होता है। इसलिए आज के समय में रेल यातायात की भीड़ निरन्तर बढ़ती जा रही है। जिस प्रकार हमारे जीवन में सड़क यातायात के नियमों एवं संकेतों की जानकारी महत्वपूर्ण है उसी प्रकार रेल यातायात के संकेत होते हैं, जिसकी जानकारी होना हमारे लिए लाभप्रद है।

आइए जानते हैं रेलवे क्रासिंग के संकेतों की जानकारी–

- रेलवे लाइन वहीं से पार करना चाहिए जहाँ पर फाटक बना होता है।
- रेलगाड़ी की चलने की रफ्तार आपके चलने की गति से बहुत अधिक होती है इसलिए रेलगाड़ी को देखकर ही क्रासिंग पार करें।
- रेलवे लाइन पार करने से पहले इन संकेतों पर ध्यान दें।
- यदि फाटक बन्द हो तो स्वयं लाइन पार करने या वाहन पार कराने का प्रयास न करें।
- मानवरहित बिना गेट की क्रासिंग हो तो बहुत अधिक सावधान रहने की आवश्यकता है। लाइन पार करते समय अपने दोनों ओर अवश्य देंख लें कि ट्रेन आ तो नहीं रही है।
- रूकी हुयी ट्रेन के नीचे से दूसरी तरफ जाने की कोशिश न करें।
- रेल पटरियों के साथ विछे तारों को न छुए, उसमें विद्युत करेण्ट हो सकता है।
- एक प्लेटफार्म से दूसरे प्लेट फार्म पर जाने के लिए ओवरब्रिज का प्रयोग करना चाहिए।

चर्चा करें–

- रेलवे क्रासिंग के संकेतों के महत्व पर चर्चा करें तथा यह पता करें कि यह हमारे लिए कितना उपयोगी है।

रेल यातयात करते समय सावधानियाँ

रेल एक शक्तिशाली तथा तेज गति वाला यातायात का साधन है। इसके द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर शीघ्र पहुँचा जा सकता है। रेलगाड़ी की यात्रा करने में बहुत आनन्द आता है, परन्तु यात्रा करते समय कभी–कभी हमसे कुछ गलतियाँ हो जाती है, जिससे कई दुर्घटनाएँ भी घट सकती है जो हमारे जान–माल के लिए नुकसानदायक होती है। इसलिए सर्वप्रथम रेल यातायात करते समय हमें कुछ सावधानियाँ बरतनी चाहिए जो निम्नलिखित है–

- रेल टिकट लेकर ही यात्रा करें।
- चलती रेल पर चढ़ने और उतरने का प्रयास नहीं करना चाहिए क्योंकि इस प्रयास से व्यक्ति विकलांग हो सकता है तथा मृत्यु भी हो सकती है।
- रेल के दरवाजे पर खड़े होकर यात्रा नहीं करनी चाहिए।

- रेल की बोगियों के ऊपर बैठकर यात्रा न करें।
- रेल की खिड़कियों से अपने शरीर का कोई अंग बाहर न निकाले क्योंकि बाहर की किसी चीज से टकराकर चोट लग सकती है।
- चलती ट्रेन की जंजीर खींचकर व्यवधान उत्पन्न नहीं करना चाहिए। इससे यात्रियों को अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँचने में देर हो सकती है।
- रेल में यात्रा करते समय कभी भी किसी अपरिचित द्वारा दिया गया पदार्थ नहीं खाना चाहिए, न ही पीना और न ही सूँघना चाहिए हो सकता है कि उसमें कुछ नशीला पदार्थ मिला दिया गया हो जिससे व्यक्ति बेहोश हो जाए और उसका सामान लूट लिया जाए।
- यात्रा करते समय अपने सामान तथा बच्चों की सुरक्षा स्वयं करनी चाहिए जहाँ तक हो सके आवश्यक और कम सामान लेकर यात्रा करनी चाहिए।
- बोगी या प्लेटफार्म पर पड़ी किसी लावारिस वस्तु को छूना नहीं चाहिए इस प्रकार की पड़ी लावारिस वस्तु की सूचना रेलवे सुरक्षा बल को देनी चाहिए।
- रेल में कभी भी कोई ज्वलनशील पदार्थ जैसे– स्ट्रोव या गैस सिलेण्डर लेकर यात्रा नहीं करनी चाहिए।

चर्चा करें

- प्लेटफार्म पर पड़ी लावारिस वस्तु का आप क्या करेंगे।

इस प्रकार हम रेल यात्रा की सावधानियों को अपनाकर अपने जान माल की सुरक्षा करने में सक्षम हो सकेंगे।

मूल्यांकन

प्रश्न द्वारा

सड़क दुर्घटनाएँ क्यों होती है?

- सड़क दुर्घटना से बचने के लिए क्या–क्या करेंगे ?
- यातायात की सुरक्षा क्यों आवश्यक है ?
- ध्वनि प्रदूषण से आप क्या समझते हैं ?
- यदि चौराहे पर लालबत्ती जल रही हो तो आप क्या करेंगे ?

- कुछ प्रश्नों से जानिए कि आप सुरक्षा के प्रति कितने जागरूक है उस पर सही का (✓) चिह्न लगाइए–

आप क्या करते हैं	हमेशा	कभी कभी	कभी नहीं
1. मोटर साइकिल पर दो से अधिक लोग बैठकर चलते हैं।			
2. बड़े वाहनों को पीछे से पकड़कर साथ चलने की कोशिश करते हैं।			
3. सड़क पर मुड़ने से पहले हाथ से इशारा करते हैं।			
4. सड़क पर बाएँ से चलते हैं।			
5. वाहन चलाते समय मोबाइल से बात करते हैं।			
6. मोटर साइकिल हेलमेट लगाकर चलाते हैं।			
7. वाहन चलाते समय कार बेल्ट लगाते हैं।			
8. चलती हुयी वाहन पर चडते व उतरते है।			
9. रेलफाटक बन्द होने पर भी रेलवे लाइन पार करने का प्रयास करते हैं।			
10. सड़क के बीच खड़े होकर दोस्तों से बातचीत करते हैं।			

उत्तर तालिका से अपने उत्तर का मिलान करें और यह जानें कि आपका उत्तर हमेशा क्या होना चाहिए।

(1) C (2) C (3) A (4) A (5) C (6) A (7) A (8) C (9) C (10) C

प्रॉजेक्ट कार्य

- सड़क यातायात नियमों एवं संकेतों से सम्बन्धित एक चार्ट पेपर तैयार करिए।

अर्थशास्त्र एक परिचय

अर्थ शास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है जिसमें मानव की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन होता है। अतः मनुष्य द्वारा सम्पन्न की जाने वाली सभी क्रियायें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से धन से सम्बन्धित होती हैं। अर्थशास्त्र में मनुष्य की दो प्रकार की क्रियायें हैं–

अर्थशास्त्र क्या है ?

- आर्थिक व अनार्थिक क्रियायें
- अर्थशास्त्र का जन्म व ऐतिहासिक विवेचना
- परिभाषाएं
- एडम स्मिथ
- एल्फ्रेड मार्शल
- राबिन्स
- जे0के0 मेहता
- परिभाषाओं की आलोचना के कारक
- अमर्त्यसेन का योगदान

1. आर्थिक क्रियायें– मानव के वे सभी कार्य आर्थिक क्रियाओं में सम्मिलित किए जाते हैं, जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध धन से हैं। यथा– उद्योग से उत्पादन, मोटर चलाना, व्यापार करना, रिक्शा चलाना इत्यादि।

2. अनार्थिक क्रियायें– अर्थशास्त्र में ऐसे समस्त कार्यों को अनार्थिक क्रियाओं में सम्मिलित करते हैं, जिनका सम्बन्ध धन से नहीं है। यथा साधु द्वारा जंगल में पूजा करना, माँ द्वारा बच्चे को दूध पिलाना आदि।

अर्थशास्त्र का जन्म व ऐतिहासिक विवेचन–

यद्यपि अर्थशास्त्र के जन्म के समय में विभिन्न प्रकार की भ्रंतियाँ है। 1776 में अर्थशास्त्र विषय की प्रथम पुस्तक (An Enquiry into the Nature and Causes of wealth of Nation) (राष्ट्रों की सम्पत्ति के स्वभाव और कारणों की खोज) प्रकाशित हुई, जिससे अर्थशास्त्र विषय को महत्वपूर्ण स्थान मिला। अतः विश्व में **एडम स्मिथ** को **'अर्थशास्त्र का जनक'** कहा जाने लगा। प्रश्न यह उठता है कि क्या एडम स्मिथ से पूर्व अर्थशास्त्र विषय प्रचालित नहीं था।

प्रशिक्षुओं से सभ्यता के प्रारंभ से आधुनिक काल तक मानव के आर्थिक क्रियाकलापों की चर्चा कालानुक्रम के आधार पर की जानी चाहिए।

आर्थिक विश्लेषणों से विदित होता है कि अर्थशास्त्र व समाज का प्राचीन काल से ही घनिष्ठतम सम्बन्ध रहा है क्योंकि आखेट युग से वर्तमान काल तक मानव की क्रियाये आर्थिक अवश्य रही हैं, भले ही प्राचीन काल की मानव क्रियायें वर्तमान काल की तुलना में परिष्कृत न रही हों। मानव जीवन के चार पुरूषार्थों धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में 'अर्थ' आर्थिक तथ्यों पर विचार करने को बाध्य करता है। वहीं वेदों में भी अथर्ववेद की क्रियायें आर्थिक ही थी।

रोमन व यूनानी सामन्तवादी समाज में राजनीतिशास्त्र के अन्तर्गत आर्थिक क्रियाओं के अध्ययन की व्यवस्था रही है। जबकि समकालीन कौटिल्य का अर्थशास्त्र, अरस्तू व प्लेटो के आर्थिक विचार समयानुकूल रहे। आर्थिक विकास के अगले चरण में रोमन कैथोलिक चर्च व सामन्तशाही व्यवस्था चरमरा जाने से औपनिवेशिक शासन की स्थापना विशुद्ध आर्थिक दृष्टिकोण का समर्थन है। तत्पश्चात्

आर्थिक विचार के युग में हयूम एवं लाक के बाद एडम स्मिथ ने 1776 में अर्थशास्त्र को वैज्ञानिक रूप दिया।

परिभाषा

अर्थशास्त्र की परिभाषा के सम्बन्ध में अर्थशास्त्रियों के मध्य प्रारम्भ से ही गहरा मतभेद रहा है। कई आधारों व मानकों के आधार पर विद्वानों ने अर्थ शास्त्र को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है।

परिभाषाओं का वर्गीकरण

धनसंबंधी परिभाषाएं	कल्याण सम्बन्धी परिभाषाएं	दुर्लभता संबंधी परिभाषाएं	आवश्यकता संबंधी परिभाषाएं	विकास संबंधी परिभाषाएं
एडम स्मिथ वाकर जे0बी0से0	मार्शल पीगू, जेवन्स चैपमेन	राबिन्स (सीमित साधन) (व अनन्त आवश्यकताएं)	प्रो0 जे0के0 मेहता	सेम्युएलसन
धन	धन + मानव कल्याण		इच्छा रहित होना	विकास

प्राचीन अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र को धन का विज्ञान माना। अर्थ शास्त्र के जनक एडम स्मिथ ने भी अर्थशास्त्र को धन का विज्ञान कहकर पुकारा। अपनी 1776 में प्रकाशित पुस्तक में कहा कि ' ''अर्थशास्त्र राष्ट्रों के धन के स्वरूप तथा कारणों की खोज से सम्बन्धित है।'' इनके विचार के अनुयायी प्रो0 वाकर, जे0एस0मिल0, जे0बी0से एवं सीनियर भी हैं। अर्थशास्त्र की इस परिभाषा की आलोचना कई कारणों से की जाती है जिनमें धन को प्रधान स्थान, धन का संकुचित अर्थ, आर्थिक मानव की कल्पना, अर्थशास्त्र का सीमित क्षेत्र, जीवन के उच्चतर मूल्यों की उपेक्षा आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

प्रशिक्षुओं से धन की परिभाषा की आलोचना के कारणों पर चर्चा करें।

प्रो0 अल्फ्रेड मार्शल के नेतृत्व में नवक्लासिकल अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र की तीव्र आलोचनाओं से बचाव करने का प्रयास किया और सामाजिक विज्ञानों में अर्थशास्त्र को एक महत्वपूर्ण स्थान दिलाया। मार्शल ने धन पर से जोर हटाकर मनुष्य के आर्थिक कल्याण पर अधिक बल दिया और धन को साध्य न मानकर मानव कल्याण का साधन माना। इनके अनुसार धन मनुष्य की आवश्यकताओं को संतुष्ट करके भौतिक सुख प्राप्त करने का साधन मात्र है। अतः अर्थशास्त्र में मानव का स्थान धन की तुलना में सर्वोपरि है। मार्शल ने अपनी पुस्तक Principals of Economics में अर्थशास्त्र को परिभाषित करते हुए

बताया कि– अर्थशास्त्र जीवन के साधारण व्यवसाय में मानव जाति का अध्ययन हैं। यह व्यक्तिगत तथा सामाजिक क्रियाओं के उस भाग की जाँच करता है, जिसका भौतिक सुख के साधनों की प्राप्ति तथा उसके उपयोग से घनिष्ठ संबंध है। मार्शल के समर्थक पीगू, चैपमेन हैं।

मार्शल की परिभाषा की भी आलोचनायें की गई जिसके मुख्य कारण थे– अर्थशास्त्र केवल सामाजिक विज्ञान ही नहीं वरन् मानवीय विज्ञान भी है, जीवन के साधारण व्यवसाय का अस्पष्ट होना, अर्थशास्त्र का क्षेत्र संकुचित, अर्थशास्त्र का कल्याण से सम्बन्ध स्थापित करना अनुचित, मानवीय क्रियाओं का अवैज्ञानिक वर्गीकरण किया जाना।

प्रशिक्षुओं में एडम स्मिथ व मार्शल की परिभाषाओं में तुलनात्मक चर्चा कराना (समूह के आधार पर)

प्रो0 लिओनल राबिंस ने 1932 में अपनी पुस्तक An Essay on the Nature and significance of Econonic science में मार्शल की परिभाषा की आलोचना की और बताया कि मनुष्य अपने दुर्लभ/सीमित साधनों द्वारा सदैव अपनी अनन्त आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने का प्रयास करता है। **प्रो0 राबिंस के अनुसार–** अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जिसमें साध्यों तथा सीमित और वैकल्पिक प्रयोग वाले साधनों से सम्बन्धित मानव व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। प्रो0 राबिंस की उक्त परिभाषा की आलोचना के आधार निम्नलिखित तत्व बने–

- अर्थशास्त्र के क्षेत्र का अधिक विस्तार
- साधन व साध्य के माध्य अन्तर का स्पष्ट न होना।
- अर्थशास्त्र विज्ञान के साथ–साथ कला भी है।
- मानव व्यवहार सदैव विवेकपूर्ण नहीं
- सामाजिक पक्ष की उपेक्षा

अर्थ शास्त्र उद्देश्यों के बीच तटस्थ नहीं होता।

प्रशिक्षुओं से राबिंस के दृष्टिकोण पर चर्चा करे–

- असीमित आवश्यकताएं
- सीमित साधन
- साधनों के वैकल्पिक प्रयोग
- आवश्यकताओं की तीव्रतायें अन्तर

नोट– मार्शल व राबिंस की परिभाषाओं की तुलना करनातथा समानताएं व असमानताओं बिन्दुवार चर्चा कराना।

प्रो0 जे0के0 मेहता ने भारतीय संस्कृति के अनुरूप अर्थशास्त्र की परिभाषा दी। इनके विचार प्राचीन ऋषि–मुनियों और सनतों से प्रेरित हैं। इनके अनुसार हमारी संस्कृति का आदर्श ''सादा जीवन उच्च विचार में है।'' भारतीय मनीषियों ने भी मानव को अपनी आवश्यकताओं को कम करने की बात बताई।

प्रो0 मेहता के अनुसार– अर्थशास्त्र का सम्बन्ध आवश्यकताओं की सन्तुष्टि से नहीं, बल्कि इनको कम रखने और अन्तत बिल्कुल समाप्त कर देने से है, ताकि आवश्यकता विहीनता की अवस्था प्राप्त की जा सके। दूसरे शब्दों में अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो कि आवश्यकता विहीन अवस्था का लक्ष्य प्राप्त

करने के लिए एक साधन के रूप में मानवीय अवस्था का अध्ययन करता है। स्पष्ट है कि प्रो0 मेहता मानव के संयम की बात करते हैं जो कि भारतीय संस्कृति एवं धर्म में उच्च स्थान रखता है। पाश्चात्य देश इस विचार धारा के समर्थक नहीं हैं।

प्रो0 मेहता की उक्त परिभाषा की आलोचना की गई जिसके प्रमुख आधार बिन्दुवत् हैं–

- काल्पनिक दृष्टिकोण
- अव्यावहारिकता
- अर्थशास्त्र के महत्व में कमी
- सीमित साधनों में वृद्धि की उपेक्षा
- अर्थशास्त्र को केवल आदर्श विज्ञान मानना।

प्रशिक्षुओं से राबिंस व प्रो0 मेहता की परिभाषाओं की चर्चा तुलनात्मक विधि से करना।

उक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र इस बात का अध्ययन करता है कि व्यक्ति व समाज मुद्रा का प्रयोग करके अथवा बिना प्रयोग किए हुए किस प्रकार विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के लिए सीमित साधनों का प्रयोग करते हैं और इन वस्तुओं को किस प्रकार उपभोग के लिए वर्तमान और भविष्य के बीच समाज के विभिन्न लोगों तथा वर्गों के बीच वितरित करते हैं। यह परिभाषा सार्वभौमिक विचार धारा की है जो सभी प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं में वर्तमान तथा भविष्य में क्रियाशील होती है।

अमर्त्यसेन

प्रसिद्ध भारतीय मूल के अर्थशास्त्री अमर्त्यसेन ने कल्याणकारी अर्थशास्त्र (Welfere Economics) पर बहुत अधिक कार्य किया। प्रो0 सेन ने विभिन्न आर्थिक विषयों पर 20 से भी अधिक पुस्तकें लिखी हैं जिनमें कलेक्टिव च्वाइस एण्ड सोशल वेलफेयर, पावर्टी एण्ड फैमाइंस, ग्रोथ इकोनोमिक्स इंडिया इकोनोमिक एण्ड सोशल अपारच्युनिटी, द पोलिटिकल इकोनामी आफ हंगर, रिसोर्सेज, वैल्यूज एण्ड डेवपलमेन्ट प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

भारत, बांग्लादेश, सहारा, इथियोपिया क्षेत्र के अकाल के अध्ययन के बाद प्रो0 सेन ने निष्कर्ष दिया कि खाद्यान्न की कमी ही सैदव खाद्य संकट के लिए उत्तरदायी नहीं रही है। 1974 के बांग्लादेश के अकाल पर उन्होंने ने बताया कि राष्ट्रव्यापी बाढ़ के परिणाम स्वरूप देश में खाद्य पदार्थों की कीमतें बहुत बढ़ गई थीं तथा एक फसल खराब होने जाने से कृषि श्रमिकों के लिए रोजगार के अवसर सीमित हो गये थे। उनके पास क्रयशक्ति न होने के कारण ही इस वर्ग को भुखमरी का शिकार होना पड़ा था।

डॉ0 अमर्त्यसेन वैश्वीकरण के अंधानुकरण के समर्थक नहीं है। वैश्वीकरण को लाभदायक मानने के बावजूद इस सम्बन्ध में उनका मत यही है कि कि विकासशील राष्ट्रों को पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था सुनिश्चित करने के पश्चात् ही वैश्वीकरण की दिशा में कदम उठाने चाहिए। 'कल्याणकारी अर्थशास्त्र' पर उनके शोध के लिए वर्ष 1998 में अर्थशास्त्र में नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया।

प्रशिक्षुओं से उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण पर चर्चा करें।

मूल्यांकन

1. अर्थशास्त्र के जन्मदाता हैं–

(i) राबिंस (ii) एडम स्मिथ (iii) मार्शल (iv) जे0बी0से

2. ''इकोनामिक्स आफ वेलफेयर'' के लेखक हैं

(i) राबिंस (ii) मार्शल (iii) पीगू (iv) जे0के0मेहता

3. '' अर्थशास्त्र धन का विज्ञान है''। यह कथन है।

(i) मार्शल (ii) जे0के0 मेहता (iii) राबिंस (iv) एडम स्मिथ

4. अमर्त्यसेन को नोबेल पुरस्कार कब मिला ?

(i) 1997 (ii) 1998 (iii) 1999 (iv) 2002

5. अर्थशास्त्र किसकी रचना है–

(i) मेगस्थनीज (ii) अरस्तू (iii) कौटिल्स (iv) सिकंदर

6. अमर्त्यसेन को किस क्षेत्र में शोध के लिए नोबेल पुरस्कार मिला ?

7. जे0के मेहता की अर्थशास्त्र की परिभाषा लिखिए ।

8. मार्शल तथा राबिंस की अर्थशास्त्र को परिभाषित करने के दृष्टिकोण की तुलना कीजिए।

क्रियाकलाप/प्रोजेक्ट

1. वर्तमान समय की 5 आर्थिक क्रियाओं तथा अनार्थिक क्रियाओं की सूची बनाना।

2. अर्थशास्त्र में नोबेल पुरस्कार प्राप्त दस अर्थशास्त्रियों के नाम व उनके कार्यों का चार्ट पर प्रदर्शन करना।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. अर्थशास्त्र के सिद्धांत– गुप्त सूर्य प्रकाश

2. अर्थशास्त्र सिंह डा0 एम0पी0

3. अर्थशास्त्र के सिद्धांत– लाल प्रो0 एस0एन0

राष्ट्रीय आय

किसी देश की अर्थव्यवस्था को तीन क्षेत्रकों (Sectors) में विभाजित किया जाता है–

- प्राथमिक क्षेत्र
- द्वितीयक क्षेत्र
- तृतीयक क्षेत्र

प्राथमिक क्षेत्र के अन्तर्गत कृषि, वानिकी, लट्ठा, मत्स्य पालन, खनन, उत्खनन, मुर्गीपालन, पशु पालन जैसे उत्पादक कार्यों/क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है।

द्वितीयक क्षेत्र के अन्तर्गत उद्योग धन्धे व फर्मों को सम्मिलित किया जाता है। इस क्षेत्र में प्राथमिक क्षेत्र से प्राप्त उत्पादों का उपभोग कच्चा माल के रूप में किया जाता है। द्वितीयक क्षेत्र के क्रियाकलाप प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्राथमिक क्षेत्र पर निर्भर होते हैं।

तृतीयक क्षेत्र के अन्तर्गत परिवहन, बैंकिग, बीमा, सुरक्षा, संचार, प्रशासन, होटल, जलापूर्ति जैसी सेवाओं को सम्मिलित किया जाता है।

कोई भी अर्थव्यवस्था जैसे–जैसे विकास के शिखर की ओर बढ़ती है, प्राथमिक क्षेत्र की तुलना में तृतीयक क्षेत्र में वृद्धि की मात्रा व अर्थव्यवस्था में योगदान बढ़ता जाता है। अर्थव्यवस्था में प्राथमिक क्षेत्र व द्वितीयक क्षेत्र वस्तुओं का उत्पादन एवं तृतीयक क्षेत्र सेवा का उत्पादन (सृजन) करते हैं अर्थात्

- अर्थ व्यवस्था के क्षेत्रक
  - प्राथमिक
  - द्वितीयक
  - तृतीयक
- राष्ट्रीय आय
- उत्पादिक वस्तुओं के प्रकार
- राष्ट्रीय आय की अवधारणायें
- सकल राष्ट्रीय उत्पाद
- शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद
- शुद्ध घरेलू उत्पाद
- व्यक्तिगत आय
- व्यय योग्य आय
- प्रति व्यक्ति आय
- राष्ट्रीय आय और आर्थिक विकास
- आर्थिक संवृद्धि व आर्थि विकास

अर्थव्यवस्था का कुल उत्पादन– उत्पादित वस्तुएं + सृजित सेवाएं

किसी देश के उत्पादन साधनों द्वारा किसी वर्ष में उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं के मौद्रिक मूल्य को राष्ट्रीय आय (National Income) कहते हैं। इस प्रकार किसी अर्थव्यवस्था में एक वर्ष के दौरान वस्तुओं और सेवाओं का जो प्रवाह होता है, राष्ट्रीय आय कहलाती है।

प्रशिक्षुओं से अर्थव्यवस्था के तीनों क्षेत्रों में सम्मिलित आर्थिक क्रियाकलापों पर चर्चा करें।

उत्पादित वस्तुओं व सेवाओं पर चर्चा करें।

चर्चा करें कि वर्ष की गणना एक अप्रैल से 31 मार्च तक के बीच में की जाती है।

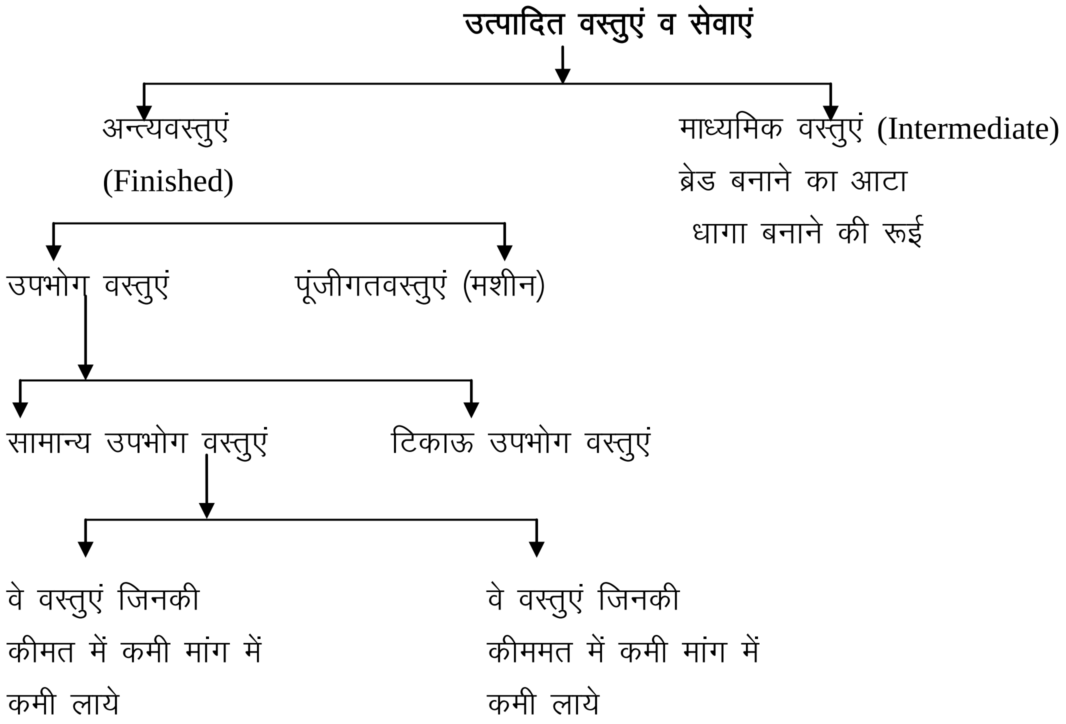

राष्ट्रीय आय की विभिन्न अवधारणायें

1. सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product-GNP)

किसी एक वर्ष की अवधि में प्राप्त वस्तुओं और सेवाअें के प्रवाह का चालू कीमतों पर मूल्य जो देश वासियों तथा उद्योग धन्धों को चाहे वे देश में हो या विदेश में हो उपभोग अथवा अपनी सम्पत्ति में परिवर्तन के लिए होता है, सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP) कहलाता है। यह अन्तिम उत्पादों का योग है।

2. सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product-GDP)

किसी देश में एक वर्ष की अवधि में जिन वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन किया जाता है उन सभी वस्तुओं के मौद्रिक मूल्य को सकल घरेलू उत्पाद (GDP) कहते हैं। उक्त मौद्रिक मूल्य में से विदेशियों द्वारा अर्जित आय घटा दी जाती है तथा देश के नागरिकों द्वारा विदेशों से प्राप्त आय जोड़ दिया जाता है।

सकल घरेलू उत्पाद (GDP) = GNP - (X - M)

जहाँ X = निर्यात

M = आयात

किसी देश की अर्थवयवस्था में यदि विदेशी व्यापार नहीं होता है तो कुल सकल घरेलू उत्पाद, सकल राष्ट्रीय उत्पाद के बराबर होगी।

इन्हें भी जाने–

खुल अर्थव्यवस्था– जिस देश की अर्थ व्यवस्था का विदेशों से व्यापार अनवरत रूप से जारी रहता है।

बन्द अर्थव्यवस्था– जिस देश की अर्थ व्यवस्था का अन्य देशों से किसी भी प्रकार का लेन–देन नहीं होता है।

3. शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (Net National Producct- NNP)

उत्पादन करते समय मशीनों में घिसावट या ह्रास होती है तथा कुछ मशीनों को पुरानी होने पर उनकी उत्पादन क्षमता कम हो जाती है, जिसके कारण उन मशीनों को प्रतिस्थापित करने से व्यय बढ़ जाता है।

किसी एक निश्चित वर्ष में उत्पादित समस्त वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन द्वारा प्राप्त मौद्रिक मूल्य में से घिसावट को घटाने के बाद जो शेष बचता है, उसे शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (NNP) कहा जाता है।

शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (NNP) = GNP - घिसावट व्यय

4. शुद्ध घरेलू उत्पाद (National Domestic Product- NDP)

किसी निश्चित वर्ष में देश में उत्पादित की गई वस्तुओं और सेवाओं के कुल मौद्रिक मूल्य में से यदि घिसावट व्यय को घटा दिया जाय तो शुद्ध घरेलू उत्पाद प्राप्त होती है अर्थात्

N D P = G D P – घिसावट व्यय

प्रशिक्षुओं को स्थानीय रूप से उदाहरणों का प्रयोग करके GDP, GNP की अवधारणा पर चर्चा करें।

5. व्यक्तिगत आय (Personal Income)

व्यक्तिगत आय व्यक्तियों द्वारा सभी स्रोतों से अर्जित आय का योग है। जब राष्ट्रीय आय में से अवितरित लाभ, निगम लाभ कर, नियोजकों द्वारा सामाजिक बीमा अंशदान, कर्मचारियों द्वारा सामाजिक बीमा अंशदान को घटा देते हैं और व्यक्तियों द्वारा प्राप्त सरकारी हस्तातरणों के भुगतान, सरकार द्वारा किया गया व्याज का भुगतान, उपभोक्ताओं द्वारा किया गया व्याज का भुगतान जोड़ दिये जाने पर जो आय प्राप्त होती है, व्यक्तिगत आय कहलाती है।

6. व्यय योग्य आय (Disposal Income)

इसे 'उपभोग्य व्यक्तिगत आय' भी कहते हैं। इस आय की गणना करने के लिए व्यक्तिगत आय (Personal Income) में से व्यक्तिगत प्रत्यक्ष करों (उदाहरण– आयकर) को घटा दिया जाता है। यह राशि व्यक्तिगत आय का वह भाग है जो अर्थव्यवस्था में सम्बद्ध व्यक्तियों को व्यय करने के लिए उपलब्ध होती है। व्यय योग्य आय के दो प्रयोग हो सकते है, एक उपभोग तथा दूसरा बचत।

व्यय योग्य आय = व्यक्तिगत आय – प्रत्यक्ष व्यक्तिगत आयकर

प्रशिक्षुओं से चर्चा करें कि–
व्यक्तिगत आय एवं व्यय योग्य आय को राष्ट्रीय आय की माप में शामिल नहीं किया जाता है।

प्रतिव्यक्ति आय (Per capita Income)

प्रति व्यक्ति आय वह औसत आय है, जो एक व्यक्ति एक वर्ष में अर्जित करता है। प्रायः चालू कीमतों पर इसे व्यक्त किया जाता है। यही कारण है कि कीमतें बढ़ने से यह आय अधिक व कीमतें घटने से यह आय कम हो जाती है। जनसंख्या बढ़ने से भी प्रति व्यक्ति आय घट जाती है। प्रति व्यक्ति आय ही दो देशों की व्यवस्था की सम्पन्नता की तुलना करने के लिए सर्वाधिक उपयोगी उपकरण है।

$$\text{प्रति व्यक्ति आय} = \frac{\text{राष्ट्रीय आय}}{\text{देश की कुल जनसंख्या}}$$

प्रशिक्षुओं के समक्ष चर्चा करें

- विश्व का सर्वाधिक प्रतिव्यक्ति आय वाला देश कौन है ?
- भारत में सर्वा प्रतिव्यक्ति आय तथा न्यूनतम प्रति व्यक्ति आय वाला राज्य कौन–कौन से है।

राष्ट्रीय आय और आर्थिक विकास

सामान्यतः राष्ट्रीय आय व प्रति व्यक्ति आय को देश की आर्थिक नीति का प्रतीक मानते हैं। यदि राष्ट्रीय आय जनसंख्या की तुलना में तेजी से बढ़ रही है तो प्रति व्यक्ति आय में भी तेजी से वृद्धि दर्ज की जाती है। इसका आशय होता है कि देश की आर्थिक क्षमता उत्पादन तथा उपभोग की सम्भावनाओं में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है किन्तु प्रति व्यक्ति आय सदैव देश के सुख एवं समृद्धि का सही दिग्दर्शन नहीं करती है।

आर्थिक संवृद्धि से अभिप्राय किसी समयावधि में किसी अर्थव्यवस्था में होने वाली वास्तविक आय की वृद्धि से हैं सामान्य रूप से यदि सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP), सकल घरेलू उत्पाद (GDP) तथा

प्राति व्यक्ति आय में वृद्धि हो रही हो तो हम कहते हैं कि आर्थिक संवृद्धि हो रही हैं किन्तु आर्थिक विकास की अवधारणा आर्थिक संवृद्धि की धारणा से अधिक व्यापक है। आर्थिक संवृद्धि उत्पादन की वृद्धि से संबंधित है, जबकि आर्थिक विकास सामाजिक , सांस्कृतिक आर्थिक गुणात्मक एवं परिणामात्मक सभी परिवर्तनों से सम्बन्धित है।

आर्थिक विकास शब्द का प्रयोग एक बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था के मात्रात्मक माप को व्यक्त करने के लिए ही नहीं किया जाता है बल्कि सामाजिक, आर्थिक एवं अन्य परिवर्तनों के लिए भी किया जाता है जो समृद्धि उत्पन्न करती है। इसके लिए उत्पादन की तकनीकि में, सामाजिक दृष्टिकोण में तथा संस्थागत ढांचे में परिवर्तन किये जाने की आवश्यकता होती है। आधारभूत रूप से इस शब्द का प्रयोग विकासशील देशों के लिए किया जाता है। यह एक बहुआयामी शब्द है जिसके अन्तर्गत आर्थिक तथा गैर–आर्थिक सूचकों को शामिल किया जाता है। यह होने वाले परिवर्तन के गुणात्मक (Qualitative) पक्ष को व्यक्त करता है अर्थात् उत्पादन की मात्रा और साथ ही साथ अन्य कल्याणकारी माप को भी व्यक्त करता है। दूसरे शब्दों में विकास के बारें में जानने के लिए तीन प्रश्न पूछने की आवश्यकता होती है।

1. निर्धनता का क्या हो रहा है ?

2. बेरोजगारी का क्या हो रहा है ?

3. असमानता का क्या हो रहा है ?

यदि तीनों ही उच्च स्तरों से नीचे आये हों, तो निश्चित ही यह अवधि संबंधित देश के लिए विकास की अवधि है। यदि इन तीन केन्द्रीय समस्याओं में से (1) और (2) पहले से ही खराब हो गये हों, विशेषकर यदि तीनों ही पहले से घटिया हो गये हो तो इसे विकास कहना अनुचित होगा, भले ही उस देश की आय (Income) दुगुनी क्यों न हो।

मूल्यांकन

1. मत्स्य पालन अर्थ व्यवस्था के किस क्षेत्र का अंग है ?

(i) द्वितीयक क्षेत्र (ii) प्राथमिक क्षेत्र (iii) इनमें से कोई नहीं (iv) तृतीयक क्षेत्र

2. अर्थव्यवस्था के उच्चतम शिखर की अवस्था में सेवा क्षेत्र का योगदान

(i) घटता है (ii) घट बढ़ होती है (iii) बढ़ता है। (iv)तेजी से घटता है।

3. प्रतिव्यक्ति आय किसे कहते हैं ?

4. बन्द अर्थव्यवस्था और खुली अर्थव्यवस्था किसे कहते हैं ?

5. आर्थिक संवृद्धि तथा आर्थिक विकास में क्या अन्तर है ?

क्रियाकलाप प्रोजेक्ट

1. विगत 10 वर्षों में भारत की राष्ट्रीय आय व प्रतिव्यक्ति आय की तालिका बनवाना।

2. आर्थिक संवृद्धि व आर्थिक विकास पर सामूहिक चर्चा।

सन्दर्भ साहित्य

1. भारतीय अर्थव्यवस्था–सर्वेक्षण विश्लेषण – लाल प्रो0 एल0एन0

2. अर्थशास्त्र – सिंह डॉ0 एम0पी0